यशोजित

राजेन्द्र सक्सेना



पचशील प्रकाशन, जयपुर

राजेन्द्र सक्सेना

ISBN 81-7056-065-9

प्रकाशक पचशील प्रकाशन
फिल्म कॉलोनी जयपुर-302003

सस्करण प्रथम 1990

मूल्य पचास रुपये

मुद्रक गोपाल आर्ट प्रिण्टर्स
फिल्म कॉलोनी जयपुर-302003

YASHOJIT (Novel)
By Rajendar Saxena Rs 50

अनेक गुण सन्निधि सुचरितैक लीला विधि
जय प्रततसे (शे) विधि प्रहत वैरिकर्गोपधि.
यशोजित कलानिधि सतत सिद्ध सत्स विधि
स क्षीय परमावधि जीयति वप्प वशाबुन्दधि
—कुम्भलगढ प्रशस्ति

भूमिका

विद्वान् लेखक एव साहित्यकार श्री राजेन्द्र सक्सेना न अपने उपन्यास के लिए जिस नायक—कुम्भा को चुना है उनकी उपलब्धियो मे भारतीय सस्कृति की स्पष्ट छाप दृष्टिगोचर होती है। इतना ही नही अपितु यशोजित ' के विषय वस्तु म अतीत के गौरव की गाथाएँ प्रतिबिम्बित होती हैं जो वतमान समाज को प्रभावित करने वाली प्रमुख प्रवृत्तियो से जुडी हुई है। पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ मे पन्द्रहवी शताब्दी की सामाजिक राजनीतिक एव सास्कृतिक धाराम्रो का सूक्ष्म विवेचन उपलब्ध होता है जो ग्राकषक एव भावी पीढी के लिए पथ प्रदशक भी है।

इसी प्रकार जहाँ श्री एकलिगजी के प्रासाद व अचना के वणन मे भक्ति व भावना का अविरल प्रवाह दिखाई देता है तो अपूर्वादेवी और भारमली के चरित्र मे एक सौन्दय और आध्यात्मिक मूल्य का पक्ष समाहित है। कुम्भा के व्यक्तित्व म कला नैपुण्य और शौय का ऐसा सामजस्य प्रस्तुत किया गया है कि वह पाठक को तन्मय और विमुग्ध बना देता है। चित्तौड दुग की परम्परागत यशकीर्ति के मूत्तरूप को प्रस्तुत कर और उसे सस्कृति की परिधि और परिभाषा म समाहित कर लेखक महोदय ने विषय को रोचक बनाने मे सफलता प्राप्त की है।

वैसे यशोजित के लिए श्री सक्सेना मौलिकता तथा ऐतिहासिक तथ्यो के सामीप्य का दावा तो नही करते परन्तु विषय वस्तु एव पात्रो क चयन प्रस्तुतीकरण एव घटना क्रम के विश्लेषण के सम्बन्ध मे अपने समृद्ध अनुभव तथा कल्पना के उपयोग के प्रति अपने गहन अनुराग का परिचय अवश्य दत है।

मैं आशा करता हूँ कि पाठक इसको पढ मेवाड क सास्कृतिक वभव की प्रतिमा को निहार कर साहित्य और दशन के प्रति अनुराग बढाएँगे।

गोपीनाथ शर्मा

आत्म-कथन

ईसा की पन्द्रहवीं शताब्दी के तृतीय दशक मे भारतीय इतिहास के क्षितिज पर महाराणा कुम्भा के रूप मे एक ऐसे अद्भुत व्यक्तित्व का उदय हुआ जो न केवल मेदपाट के साम्राज्य का अधिपति कुशल प्रशासक था साहित्य और कला का ममन पोषक प्रबुद्ध रचनाकार और सगीतकार था। अद्वितीय प्रतिभा के धनी महाराणा कुम्भा की उपलब्धियाँ असाधारण प्रतीत होती हैं। अपने उदयपुर के सुदीर्घ प्रवास मे मेवाड की सस्कृति और इतिहास से परिचित होने की प्रक्रिया मे जब मेरा ध्यान कुभा के व्यक्तित्व की ओर आकर्षित हुआ। मैं मुग्ध होता चला गया और अनेक सम्भावनाओ के नायक के रूप मे उसने मुझे प्रभावित किया। राष्ट्र प्रेम विजेता, शौर्य और वीरता के धनी कुभा के अपने शासन के प्रथम पच्चीस वर्ष युद्धो मे सघर्षशील रहते हुए व्यतीत हुए थे तथापि जिस प्रकार कला सृजन शिल्प और मूर्तिकला की प्रगति होती चली गई जिस प्रकार स्वय कुभा ने सस्कृत म मौलिक रचनाएँ और टीकाओ की रचना की उदारमना प्रजा निष्ठ शासक के रूप मे लोक-मानस मे जिस प्रकार अपनी छवि स्थापित की—वह उनकी अद्भुत कार्य-क्षमता आस्था का प्रमाण है। उनके अपने जीवन के शेष दस वर्ष विशेषत कुभलगढ मे बिताए वर्ष प्राय अन्तर्विरोधो के वर्ष रहे ऐसा अनुमान होता है।

भारतीय मनीषा के अन्तर्गत धर्म अर्थ काम और मोक्ष, जिन पुरुषार्थों की आवश्यकता पर बल दिया जाता रहा है मुझे लगा कुम्भा के व्यक्तित्व मे वह सर्वत्र विद्यमान है। फलत यशोजित के रूप मे इस उपन्यास की रचना करने मे उद्यत हुआ।

यशोजित का कथ्य ऐतिहासिक अवश्य है तथा उस काल म घटित घटनाओ का विवरण उसमे सयोजित है। कालबद्ध कृति होते हुए भी—वह किसी कालखण्ड विशेष तक सीमित नही है। इतिहास मे अकित अतीत की स्मृतियाँ ही नहीं भविष्य के स्वप्नो को अर्थवत्ता देना भी मुझे आवश्यक लगा। अतीत और वर्तमान मे क्या कोई सगति बैठाना सम्भव है ? जो व्यतीत हो चुका उसमे वर्तमान सन्दर्भों को जोडकर क्या प्रासगिक बनाया जा सकता है ? इतिहास की दृष्टि भविष्योन्मुखी होनी चाहिए अथवा यह केवल बीती घटनाओ का आक्युमेंटशन' मात्र है ? आदि प्रश्न यशोजित' की रचना करते समय मेरे सामने रहे हैं। मेरे विचार से इतिहास की सार्थकता उसकी निरन्तरता मे निहित है। इतिहास जहाँ

मौन होता दिखाई देता है कला वही से मुखर होती है। यही कला दृष्टि रचनाकार को समृद्ध करती चली जाती है। 'यशोजित' को लिखते समय मेरी दृष्टि यही रही है। अपने कथ्य को अधिक सघन और तीव्र बनाने के लिए मुझे भाव सवेदन की आवश्यकता थी। अत उसकी पूर्ति के लिए उपन्यास के कथा तत्व चरित्र और स्थितियो के अकन मे मैंने मुक्तता ली है। किन्तु इतिहास से अत सम्बन्ध को भी बनाए रखा है। तथापि यशोजित' एक औपन्यासिक सरचना है इतिहास नही है। वस्तुत ऐतिहासिक उपन्यास लिखन का मेरा प्रथम अनुभव है। मैंन कुभा के चरित्र मे आस्था और सौन्दय दोनो को जोडने की कोशिश की है। कथा विधा मे भारतीय इतिहास के एक श्रेष्ठतम व्यक्तित्व का पुन परिभाषित करने का विनम्र प्रयास भर किया है। इस अनुष्ठान मे मैंने कितनी सफलता अर्जित की है इसका निणय मेरे सुधि पाठक ही करेंग मैं नही।

उपन्यास के कथा सयोजन मे सहायताथ तथा उसकी भूमिका के लिए मैं इतिहास के सुप्रसिद्ध विद्वान् चिन्तक एव ममज्ञ गोपीनाथ शर्मा का हृयय से आभारी हूँ।

राजेन्द्र सक्सेना

एक

चित्तौड दुग के राज प्रासाद मे ब्रह्म मुहूत से ही गतिशीलता बढ गई थी। पूरा प्रासाद सनिको और अनुचरो से भर गया था। प्रासाद के कक्ष स्वच्छ कर सजा दिए गए थे। सूर्योदय की प्रथम किरण के साथ ही युवराज कु भा का राज्यारोहण सम्पन्न किया जाना था। राज्य ज्योतिषी ने यही मुहूत निश्चित किया था।

पिछली सध्या के राजगुरु तिल्हभट्ट शमशान से लौटकर स्तवन बोलते हुए अपने साधना कक्ष मे प्रवेश कर गय थे। सत्र भर मृत्युजय जप चलता रहा था। साधना कक्ष के बाहर प्रकोष्ठ मे दो शिष्य कुशासन पर आसीन शिवकवच का पाठ कर रुद्री आरम्भ कर चुके थे कि भोर का सकेत सूचक अरुण-शिखा का शब्द सुनाई दिया और प्रहरी ने घण्टे बजाकर प्रात की गजर बजाई।

राजगुरु तिल्हभट्ट साधना कक्ष से बाहर आ गए। उनकी खडाऊ की ध्वनि से प्रकोष्ठ की शांति भग हुई। एक शिष्य कुशासन से उठ खडा हुआ। प्रणाम कर आदेश की प्रतीक्षा मे सिर भुकाये सम्मुख आया। तभी प्रतिहारी ने सूचना दी— 'राजतिलक की तैयारिया सम्पन्न हा चुकी है गुरुदेव। महामात्य सेनाधिपति सरदार गण और सभासद आपके आगमन की प्रतीक्षा मे है।' 'और युवराज ?' राजगुरु ने प्रश्न किया।

राजप्रासाद के उद्यान म एकान्त मे बैठे थे। कदाचित् रात भर सोये नही हैं। काफी उद्विग्न है। साम्राज्य न बुला भेजा तब आए। स्नान आदि क्रियाओ से मुक्त होने गुरुदेव। मन अस्थिर लगता है स्वामी का।'

हूँ ।" कहकर राजगुरु तिल्हभट्ट कुछ क्षण मौन रह। फिर दोनो शिष्या को साथ लेकर राजभवन की ओर चल दिय। माग मे कुम्भा के काका सामन्त राघवदेव मिले। प्रणाम कर वे भी राजगुरु के साथ हो लिय।

राजगुरु के सभा कक्ष म प्रवश करत ही सभी उठ खडे हुए। सभा कक्ष के द्वार के ठीक सामने स्वण जडित राज सिंहासन था। उसके पाश्व मे राजतिलक क्रियाविधि की सम्पूण सामग्री-पात्रो मे सजाकर रखी गई थी। राजगुरु तिल्हभट्ट सब का अभिवादन स्वीकार कर अपन लिए नियत आसन पर बैठ गय। यह आसन उनके लिए चिर परिचित था। पन्द्रह वष पूव इसी आसन पर वे आसीन हुए थे और तब से युवराज मोकल का उन्होने राज्याभिषेक सम्पन्न कराया था। तब व

श्वेत केशी नही थे और युवराज मोकल भी बालक ही थे किन्तु अबोध नही। क्षण भर मे वह सारा व्यतीत रुकी आंखो के सम्मुख घूम गया। राज्य ज्योतिषी ने राज गुरु को मुक्त करते हुए निवेदन किया— मुहूर्त सन्निकट है गुरुदेव युवराज को पधारने का आदेश दें।

हाँ गुरुदेव अब समय नही है –महामात्य सहणपाल ने अनुमोदन किया।

राजगुरु तिल्हभट्ट के सकेत करते ही सभा कक्ष का पार्श्व द्वार खुला। युवराज कुम्भा उसमे से निकले। साथ के दो खडगधारी सनिक थे और उनके पीछे सेविकाएं। युवराज के राजसिंहासन पर आसीन होते ही सभा कक्ष मे शान्ति छा गई। एक दीर्घ मौन। मन्त्रोच्चार आरम्भ हुए। फिर शख ध्वनि। राजगुरु तिल्हभट्ट ने युवराज के ललाट पर अरुण तिलक अकित किया। फिर पुष्पमाला पहनाकर शीश पर राज-मुकुट रख दिया। फिर स्वस्तिवाचन किया।

भगवान एकलिंग जी की जय।

महाराजाधिराज राजसभा महाराणा कुम्भा की जय।'

वीर प्रसविनी मेदपाट भूमि की जय —सामूहिक जयघोष से सभा-कक्ष गूज उठा। साथ ही नगर मे युवराज कुम्भा के राज्यारोहण की घोषणा कर दी गई।

युवराज कुम्भा और अब महाराजाधिराज कुम्भा ने अपने चारो ओर दृष्टि डाली। सभा मे फिर एक बार मौन छा गया। उन्होने उठकर नमन किया। फिर उच्च गम्भीर स्वर मे अपना कथन आरम्भ किया—

आचार्य श्री काका सा महामात्य सेनाधिपति और साम तो सभासदो। मैं स्वय को मेदपाट की पवित्र भूमि की सेवा मे समर्पित करता हू। इसके सम्मान की रक्षा और सम्पूर्ण गौरव के पुनरुद्धार का वचन लेता हूँ। वचन लेता हू मेदपाट के शत्रुओ का मूलोच्छेद करने का। उसके युद्ध विस्तार को पुन प्राप्त करने का और—और बापू सा महाराणा मोकल के हत्यारो के विनाश का। मैं उनका उत्तरा धिकारी घोषित करता हूँ कि शत्रुओ का दमन मेरा प्रथम कर्त्तव्य होगा। मोकल के हत्यारो को दण्ड देकर ही मुझे शान्ति मिलेगी। इस सघर्ष मे भगवान एकलिंग जी मुझ पर कृपा करेंगे।

जय एकलिंग जी। महाराजाधिराज कुम्भा की जय हो। शत्रु का नाश हो

सभा-कक्ष जयघोष से पुन गूज उठा। महाराणा कुम्भा के इस किशोर वाक्य म ओज पुरुषत्व आत्म गौरव और आवेश भरे वचन सुनकर सभा कक्ष धन्य धन्य पुकार उठा। इस सघर्ष म हम आपके साथ होंगे अन्नदाता। एक एक कर सभा सदो ने उठकर आश्वासन दिया।

राज्याभिषेक समारोह समाप्त हुआ। सभा विसर्जित हुई। 'अब आप विश्राम करें। महामात्य सहणपाल न अपना शीश झुकाकर अनुरोध किया।'

मुझे विश्राम कहाँ महामात्य ? महाराणा मोकल की हत्या के बाद आक्राताओं के हौसले और भी बुल द हो सकते है। हमे शत्रु से सावधान रहना होगा। आप म त्रणा के लिए तुरन्त अमात्यो की सभा आमन्त्रित कीजिए और आप वीर श्रेष्ठ सेनाधिपति काकल सेना को सावधान करेंगे। दुग के दुगपाल विश्वस्त रखे जायें ताकि छल न हो सके। प्रश्न केवल महाराणा मोकल के हत्यारो को दण्ड देन का नही—प्रश्न है शत्रुओ से पूरी मेदपाट भूमि की रक्षा करन का। फिर इस सकट की घडी मे हमे अपनी सेना के मनोबल को भी बनाये रखना है। सैनिको ही क्या सारे मेदपाट की प्रजा का। प्रजा मे आक्रोश है उसकी शाति का उपाय यही है।

महाराणा कुम्भा के ललाट पर चितन की रेखायें और अधिक प्रगाढ हो गईं।

आप जैसा निणय लेंगे वही होगा अन्नदाता। सेनाधिपति ने नयन करते हुए कहा।

आपका सकल्प हम सबका सकल्प है। महामात्य ने कहा।

और तुम प्रतिहारी राजमाता को सूचित करो हम महत्त्वपूण वार्ता क लिए उनके कक्ष म आ रहे है।

गुरुदेव आप ।' वयोवृद्ध राजगुरु तिलहभट्ट की ओर देखते हुए सविनय कुम्भा ने कहा—सकट मे आपको मैं स्मरण करूँगा।

'इससे अधिक बडा सकट और कौन सा होगा महाराज ? मुझे तो सकट ही सकट दिखाई देता है। मैं सावधान करना चाहता हूँ दुशक सधियो और परम त्रो से। मात्र बाहर—शत्रु ही शत्रु नही हो तो। भीतर भी शत्रु होते है।' राजगुरु ने स्मरण कराया।

मैं जानता हूँ गुरुदेव। कुम्भा ने दीघ विश्वास छोडते हुए कहा— और भी जानन लगूगा।

तथापि मेरी चिन्ता स्वाभाविक है महाराज ? अन्यथा न ले। मेदपाट का भविष्य अब आप पर निभर है। आपके प्राणों की रक्षा हमारी प्रथम चिन्ता है।

मेरे प्राणो की रक्षा भगवान एकलिंग ही करेंगे। और हाँ श्री एकलिंग भगवान के दशनाथ हम एक-दो दिन मे ही जायेंगे। उनका आदश और आशीर्वाद प्राप्त करेंगे। चित्तौड की सुरक्षा का भार हमारी अनुपस्थिति मे आप पर होगा सेनाधिपति।"

सभा-कक्ष से सीधे महाराणा कुम्भा राजमाता सौभाग्यदेवी के कक्ष में पहुँचे। उन्होंने राजमाता को प्रतीक्षा में पाया। प्रणाम कर राजमाता के निकट ही बैठ गये।

मैं अकन उद्विग्न हूँ माता। मैंने बापू सा के हत्यारों को दण्ड देने का व्रत लिया है। उसे पूरा करना मेरा प्रथम अभीष्ट है। कहकर कुम्भा ने एक गहरी निःश्वास ली।

जानती हूँ। किन्तु डरती हूँ कहीं तुम्हारा अनिष्ट न हो जाए। महाराणा को खोकर अब अब तुम्हारी चिंता।'

'चिंता कैसी राजमाता? क्या मेरे बाहुबल पर विश्वास नहीं रहा।

विश्वास है तभी तो जीवित हूँ। यदि विश्वास नहीं होता तो बड़ी रानी के साथ साथ मैं भी स्वयं को उसी दिन अग्नि को समर्पित कर देती।'

'यही मेरा परितोष है माता। बापू साहब नहीं रहे किन्तु आप तो हैं। आपका वरद हस्त और आशीष मेरा मंगल ही करेगा।

फिर उद्विग्नता और विषय किसलिए। यह तुम्हें शोभा नहीं देता वत्स।

आप उपाय सुझायें। इसीलिए आया हूँ।'

एक उपाय है। अवश्य है। मातुल राव रणमल को तुरंत संदेश भेजा जाए। वे अवश्य आ जायेंगे और फिर उन्हें अपना ऋण चुकाने का अवसर मिलेगा।

ऋण? कसा ऋण?

उन्हें मण्डोर नरेश बनाने का मारवाड़ का सिंहासन दिलाने का। यह तुम्हारे बापू साहब दिवंगत महाराणा के कारण सम्भव हुआ था। उस उपकार को भूलेंगे नहीं रावत।

और दादी माँ?

उनकी समाप्ति है। और दूसरा उपाय है उन सभी सामंतों को विश्वास में लेना जो हमारे हितैषी रहे हैं। अपने परायों में अन्तर कर सकोगे?

कर सकूँगा माता। मैंने इसे निकट से देखने का प्रयत्न किया है। दुर्दिनों में अपनों और पराये की पहचान हो ही जाती है।

फिर निश्चित होकर जाओ वत्स। सफलता निश्चय ही तुम्हें मिलेगी।

राजमाता सौभाग्य देवी ने बरबस रोके हुए अश्रुओं को झर जाने दिया। महाराणा कुम्भा ने राजमाता की चरण रज ली और चल दिए। तत्काल महामात्य को बुलवाया। निश्चयानुसार दूत मंडोर भेज दिया गया। फिर मंत्रणा के लिए सामंतों की बैठक आयोजित की गई। सायंकाल तक अत्यधिक करवल रही।

रात्रि का प्रथम प्रहर बीतता गया किन्तु शैया पर लेट हुए जागत रहे महाराणा। नींद आने का नाम ही नही लेती थी। वे शैया से उठे। मकत कर पात्र मे अनुचर से जल मगवाया। फिर पीछे हाथ बाध शयन कक्ष मे टहलन लगे। कब अद्ध रात्रि व्यतीत हुई ? पता ही नही चला।

दो

महाराणा कुम्भा पूव महाराणा माकल का ज्येष्ठ पुत्र था। महाराणा माकल के पितामह महाराणा खेता के पासवानिए पुत्र चाचा और मेरा स्वय को जीवन भर अपमानित करते रहे। अपनी अकुलीनता के कारण मेदपाट राज्य मे वे महत्त्वहीन थे। अत उनकी भूमिका नगण्य थी। व महाराणा मोकल की हत्या कर स्वय सत्ता पा जाना चाहते थे। अत वे मोकल के विरुद्ध षडयन्त्र रचते रहे। महाराणा माकल के खवास मेलसी से मैत्री कर उन्होंन महाराणा को विष दना चाहा। किन्तु स्वामिभक्त मेलसी ने न केवल इस षडयन्त्र म सम्मिलित होने से इनकार कर दिया महाराणा को मावधान भी कर दिया। अन्ततोगत्वा उन्हें अपने अनुयायियो के साथ घात लगाकर आक्रमण करने का अवसर मिल ही गया जब महाराणा माकल अपनी हाडा रानी मेलसी एव कुम्भा के माथ गुजरात के सुलतान की सेना को परास्त करन जा रहे थे। इस अप्रत्याशित आक्रमण से वे हतप्रभ रह गय एव लडते लडत मेलसी और हाडा रानी सहित वीर गति को प्राप्त हुये। युवराज कुम्भा किसी तरह बच निकले। राज्यारोहण के तुरन्त बाद पिता के हत्यारे चाचा और मेरा को प्राण दण्ड देना कुम्भा की प्रथम आवश्यकता और कत्तव्य थे।

दूसरी भीषण समस्या थी मालवा और गुजरात के सुलतान की बढती हुई शक्ति को क्षीण करना। बून्दी के सुलतान की अधीनता सिरोही तथा बून्दी के राज्य स्वीकार कर चुके थे। डूगरपुर के महारावल महपा ने भी महाराणा मोकल की दुबलता का लाभ उठाकर मेदपाट का दक्षिणी भाग ब्यावर सहित अपन राज्य मे मिला लिया था। महाराणा कुम्भा ने जान लिया था यदि वह महाराणा हमीर खेता और लखा अपने पूवजो द्वारा अर्जित प्रतिष्ठा को पुन प्राप्त नही कर लेगा एक दिन मेदपाट राज्य ही रेत की ढेरी की भाति ढह जायेगा। यदि वह ऐसा कर सका भावी पीढियाँ उसे आदरपूर्वक स्मरण करेंगी। अन्यथा जीवन का अथ ही क्या है ?

सूर्योदय के दो घडी पूव ही इधर चित्तौड दुग का द्वार खुलने ही एक अश्वारोही दूत द्रुतगति से मडोर की दिशा मे रवाना हुआ। दूसरी ओर लगभग उसी

समय कुछ पदाति और अश्वारोही सैनिकों की टुकड़ी के साथ महाराणा कुम्भा ने भगवान एकलिंग के दर्शनार्थ कैलाशपुरी की ओर कूच किया। ऋषि हारीत की तपाभूमि जिनका शिष्यत्व गुह्य वंश में प्रमुख बप्पा रावल ने ग्रहण किया था और मेदपाट राज्य के अधिष्ठाता देवाधिदेव के रूप में श्री एकलिंग जी की प्रतिष्ठा की थी राज्याभिषेक के तुरंत पश्चात उनके दर्शन कर आशीर्वाद प्राप्त करना उस समय की परम्परा थी। उसी का निर्वाह करने जा रहे थे मेदपाट के नये महाराणा कुम्भा। साथ थे राजकवि कन्ह व्यास और आमात्य।

कुम्भा अपने दल सहित गगनचुम्बी उपत्यिकाओं की शृंखला से घिरे चीरवा की घाटी को पार कर बढ रहे थे कि अस्ताचलगामी सूर्य के प्रकाश में पश्चिमाभिमुख श्री एकलिंग के देवालय का शिखर और उस पर फहराती हुई ध्वजा दृष्टिगोचर होने लगे। महाराणा के संकेत से उनका दल रुक गया। वे रथ से उतर पड़े। आमात्य राजकवि और अश्वारोही भी पैदल हो लिए। नये महाराणा के आगमन की सूचना मिल चुकी थी। सायंकाल की आधी घड़ी पूर्व ही दीपकों की बत्तियां जला दी गई थी। नगाड़े और शहनाई का स्वर अब स्पष्ट सुनाई दे रहा था। स्त्री-पुरुषों की भीड़ बढ़ने लगी थी। सबको महाराणा के दर्शनों की लालसा थी और महाराणा को श्री एकलिंग भगवान के दर्शनों की। उनके परकोटे के द्वार के निकट पहुँचते ही श्री एकलिंग भगवान की जय तथा महाराणा कुम्भा की जय हो के जयघोषों से वातावरण गूंज उठा। महाराणा मोकल की नृशंस हत्या के तुरंत बाद ग्रामवासियों के लिए नये महाराणा का आगमन एक उत्सव ही था। सम्पूर्ण विषाद और म्लानता को हर्ष के इस सागर में डुबो देने का अवसर।

महाराणा को अपने निकट आता देखकर दोनों ओर खड़े स्त्री पुरुष आबाल वृद्ध अपना शीश झुकाकर प्रणाम कर रहे थे। स्वीकार की मुद्रा में महाराणा शनैः शनैः आगे बढ़ रहे थे। नगाड़े शहनाई और उस तुमुल जयघोष के मार्ग छोड़ो आगे बढ़ो सैनिकों का आदेश जैसे व्यर्थ हो रहा था। आमात्य स्वयं महाराणा के लिए मार्ग सुगम कर रहे थे। आनंदातिरेक से जयघोष करते करते कण्ठ अवरुद्ध होता जा रहा था।

कैलाशपुरी के मुख्य द्वार में प्रवेश के पूर्व ही देवालय के महाधीश कुशिक सिद्ध सोम प्रभु ने आगे बढ़कर स्वागत किया। स्वागत अभिवादन और महाराणा का नमन एक साथ घटित हुए।

इस सन्ध्या को आपने यहां पधारकर स्मरणीय बना दिया है महाराणा। आपका हार्दिक स्वागत है।

मेरा परम सौभाग्य देवाधिदेव श्री एकलिंग भगवान के पूर्व ही आपके दर्शन हुए। महाराणा का उत्तर था। कुशिक सिद्ध सोम प्रभु तनिक मुस्कराए।

महाराणा के मुख पर भी स्मित रेखाएं उदय हुइ। दोनो की क्षण भर को दृष्टिया मिली और खिल उठा मैत्री का एक अज्ञात कमल।

आपक पिता श्री महाराणा माकल के दु खद निधन पर हम दु खी हैं महाराज। उस दु स्वप्न को भूल जाना ही श्रेयस्कर होगा। उच्च गम्भीर स्वर म सोम प्रभु न कहा।

'आपके भीतर का विषाद पराजित हो। आप अधिक यशस्वी हो और प्रजाजन आपके शासन मे सुख और समृद्धि प्राप्त करे।'

धन्यवाद सिद्ध श्री। मै कृतकृत्य हुआ। इसी बीच जय भगवान लकुलीश जय एकलिंग भगवान के जयघोष के साथ महाराणा न सिद्ध सोम प्रभु के साथ मन्दिर मे प्रवेश किया। महाराणा प्रणाम करन वालो को प्रतिनयन एव सोम प्रभु नम शिवाय का जाप करते हुए गभ मडप की ओर अग्रसर हुए। तत्परता से सम्मुख किय गये थाल से प्रणाम कर महाराणा न विल्वपत्र और पुष्पाजलि अर्पित कर देव पूजन सम्पन्न किया। नगाडे की तुमुल ध्वनि और घण्टो के निनाद के साथ आरती आरम्भ हुई। समवेत स्वर म अचना के छन्द गभ मडप मे गूंज उठे। आरती समाप्त हात ही पुन जयघोष हुआ। क्षण भर के लिए सारा वातावरण शिवमय हो उठा। सवप्रथम महाराणा तत्पश्चात अन्यान्या ने आरती ली—महाराणा ने थाल मे एक स्वण मुद्रा सहित इक्यावन रुपये भेट स्वरूप चढाए। भीड छटने लगी।

महाभिषक सम्पन्न होते ही महाराणा कुम्भा बाहर आए। अवसर पाकर सिद्ध सोमप्रभु ने कहा— मन्दिर का जीर्णोद्धार तो हुआ। परकोटा भी निर्माण कर दिया गया। किन्तु गभ मडप के आधार स्तम्भ और धरणियो का पुन निर्माण का काय अभी शेष है।

मुझे इसका स्मरण रहेगा सिद्ध श्री – महाराणा न सविनय कहा। 'फिर भगवान एकलिंग का यह देवालय पूजन के पुनीत स्थल के साथ साथ शिक्षा और मेदपाट की सस्कृति का केन्द्र बने नय शास्त्र और साहित्य की रचनायें विद्वत् जनो के द्वारा—यह भी मेरा अभीष्ट होगा।

यह उचित है महाराज। कहकर सिद्ध सोम प्रभु ने महाराणा के विचार का समथन किया।

अच्छा सिद्ध श्री। भगवान एकलिंग के साथ साथ आपके दशन पाकर मैं कृताथ हुआ। आभार व्यक्त कर महाराणा उठ खडे हुए। सकेत समझकर आमात्य ने दल के लौटने का प्रबन्ध तत्काल आरम्भ किया। राजकवि कन्ह व्यास इस बीच अन्य देव मन्दिरो की प्रदक्षिणा एव दशन कर लौट आये थे। सिद्ध सोम प्रभु का

सकेत पाकर एक थाल म पुष्प और प्रसाद सामग्री लाई गई। अपने हाथो स स्वय उ होने महाराणा आमात्य और राजकवि को वह भेंट स्वरूप प्रदान की। महाराणा क बाहर आते ही जयघोष पुन उठा।

यदि श्री एकलिग कृपाव त हुए मैं फिर उपस्थित हाऊँगा।'

अवश्य श्री एकलिग ऐसा ही करेंग।' मृदुहास्य के साथ सिद्ध सोम प्रभु ने आश्वस्त किया।

लौटते समय महाराणा कुम्भा का हृदय नवीन स्फूर्ति एव उत्साह से परिपूर्ण हो रहा था। उनकी दृष्टि के स मुख कल्पना म भावी के अनेक चित्र बनन बिगडन लगे थे। वे स्वय सस्कृति साहित्य और कला के ज्ञाता थे। वह सस्कार और प्रबल होता जा रहा था। कि तु साथ साथ प्रशासन सम्ब धी समस्याओ और उनके निदान की चिता से मन त्रस्त होता जा रहा था। महाराणा ने कल्पना मे ही श्री एकलिग की श्याम मयी चतुमु खी मूर्ति का ध्यान कर नमन किया। फिर ओम् नम शिवाय के नि शब्द जल मे डूब गय। केवल ओंठ हिलते रहे। सतत जप चलता रहा।

विश्राम स्थल पहुँचत ही महाराणा का दल कुछ समय को रुका।

आप थके दिखाई दे रहे हैं महाराज ? आमात्य ने पूछ लिया।

नही तो।' कहते हुए महाराणा रथ से नीचे उतरे। फिर आग पैर बढाकर आमात्य के साथ हो लिए।

फिर कोई विशेष चि ता ? आमात्य ने पुन प्रश्न किया।

तुम्ह कोई चि ता नही है आमात्य ? फिर चि ता से रहित कौन प्राणी मिलेगा ? महाराणा ने प्रतिप्रश्न किया।

आपका कथन सत्य है अन्नदाता। चि ता मनुष्य मात्र के लिए अनिवाय है। उसकी विवशता भी यही है। चि ता से मुक्ति सम्भव ही नही है। जितना बडा उत्तरदायित्व उतना विशाल चि ताओ का उसका अपना जगत।

तुमने सत्य ही कहा आमात्य—कि तु मेरी चि ता

यदि पात्र समझें मुझे बतायें महाराज ?

तो सुनो आमात्य मेरी चि ता मेदपाट के भविष्य की चिन्ता है। उसके अस्तित्व की चि ता है। हम सबका अस्तित्व भी तो मेदपाट के अस्तित्व पर निर्भर हैं। यहाँ की मिट्टी म ज म लेकर यहाँ की जलवायु और भौतिक उपकरणो से हम पले बडे हुए— उसका ऋण कैसे चुकाया जा सकता है ? और

और क्या महाराज ?

और सोचता हूँ आमात्य इन परिस्थितियो म जिनमे मैं श्वास ले रहा हूँ— जि हें मैं जी रहा हूँ यदि मेरे पूवज महाराणा खेता पितामह लाखा अथवा पिता श्री क्या करत ? मैं उनके समकक्ष ठहरूँ यही मेरी चि ता है—मेरी कामना।'

ग्राप शास्त्रो मे तो निपुण हैं ही शौय ग्रौर वीरता मे भी ग्रद्वितीय हैं। ग्राप तरुण हैं महाराज। भविष्य ग्रापकी प्रतीक्षा म है। युग के साथ नही किन्तु नये युग के निर्माण की सामथ्य ग्रापमे है। ग्रापके नतृत्व मे पूजा की ग्रास्था है।

वही प्रजा मेरी शक्ति होगी ग्रामात्य! फिर हमे स्वय पर पूरा विश्वास ह। किन्तु सामन्त सरदारो का सहयोग?

वह ग्रापको ग्रवश्य मिलेगा ग्रन्नदाता! वे सब हमारे पक्ष मे हैं। फिर काका राघवदव भी ग्रापके पक्षधर हैं।

जो नही है वे ?'

जो पक्ष मे नही हैं उनसे निपटना होगा।

हा उनसे निपटना ही होगा। कहते हुए महाराणा ने ग्रामात्य पर एक दष्टि डाली। ग्रामात्य की दष्टि से दष्टि मिलते ही महाराणा की ग्राँखो मे एक चमक सी ग्राई। इसके साथ ही पुन यात्रा ग्रारम्भ हुई।

तीन

प्रात का प्रथम मुहूत। ग्रश्वारोही दूत रातभर चलता रहा था। ग्रधेरे म ही प्रात कालीन क्रियाएँ समाप्त कर मडोर के राजमहल के निकट वाटिका म विश्राम करने हेतु घने ग्राम्रवृक्ष के नीचे ग्रश्व से उतर पडा। फिर प्रहरी से तुरन्त मडोर नरेश से भेंट करने की इच्छा व्यक्त की। तत्काल ही महल मे सूचना पहुँचा दी गई।

मडोर नरेश राठौड रणमल ग्रपन महामन्त्री के साथ गहन विचार-विमश मे थे। किन्तु सूचना पाते ही दूत को उपस्थित करने का ग्रादेश दिया। महाराणा मोकल की हत्या ग्रौर मेदपाट पर ग्राए सकट से वे ग्राहत हुए। ग्रभी तक वे महाराणा मोकल के उस उपकार को भूले नही थे जिसकी सहायता से उन्होने मडोर की राजसत्ता प्राप्त की थी। तब ग्रौर ग्रब छै वष बीत चुके थे। एक दीघ ग्रन्तराल। एक के बाद एक बीते हुए समय की घटनाएँ ग्राखो के सामने सजीव हो उठी थी।

दूत का सदेश सुनकर ग्रान्तरिक पीडा से मुख विकृत हो गया। कुछ क्षण मौन रहे—फिर सिंहासन से उठते हुए कहा— हम ग्रविलम्ब चित्तौड पहुँचेंगे। वत्स कुम्भा ग्रपने महाराणा से कहना चिन्ता न करें।

तो मैं निश्चित हुग्रा। कहकर दूत ने पुन कोशिश की।

हमारे चित्तौड़ जाने की तुरन्त व्यवस्था की जाए महामन्त्री 500 अश्वारोही सैनिक हमारे साथ कूच करेंगे सेनाधिपति।'

जो आज्ञा अन्नदाता। सेनाधिपति ने नमन किया और कक्ष से तुरन्त बाहर हो गया। राव रणमल तुरन्त सभाकक्ष से अपने महल की ओर चल दिए। सभा समाप्त हो गई।

हम तुरन्त ही चल देना है महारानी। राव ने महारानी से कहा।

कहाँ? पूछा महारानी ने।

चित्तौड़। महाराणा मोकल की हत्या हो गई है कुम्भा नए महाराणा हैं—मेदपाट पर संकट है। हमें बुलाया है महाराणा ने।'

आपको अविलम्ब पहुँचना चाहिए स्वामी। फिर यह केवल शिष्टाचार अथवा सम्बन्धों के निर्वाह की बात ही नहीं है। इसका राजनीतिक और सामरिक महत्त्व भी है। मंडोर के शत्रु भी कम नहीं है। मेदपाट की इस समय आपकी सहायता से मंडोर और मेदपाट में मैत्री का नया अध्याय जुड़ेगा रावजी।

मैं समझता हूँ। फिर राजदादी बहन हंसा अभी जीवित है। उनसे कदाचित अंतिम भेंट ही हो। उनका पौत्र कुम्भा भी अब किशोर हो गया होगा। कितना प्रतिभाशाली और वीर है—कितनी कथाएँ मैंने सुनी है।

अब देख भी लेना—

'देखना क्या? मेदपाट की रक्षा और महाराणा की सेवा मेरा पुनीत कर्त्तव्य होगा। और राठौड़

और क्या स्वामी?

'और राठौड़ों का मेदपाट के राजकाज में महत्त्व मिलेगा। वे सबसे ऊपर होंगे। अधिक प्रभावशाली बनेंगे।'

राव रणमल की बात सुनकर महारानी साश्चर्य अपने स्वामी की ओर देख रही थी।

तुम अभी नहीं समझ पाओगी —मंद हास्य से राव ने कहा।

इस समय तो आप वही करिए स्वामी जो सर्वाधिक उचित है।

वही करूँगा।' राव रणमल ने आश्वस्त किया। कुम्भा की रक्षा करना मेदपाट की रक्षा करना और हत्यारों को उनके किए का उचित दण्ड।

'आपके हाथों हत्यारों का अवश्य नाश होगा। विश्वास है मुझे।

विश्वास मुझे भी है। कहकर राव अंतःपुर से निकल गए। चित्तौड़ की

यात्रा प्रारम्भ हुई। प्रारम्भ हुआ राव रणमल की महत्वाकांक्षाओं का एक नया स्वप्न। राव रणमल को मेदपाट की भूमि मोहती है।

अपने पुत्र जोधा को साथ लेना वे न भूले थे।

राव रणमल के चित्तौड पहुँचने का समाचार पाकर महाराणा कुम्भा और सामत राघवदेव निश्चित हुए। दुग के अतिम द्वार को पारकर राव रणमल का दल प्रवेश कर चुका था। आधी घडी म ही राव रणमल के स्वागत की व्यवस्था करदी गई। महाराणा कुम्भा और मामत राघवदेव स्वय स्वागत कक्ष म उपस्थित हुए। औपचारिकताएँ पूरी हुइ।

इस सकट की घडी मे आप मेरा सदेश पाकर आए मैं कृतकृत्य हुआ कुम्भा ने कहा।

मेरा परम सौभाग्य होगा यदि मेवाड की सेवा कर सका —राव रणमल न कहा।

सेवा के अवसर ही अवसर हैं रावजी।" सामत राघवदेव बोले।

जानता हूँ। समझता भी हूँ। राव न सामत राघवदेव की ओर एक वेधक दृष्टि भी डाली। राव का रूखा सा कथन सामत राघवदेव को कही आशकित कर गया।

आपकी समझ पर हम विश्वास है रावजी। फिर आप हमारे पूज्य हैं काका सा की ही तरह। हम प्रत्येक काय म आपका परामश चाहेगे। क्यो काका सा? कुम्भा न वातावरण को सरल बनात हुए कहा।

निश्चय ही। सामत राघवदेव ने स्वीकृति दी।

अब आप विश्राम कीजिए। इस लम्बे प्रवास से थक गए होगे। कुम्भा अपनी बात पूरी भी नही कर पाए थे कि प्रतिहारी न प्रवेश किया और समाचार देने की आज्ञा चाही।

क्या समाचार है?' कुम्भा न पूछा।

गुप्तचर सन्देश लाया है गुजरात का सुल्तान अहमदशाह अपने सैन्य दल के साथ आ पहुँचा है महाराज। मध्यरात्रि तक दुग पर आक्रमण की सम्भावना है। प्रतिहारी न कहा।

हम तुरन्त सक्रिय होना होगा। प्रथम आक्रमण हम करेंगे। सेनाधिकारी को तुरन्त प्रस्तुत करो। कुम्भा के स्वर मे आक्रोश व्यक्त हो उठा था।

'जो आज्ञा। कहकर प्रतिहारी तुरन्त लौट गया। सिंहासन से महाराणा कुम्भा उठ खडे हुए। मुखमण्डल अधिक रक्तिम हो उठा। अप्रत्याशित रूप से बाया हाथ कमर मे बधे खडग की मूठ का स्पश करने लगा।

तो अवसर आ ही पहुँचा शत्रु के स्वागत की तयारी का। कुम्भा ने सस्मित कहा। ऐसा स्वागत कि गुजर न के सुलतान का मेदपाट विषय का स्वप्न सदा सदा के लिए चूर-चूर हो जाए।

इस विपदा की घड़ी मे स्वय मैं और मेरे राठौड सैनिक सुलतान पर आक्रमण के लिए तत्पर है महाराणा —राव रणमल अपने आसन से उठ खडे हुए।

सामत राघवदेव बोले— 'सिसोदिया और राठौडो का यह मेल इस आक्रमण को विफल करके ही दम लेगा।

सेनाधिपति उपस्थित है महाराज। प्रतिहारी ने सूचना दी।

प्रणाम करता हूँ महाराज।' यह स्वर सेनाधिपति कवध का था।

सेनाधिपति कवध! गुजरात का सुलतान अपनी सेना के साथ सन्निकट है। उसके आक्रमण के पूव आगे बढकर हमे प्रथम आक्रमण करना होगा। सेना को आप सतर्क करे। आक्रमण प्रात के पूव ही होगा। कुम्भा ने कहा।

जी अन्नदाता। ऐसा ही होगा।' कवध ने उत्तर दिया।

और सुनो हमारी सेना के साथ रावजी और उनके राठौड वीर भी होग। हमारी शक्ति दुगुनी हो गई है।

अवश्य—अवश्य।" राव ने कहा।

तो शीघ्रता करो कवध। प्रथम सेना दल के साथ हम स्वय होगे।

तत्काल ही सेनाध्यक्ष कवध ने सेनानायकों को बुलाकर गुप्त मत्रणा की। राव रणमल के राठौड सैनिक साथ हो लिए। चित्तौड दुग से उतरते अश्वारोही सैनिको के घोडो के टापो की आवाजें निस्तब्धता को भग कर रही थी। उनकी अगुवाई एक पुष्ट अश्व पर सवार कुम्भा स्वय कर रहे थे। साथ थे राव रणमल और कुछ सामन्त। धीरे धीरे आवाज अरावली की घाटी म फलती जा रही थी। दूसरी ओर गुजरात के सुलतान अहमदशाह की सेना का हल्का कोलाहल अब निकट सुनाई देने लगा था। राज्यारोहण के तुरत बाद महाराणा कुम्भा के लिए किसी बाहरी शत्रु के आक्रमण के प्रतिकार करने का यह प्रथम अवसर था। कुम्भा जानते थे महाराणा मोकल की हत्या से उत्पन्न परिस्थिति का लाभ शत्रु कभी भी ले सकते हैं। मालवा और गुजरात के सुलतान ताक लगाए ही बठे थ। किन्तु इतनी शीघ्र गुजरात का सुलतान आक्रमण कर बठेगा इसकी कल्पना न थी। अपने शासन के आरम्भ मे ही आया यह अप्रत्याशित अवसर कुम्भा को अपने रणकौशल चातुय और शौय को प्रमाणित करने के लिए एक सुयोग जान पडा। यदि वे शत्रु को परास्त कर सके तो न केवल महाराणा मोकल की हत्या से उत्पन्न विषाद और उससे पूव हुई मेवाड की

क्षति के कारण उत्पन्न प्रजा की निराशा दूर होगी, उनकी और स्वयं उनकी अपनी सेना का मनोबल बढ़ेगा।

जैसे ही गुजरात के सुलतान अहमदशाह की अगुवाई म गुजरात की सेना मेवाड की सेना के आमने सामने पहुँची राठौड और सिसोदिया वीर सनिक विद्युत गति से भीतर घुस गये। हर हर महादव जय एकलिग जय महाराणा कुम्भा के जयघोष के साथ भयानक मारकाट आरम्भ हो गई। इस अप्रत्याशित प्रति आक्रमण स गुजरात के सुलतान की सेना म खलबली मच गई एव उनके पैर उखड गए। जिसे जहाँ अवसर और स्थान मिला घायल और मृतको का छोडकर भाग खडा हुआ। शत्रु क आधे से अधिक सैनिक अरावली के घाटी म खेत रहे जि ह छोडकर स्वय सुलतान अहमदशाह को पलायनकर अपने प्राणो की रक्षा करनी पडी। शत्रु खदेड दिया गया।

विजेता का दर्प लिए सिसोदिया और राठौड वीर सेनाध्यक्ष के साथ दुग म लौट आए—आग आगे कुम्भा और राव रणमल अश्वो पर आरूढ थे। विजयोल्लास का जयघोष गूँज रहा था। रनवास और अ त पुर म ही नही घरा म विजय तिलक और आरती के थाल सजा दिय गये थ। सैनिक अपन-अपन स्थानो पर पहुँचने को आतुर थे और गृहणिया उनको देखने के लिए परम उत्सुक। कुम्भा क मुख पर उल्लास था और मन म राव रणमल के प्रति कृतज्ञता। उनके साथ शीघ्रता से आयोजित साम तो की सभा म वे दोनो सम्मिलित हुए। जयघोष से सभागार गूँज उठा। उत्साह के अतिरेक से विभोर और उन्मत्त कण्ठों स निकला जय जयकार वायुमण्डल म गूँजन लगा।

रावजी आप परमवीर हैं और आपके सनिक भी। मै दुग की रक्षा का भार आप पर सौपता हूँ। सेनाधिपति कबध के परामश से आप अपने विश्वस्त सैनिको को द्वारपाल और दुगपाल के पदो पर नियुक्त कीजिए। कुम्भा ने सुझाव दिया।

साम त राघवदेव न यह सुझाव सुना। महामात्य और सेनाधिपति न भी। प्रस्तुत परिस्थिति कठिन लगी। कौन किसके अधीन रहेगा ? राव रणमल उन रक्षको के नायक होगे अथवा स्वय सेनाध्यक्ष कबध ? कि तु कुम्भा की उदारता इस विवाद को नही जानती। साम त राघवदेव महामात्य सहणपाल और सनाध्यक्ष कबध मौन बैठे रहे।

यह तो आरम्भ है काका सा अपनी मातृ-भूमि सस्कृति और समाज की रक्षा के लिए न जाने कितने युद्ध और लडने पडेंगे हमे। यदि हम एक रह तो हमारी विजय निश्चित है अ यथा पराजय दखनी पड सकती है। जिसे अपने प्राणो का मूल्य चुका कर भी हम वरण नही करेगे। महाराणा कुम्भा बोले।

एकता का आह्वान एक युग भक्त है उज्ज्वल भविष्य का भक्त —सामंत राघवदेव ने कहा।

किंतु प्रथम कर्त्तव्य है स्वर्गीय महाराणा मोकल के हत्यारों को समुचित दण्ड देना आप आदेश दें —राव रणमल ने प्रस्तावित किया।

अवश्य अवश्य एक साथ अनेक कण्ठ स्वर सुनाई दिये। जय एकलिंग के साथ सभा समाप्त हो गई।

प्रातःकाल का समय। महाराणा कुम्भा रात्रि भर सो नहीं पाये थे। पूजा अर्चन कर बाहर आये।

कुम्भा का छोटा सा राजप्रासाद—दो खंडों वाला। भवन के एक शांत स्वच्छ एकान्त में छोटा सा देवालय। विस्तृत प्रांगण से जुड़ा हुआ। फिर मेहराबदार दालान। कक्षों को मार्ग देता हुआ। भित्तियों पर अंकित कमल युद्ध और आखेट के दृश्य वीणा बजाती सुंदरियां, वन व्याघ्र नृत्य रत मयूर और मयूरी वन कांतर में विचरते बानरों के यूथ आदि सुंदर चित्र। मेहराबों में लटकते हुए रेशमी पर्दों से झांकती व आकृतियां। दूर बाहर से विरदावली का गान करता हुआ समवेत स्वर।

महाराणा रत्न जटित काष्ठपीठ पर आ बिराजे। महारानी अपूर्वाग्वी सतर्क हुईं। अपार सौंदर्य की स्वामिनी अपूर्वादेवी। मितभाषिणी किंतु गर्वीली। विशालाक्षी उन्नत ललाट सुडाल ग्रीवा। कपोलों का स्पर्श करते हुए कानों में कुण्डल। केशों के मध्य में चमकता स्वर्ण बोर। बाहुओं में भुजबंद और कुहनियों तक रक्तवर्णीय लादय और हस्तदन्त का चूड़ा। दिप दिप दमकती सुहाग बिंदी—कस्तूरी अनुलेप से घिरी हुई।

पूजन हो गयी स्वामी? महारानी ने प्रश्न किया।
हो गयी। किन्तु मन अशान्त है।
कदाचित रात भर सोये नहीं। महाराज।
यही समझो।
इस अनिद्रा का कारण?
एक हो तो बताऊँ।
फिर भी अपने स्वास्थ्य की चिन्ता तो रखनी ही होगी स्वामी।

'मेरा अपना स्वास्थ्य और उसकी चिन्ता। कैसा स्वास्थ्य? फिर मैं तो बिल्कुल स्वस्थ हूँ। और चिन्ता? वह तो कदाचित् अब मेरी चिर भगिनी है।

तुम अपनी कहो?

आपसे पृथक मेरा अपना क्या है? फिर आप अकेले ही चिन्ताग्रस्त नहीं हैं महाराज। सारा राजकुल सामन्त आमात्य सेनाधिपति और स्वयं राजगुरु इन

सबके अतिरिक्त सम्पूर्ण प्रजा भी तो आज चिंतित है। इस चिन्ता से कोई बचा है क्या ? आपके नेतृत्व में विश्वास और आस्था का यही प्रतीक है स्वामी।

प्रश्न केवल आस्था और विश्वास का ही नही है महारानी। प्रश्न है अपनी प्रतिष्ठा पूरे राष्ट्र की प्रतिष्ठा की रक्षा का। मेवाड़ की ख्याति को पुन अर्जित करने का। अपनी खोयी हुई सीमाओ का फिर से प्राप्त करने का। "

महारानी अपूर्वादेवी निकटस्थ चौकी पर बैठ गई। फिर दृढ स्वर मे बोली– भगवान एकलिंग अवश्य कृपा करेंगे। आप जो कुछ चाहते हैं वही होगा स्वामी।

तुम्हे भगवान एकलिंग की कृपा म इतना विश्वास है रानी।

विश्वास भगवान एकलिंग की कृपा म ही नही आपके पौरुष और बल मे भी है। फिर मेवाड के वीर किसी से कम बलशाली नही हैं। उन्हे आपका नेतृत्व मिला है तो क्या असम्भव है ?'

उस चिन्ता मे तुम्हे मेरी आत्म ग्लानि नही दिखाई देती रानी ? मैं स्वय उपस्थित होते हुए पूज्य बापू सा और बडी माता श्री की शत्रुओ से रक्षा न कर सका। उस युद्ध मे लगे मेरे घाव चाहे भर गए हो किन्तु मन मे लगा घाव अब भी हरा है। यह घाव कदाचित् मेरे अपने प्राणो की आहुति से भी न भरेगा।'

जानती हूँ—देखती क्यो नही ?'

उस दिन से मैं अपने आप मे नही हूँ रानी। उन हत्यारो को कैसे दण्ड दू यही व्यग्रता मुझे मथती रहती है।

'उसकी व्यवस्था आपने कर दी भी है स्वामी। आततायियो को शीघ्र ही दण्ड मिलेगा। आप निश्चिन्त रहे।

निश्चिन्त हो जाऊँ तो मेरा राज्य भार ग्रहण करना ही व्यर्थ होगा।'

तथापि ?

तथापि केवल व्यवस्था कर देना पर्याप्त नही है। रावजी को गए हुए सप्ताह बीत चुका किन्तु हत्यारो का पता अब तक नही चल पाया। उस दुर्गम वन-कातर और पर्वतमाला मे जहा वे छिपे हैं उन्हे खोज निकालना इतना सरल कम नही है रानी।

फिर रावजी उस प्रदेश से परिचित भी तो नही हैं।'

परिचित अपरिचित होने का प्रश्न महत्त्वहीन है रानी। मुझे रावजी के साहस और सूझ बूझ पर पूरा विश्वास है। मैं जानता हूँ अपने सकल्प को पूरा करके ही वे लौटेंगे। कितना भी समय लगे। उन राजद्रोहियों को प्राण दण्ड मिले यही रावजी की प्रतिज्ञा है। फिर मेवाड के दिवगत महाराणा ही नही स्वय उनके अपने

भाजे की हत्या का शाक उन्हे कम नही है जिनके कारण व मारवाड-नरेश बन सके । उस हत्या का प्रतिकार इससे बडा अभीष्ट क्या होगा रावजी के लिए ?

निस्सदेह रावजी हमारे बहुत बडे हित-चितक है । अपने राज्य से निर्वासन की पीडा उ होने सही है । और उस पीडा म परिश्रम करने वाले मुक्तिदाता को भला व क्योकर भूल सकते है ?

हा रानी अपने राज्य अपनी ज म भूमि मे निर्वासन की पीडा साधारण पीडा नही होती । वही पीडा तो कु वर चुण्डाजी भोग रहे है । कु वर जी ने न केवल दादी राजमाता से स्वय विवाह न कर अपने तात श्री का विवाह कराया बापू सा के ज म होने पर मेवाड का अपना पैतृक अधिकार भी छोड दिया । अब वे माण्डू के सुलतान के यहाँ निर्वासित जीवन ही तो जिता रहे हैं । इतना बडा त्याग गुहिल वश मे किसी ने नहा किया होगा रानी ।

अवश्य स्वामी । किसी न नही किया होगा ।

केवल अपने तात श्री की इच्छा की पूर्ति के लिए सदा के लिए अपने मन का मार देना वह इच्छा जिसका ज म चाहे परिहास म ही हुआ हो ।

यह सत्य ह कि तु

कि तु क्या !

कि तु यही कि माडू का सुलतान अ ततोगत्वा मेवाड का शत्रु ही है महाराणा उसकी शरण म अर्थात् शत्रु की शरण मे कु वर जी फिर मेवाड पर आय सकट के दिनो म भी वे नही आये । युवराज न सही ज्येष्ठ होने के नाते महाराणा जी की हत्या और उसका शोक मे सहभागी होना क्या आवश्यक नही था ?

क्या आवश्यक था क्या नही था—मैं नही जानता रानी मैं तो केवल इतना जानता हूँ कि जब मेवाड चाहेगा मेवाड की जनता चाहेगी माता चाहेगी अथवा मैं स्वय चाहूँगा कु वर जी आवश्यकता पडने पर आयेंगे अवश्य आयेंगे । जब कोई उन्हे पुकारेगा । उन्हे बुलाना चाहेगा । फिर राजसत्ता पाने का लोभ किसे नही होता ? कु वरजी उसके हकदार है । है न रानी ? उन्हे छत्र सिंहासन सत्ता, अधिकार किसी की चाह नही है । ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं ।

मेरे प्रश्न का उत्तर यह ता नहीं है महाराज !

उत्तर न सही समाधान तो खोजा जा सकता है । कदाचित् समाधान होने पर उत्तर भी तुम्हे मिल जाय रानी ?

यह केवल अपने अपने विचार का प्रश्न अधिक है महाराज । आपका कथन सत्य ही होगा । फिर निश्चय ही कु वरजी की परख समय पर ही होगी ।

और उस परख म व खरे उतरेंगे ।

श्रौर रीति-रिवाज ।

'उनका महत्त्व अपनी जगह अवश्य होता ह । फिर आपकी पीडा हम जानते हैं रानी ।

माजन लगान की आना दें महाराज ।

हाँ आज हम तुम्हारे कक्ष म ही मोजन करेंगे । कदाचित मानसिक तृप्ति भी मिल केवल क्षुधा ही तृप्त न हा ।

इमका उत्तर मैं क्या दूँ ? कहत कहत रानी अपूवदवी का मुख लज्जा स आरक्त हो उठा । महाराणा एकटक दखत रह । उनके मीतर एक तीव्र कामना उदय हुई ।

क्या दख रह हैं स्वामी ? रानी अपूवदेवी न पूछा ।

कुछ मी नही ।

कुछ तो ? कुछ अवश्य था ।

हा कुछ अवश्य था । बाढ के जल के सदृश्य ।

ता ज्वार उतर गया । एक विचित्र सिहरन । स्वर मे कपकपी सी ।

वह सब सोचन का समय अमी कहा है ?' वह सब अनुचित ही होगा । ठीक है न

मैं क्या जानू महाराज ? कहकर रानी उठ खडी हुई । 'मेरा परामश यही है अपन स्वास्थ्य की ओर मी देखें महाराज ।

तुम्हारा परामश सदा याद रहेगा । अब तो प्रसन हा ।

मैं मोजन कक्ष म चलती हूँ । आप शीघ्र पधारें स्वामी ।' रानी अपूवदेवी न गद्‌गद स्वर से कहा महाराणा की ओर देखा और फिर चल दी । पीछे पीछे महाराणा । माता के कक्ष की ओर । उ ह आता देखकर दासी ने तुरत राजमाता को उनके आगमन की सूचना दी । माता सौमाग्य देवी स्वय कक्ष द्वार पर आ गइ । उनके आते ही महाराणा कुम्मा न चरणो मे प्रणाम कर वन्दना की ।

विजयी होओ धम की रक्षा करो पुत्र । माता न आशीर्वाद दिया ।

अपने कत्तव्य का सदा पालन करूँ माता यह आशीर्वाद मी दो । 'महाराणा बोले ।

एवमस्तु पुत्र । राजमाता न पुन कहा ।

आपन स्मरण किया था माता ? स्वस्थ तो हैं न ?

हाँ पुत्र । मै बिल्कुल स्वस्थ हूँ ।

मुझे स्मरण करने का कारण ?

कारण कुछ विशेष नही ।

फिर भी कोई कष्ट ?''

तेरे होते हुए पुत्र कष्ट किस बात का ।'

देखता हूँ इन दिनों मे आप मे कितना परिवर्तन हो गया है ? बाहर से कितनी सतुलित आप लगती हैं माता किन्तु भीतर के हाहाकार को कोई नहा जानता ।'

हाँ वत्स भीतर के हाहाकार को कोई नही जानता । फिर भी किसी से दो बाल बोल लेती हूँ तो हृदय का भार हलका हो जाता है । फिर भारमली छाया की तरह सदा साथ रहती है । मेरा ध्यान बटाती रहती है—बडी कुशल है इस सब म ।''

मुझे बुलाया राजमाता । भारमली तत्क्षण आ प्रकट हुई ।

नही तो—हा-हाँ तुझे ही बुला रही थी । देख कौन आया है ?'

देख रही हूँ अन्नदाता पधारे है ।''

पधारे नही माता के रूबरू हाजिर हैं । वे कुछ कहे तो ।

कहने को क्या है ? आप सब समझते हैं अन्नदाता !

तू ठीक कहती है भारमली वत्स कुम्भा सब समझते है । तभी इतने चिंतित दिखाई द रहे है ।

चिता कसी अन्नदाता ? यही न कि राज्य का रथ कस अग्रसर होगा ?'

मेरे होते हुए किसका भय ?'

भय ? भय कैसा राजमाता । मैंने चि ता कहा था भय नही ।

तुम सचमुच चतुर हो भारमली '

चार

महाराणा कुम्भा और सामत राघव देव दुर्ग निरीक्षण से लौटे ही थे । मन्त्रणा चल रही थी । हम चित्तौड दुग के नव निर्माण और महलों के जीर्णोद्धार क साथ साथ सुरक्षा की दृष्टि से कई काय तुरत करने होग बाकी सा । प्रथम तो यह कि नीचे स दुग क सिंह द्वार पर सुदृढ रथ माग का निर्माण । तदुपरात प्राचीर की मरम्मत और दुग क नए प्रवेशद्वारो बुर्जों की व्यवस्था ।

सामरिक दृष्टि मे यह काय तुरत प्रारम्भ कर दिय जायें । इसके अतिरिक्त

कबन और राजप्रासाद भी अधिक सुरक्षित किए जाने चाहिए महाराणा जी।' सामत राघवदेव ने परामश दिया।

मेदपाट चारो ओर से शत्रुओ से घिरा हुआ है। यही मेरी विरासत है। मुझे लगता है अपनी खोई हुई भूमि की पुन प्राप्ति और मातृभूमि की रक्षा मेरा प्रथम दायित्व रहेगा काका सा।

मैं जानता हूँ। फिर आपका यह ज मजात सस्कार ही है। स्वर्गीय महाराणा के समय स ही आपका यही शिक्षा मिली है। महाराणा मोकल के साथ साथ शत्रु का पीछा करत हुए वन पहाडो म दिन रात दौडना। फिर स्वदेश की सुरक्षा व्यवस्था म बचपन स ही पूरी भागीदारी। मदपाट को युवराज के रूप म और फिर उसके एकछत्र स्वामी और शासक के रूप म आपको पाना उसका परम सौभाग्य मानता हूँ।

मातृभूमि का सौभाग्य क्या ? सौभाग्य तो मेरा है काका सा। अपन पूवजो के यश और वीरता की गाथाएँ बचपन से सुनी हैं मैंने। मुझे गव है उन सब पर और गर्व है इस गुहिलवश म ज म लेने का।

निश्चय ही आज भी उस गौरव को प्राप्त करेंगे। उससे भी अधिक कदाचित्।

सामत राघवदेव के मुख मे यह सब सुनकर महाराणा का मुख सकोच और लज्जा से आरक्त हो उठा।

यदि मैं सचमुच आपकी आकाक्षाओ के अनुरूप कुछ कर पाया तो स्वय को ध य मानूँगा।' महाराणा ने सविनय कहा।

हा आप सुरक्षा की दृष्टि से दुग निर्माण की बात कर रहे थे महाराणा जी। कुछ विस्तार मे जानना चाहता हूँ।

उत्तर दिशा मे दिल्ली पश्चिम दिशा म गुजरात और दक्षिण म मालवा के सुलतान और शासको को मेदपाट की स्वत त्र सत्ता फूटी आखो नही सुहाती है काकाजी। हमारी सस्कृति, गौरव और आत्मसम्मान का किसी प्रकार विनाश हो यही उनका एकमात्र ध्येय है जबकि हम शाति और सह अस्तित्व मे विश्वास रखते आए हैं। हमे किसी की भूमि की लालसा नही है कि तु अपनी भूमि हमे प्राणो से भी प्रिय है। अत कुम्भलगढ का सवप्रथम निर्माण होना मेरा अभीष्ट है। भगवान एकलिंग के ही निकट। फिर आबू पवत अचलेश्वर के निकट एक अ य दुग मची द और वमनापुर बदनोर के पास विराट मे भी पवतीय शिखरो पर दुग बनाए जाने चाहिए। यह सब शत्रु से सम्भावित युद्धो आक्रमणो और भावी सुरक्षा के लिए मैं परम आवश्यक मानता हू।

ऐसा ही होगा महाराणा जी। विस्तृत योजना बनाकर शीघ्र प्रस्तुत की जाएगी और पर्याप्त धन की व्यवस्था भी राजकोष मे होगी।"

राजकोष का सारा धन मेरा अपना नही प्रजा का धन है। उसकी रक्षा और समृद्धि ही उस धन और राजकोष की सार्थकता सिद्ध करेगी। आप विस्तार म सोचें और महाराणा तथा आमात्य परिषद् से परामश ले। दुर्गों पर पेयजल के लिए कूपी और जलाशयो की व्यवस्था पूजा अर्चना के लिए देव मन्दिर और सेना की समुचित आवास व्यवस्था की भी आवश्यकताएँ पूरी की जानी चाहिए।

आज ही मन्त्रि परिषद की बैठक आयोजित की जाएगी—इस व्यवस्था से सारे मेवाड मे नई चेतना का सचार होगा। अन्यायी और अत्याचारी आक्रमण कर्ताओ से परित्राण और रक्षा के लिए यह योजना शीघ्र कार्यान्वित की जानी चाहिए।

इन दुर्गों के अभाव मे युद्ध तो होगे ही उन्हे न मैं टाल सकूगा और न आप काका सा।

और उन युद्धो म आपकी ही विजय होगी इसमे इसमे मुझे पूरा विश्वास है। मुझे ही क्यो मेवाड की सम्पूर्ण प्रजा को। सामत राघवदेव ने दप से कहा।

उनके और प्रजा के इस विश्वास की रक्षा मेरा परम कर्तव्य होगा काका सा। इतना कहकर महाराणा ने वार्ता समाप्त करदी और व उठकर अपने भवन की ओर चल पडे।

महाराणा के जाते ही सामत राघवदेव ने प्रतिहारी के माध्यम से महामात्य को उपस्थित होने का आदेश दिया और स्वय दुग निर्माण और चित्तौड दुग के जीर्णोद्धार और पुर्ननिर्माण की योजना की कल्पना मे विचरने लगे। किशोर एव युवकोचित महाराणा के सम्पूर्ण प्रस्तावो पर विचार करते करते वे चकित हो रहे थे। राघवदेव जानते थ स्ववश की सुरक्षा और मातृभूमि के प्रति उद्भट देशप्रेम से आतप्रोत मानसिकता कुभा म सचमुच अद्भुत है। स्वाभाविक भी है। जिसका बचपन ही सघर्षो म बीता हो। शस्त्र अस्त्र शिक्षा ही नही शास्त्र व्याकरण सगीत कला मर्मो म पारगत युवराज कुभा का व्यक्तित्व अब मेवाड के अधिपति और शासक के रूप म अधिक निखरेगा सामत राघवदेव को विश्वास था। मातृ भूमि की रक्षा प्रजा की सेवा और उसकी समृद्धि पूवजो के गौरव म अभिवृद्धि—और अधिक क्या चाहिए? यह जीवन रहे न रहे विलास और भौतिक सुख मिलें न मिलें—क्या अन्तर पडता है?

आधी घडी बीतते बीतते मन्त्रि परिषद की बैठक आयोजित करदी गई।

कोटडा की दुगम घाटियों म चाचा और मेरा की निरतर खोज मे भटकते राव रणमल और राठौड सैनिको की यह छोटी सी टुकडी। विकटतम परिस्थिति म

बीतते वे रात और दिन। आश्रयहीन किन्तु अपने लक्ष्य की ओर सदा अग्रसर। अपने प्रण के पालन की चुनौती। अपरिचित वन कातर और पर्वतमाला से घिरे चित्तौड से बहुत दूर। शत्रु की गतिविधि का कोई अता पता नही। ग्रीष्म की तपती दोपहरी और साय साय करती गर्म हवाएँ। जीवन कितना दुश्वर और कठिन है--इसका प्रतिपल होता एहसास। अस्ताचलगामी सूर्यास्त के साथ साथ एक और दिवस का अवसान। साथ साथ टापरो मे झिलमिलाते दो चार दीपक। दूर से दिखाई देता बस्ती का एक-मात्र चिह्न। आशा की नई किरण सा वह लघु प्रकाश।

राव रणमल दो सैनिको के साथ उस टापरे के द्वार पर पहुचे। दूसरे क्षण ही द्वार खुला।

कौन है? एक प्रश्न निस्तब्धता भग कर गूज गया।

अतिथि। एक शब्द का उत्तर मिला।

द्वार पूरा खुला। वृद्धा ने पीछे से झाका। आगे खडे थे उसके दोनो पुत्र। कोई राजपुरुष? अथवा कोई सरदार सामन्त? वृद्धा की उत्सुकता जाग उठी युवक एक ओर हो गया। भीतर के प्रकाश की लघु दीप्ति से राव रणमल का प्रभावशाली मुखमण्डल प्रदीप्त हुआ।

अतिथि हो। अन्दर आओ। ओह यह दोनो? स्वागत और जिज्ञासा एक साथ प्रकट हुए।

मेरे साथी। मित्र समझो। राव ने आश्वस्त किया।

सब ठीक है। भोजन करोगे? वृद्धा ने पूछा।

भूख तो लगी है किन्तु कष्ट क्यो?

कष्ट कैसा? रूखा सूखा जो है वही मिलेगा। वाणी मे अज्ञात स्नेह का अतिरेक।

मक्का की मोटी मोटी रोटिया—सरसो का साग। पलाश पत्रो के पातरो मे परस दी गई। भोजन समाप्त होते होते आदेश सा मिला—उस कोठरी मे विश्राम करो बेटा। बातें सवेरे होगी। युवक ने कक्ष दिखाया। कोठरी मे तीन कम्बल बिछा दिए गए। पुआल के बिछौने पर। राव रणमल कब सो गए पता ही नही चला।

प्रात की प्रथम किरण उदय होते होते वृद्धा जागी। अतिथियो की बाट जोहते बाहर बैठी रही—राव जगे दोनो अगरक्षक भी—अपनी तलवारें सम्हालते हुए।

मेवाड के बेटे हो? वृद्धा ने प्रश्न किया।

ऐसा ही समझो। राव ने कहा

फिर कौन हो। यहा आने का कारण? सामत हो कोई?

आपने बेटा कहा है। तो झूठ नही बोलूँगा। आप मेरी माता तुल्य हुई। मैं राव रणमल।

राव रणमल? वृद्धा और उसके दोनो युवा पुत्रो ने एक साथ कहा।

हा वही मडोर नरेश राव रणमल" अगरक्षक ने पूरा परिचय दिया। मेवाड के कैलाशवासी महाराणा मोकल के हत्यारो की खोज म है हम।

वे यही कही छिपे हैं। दूसरे अगरक्षक ने कहा।

वृद्धा और उसके पुत्र ने एक दूसरे की ओर देखा। वह रहस्यमयी दृष्टि राव से छिपी न रह सकी।

आपने हम रात्रि भोज और विश्राम के लिए आश्रय देकर उपकृत किया है—एक उपकार और करो मा। महाराणा के हत्यारे चाचा और मेरा उन दोनो हत्यारो का छिपने का स्थान हम बताओ मा।

उपकार कैसा? अपराधी को दण्ड मिले इससे अधिक और क्या चाहिए किन्तु ?

किन्तु क्या मा?

'हम नीच वनवासी जन भला क्या कर सकते है। युवक ने बात पूरी की।

आप नीच कैसे हुये? फिर आप भी मेदपाट की प्रजा हैं। उसकी रक्षा का दायित्व आप पर भी उतना है जितना स्वय मेवाड के महाराणा पर उसकी सेना पर अथवा उसके सामन्तो पर। स्वदेश की रक्षा का सबको समान अधिकार है। क्यो माँ?'

'सो तो है। किन्तु हम कर ही क्या सकते हैं? युवक ने कहा।

आप सब कुछ कर सकते है। उन हत्यारो का पता बताकर उन्हे दण्डित करने मे सहायता देकर देश सेवा का महान् अवसर पा सकते हैं।

हाँ बेटा जिसने मेवाड के साथ विश्वासघात किया हो महाराणा के साथ छल किया हो वह किसी का मित्र नहीं है। अपने सैनिको को बुला लो। हत्यारो का पता हम देंगे। वृद्धा के दोनों पुत्रो ने एक साथ कहा—यही कहते कहते वृद्धा की आँखें चमक उठी।

पाच

राव रणमल विजयी होकर लौट रहे हैं। समाचार लेकर एक अश्वारोही चित्तौड पहुँचा है। महाराणा कुम्भा प्रसन्न और सतुष्ट हैं। अन्तत हत्यारों को उनके

किए का दण्ड मिला। भगवान एकलिंग की परम अनुकम्पा हुई। राठौड़ो का रक्त काम आया।

महाराणा ने राज प्रासाद से बाहर आकर रावजी का स्वयं स्वागत किया। मैं इतना भाग्यशाली कहां था राव साहब ? अन्यथा मेरा खड्ग स्वयं उन दोनों के प्राण हरण करता। महाराणा ने किंचित विषाद से कहा। अब वे सभाकक्ष में आ बैठे थे।

मैं आपकी पीर जानता हूँ महाराज। किन्तु मेरी तलवार आपके आदेश से ही उठी थी। फिर प्रतिशोध मुझे भी लेना था। यह करने का अधिकार मुझे भी था।

'मैं भूल गया रावजी। प्रतिशोध आपको भी लेना था। चाचा और मेरा से आपके युद्ध और वीरता का विवरण मैं सुन चुका हूँ। आप संकल्प लें और शत्रु बच निकले ? असम्भव है।

संकल्प मेरा था किन्तु सहायता की—वनवासी गमेती के दोनों पुत्रों और उनकी वृद्धा माता ने। उनका आतिथ्य भी हमें मिला महाराज।

काश हम भी वहां होते। उस माता की स्वयं वंदना करते। मेवाड़ की प्रजा और उसकी देशभक्ति पर हमें गर्व है।

चाचा और मेरा को मौत के घाट उतार कर मैं अग्रसर हुआ कि चाचा का पुत्र एका और मध्या पवार छल से भाग निकले। उनका दमन मैं न कर सका महाराज।

मुझे आप पर अभिमान है रावजी। एक महत्त्वपूर्ण कार्य पूरा हुआ। कैलाशवासी बापू सा की आत्मा को परम शान्ति मिलेगी। पिता श्री की स्मृति में कुम्भा के मुख पर विषाद और मध्यमा। सभा भंग हुई। रही ऐका और मध्या पवार की उससे हम निपट लेंगे। महाराणा ने आदेश दिया—राव रणमल अब अतिथिशाला में नहीं अलग भवन में रहेंगे। फूल भवन उनके निवास के उपयुक्त रहेगा। बहुत हंसा राजदादी और राजमाता सौभाग्यदेवी से कहकर रावजी अपने भवन में अभी अभी गए हैं। पिछले दिनों की दौड़ धूप और शौर्य प्रदर्शन के पश्चात् खुश ही नहीं सुख सुविधा के ये क्षण अर्जित किए हैं रावजी ने। विजयोत्सव आयोजित होगा। राजप्रासाद पर दीपावली होगी। नृत्य का आयोजन भी। रात्रि भर आमोद प्रमोद चलता रहेगा। चलना ही चाहिए।

आमोद प्रमोद की घड़ी आ ही पहुँची। नृत्य शाला सजा दी गई। महाराणा कुम्भा काका राघवदेव महामात्य और रावजी नियत स्थानों पर आ बैठे। नृत्य-

शाला के ऊपर प्रकोष्ठ म रानिया और सेविकाए वठ गईं। झीन रेशमी पर्दे खोल दिये गये। पहल सगीत होगा। गायेगी मारमली। सगीत और नत्य विशारदा। जिसकी कला पर मुग्ध होकर स्वय महाराणा ने अपनी प्रिय रानी और अब राजमाता सौभाग्यदवी की सेवा मे नियुक्त किया था। सेविका अथवा दासी ही नही राजमाता की मित्र थी।

प्रथम मगलाचरण म गणेश वदना। फिर ख्याल और अ य शलिया के गायन का क्रम। बीच म लघु अ तराल। अब नत्य करेगी मारमली। वेश म किंचित परिवतन। अगो पर आभूषण करघनी मेखला अगद और श्रवण कुण्डल परा म नूपुर। मृदग पर थाप पडी। सारगी के स्वर झनझना उठे। बिजली सी चमकी और नत्य की लहरियो मे प्रवाहित हो चली रस गगा। जिसका प्रवाह रुका ही नही। बिजली चमकती रही। उस चमक मे प्रथम तो राव की आखें चौंधिया गइ। फिर मुग्ध माव से वे एकटक देखते रहे। कौन है यह मारमली? मडोर नरेश म जगी एक पिपासा। मारमली का साहचय मिल तो? कितनी मादकता? कसा आकषण? सौ दय और कला का एक साथ जादू जो सिर पर चढकर बोलता है। रावजी भूल गये वे महाराणा के निकट सम्ब धी ही नही चित्तौड के अतिथि हैं। व भूल गए—चित्तौड क अधिपति गुहिल वश क महाराणा है—राठौड नही। मारमली प्राप्त होनी ही चाहिए। नत्य समाप्त होत होत न जाने कसे राव रणमल का हाथ गल म पहन हुए कण्ठहार की ओर गया— न जाने कब वह उतर गया और मारमली क अक म जा गिरा। मारमली न कृतज्ञता से राव की ओर देखा। मौन सवाद हुआ। वे सु दर कजरारी आखे न जाने कब झुक गइ। समस्त मण्डोर म ऐसी सु दर दासी कोई नही। सोचा रावजी ने। महाराणा न समझा सचमुच कला पारखी हैं रावजी। कि तु मारमली न सोचा कुछ और ही। नारी उस दृष्टि को पहचान जाती है। वह पहचान जाती है उस याचना के भाव का। उस भाषा को पढना वही जानती है। विधाता क लख अद्भुत हैं। विचारती रही मारमली।

मारमली रावजी की सवा म भी उपस्थित रहेगी। हसाबाई राजदादी का आदेश हुआ। इस समय माई से बढकर और अधिक विश्वासपात्र हितचितक मवाड का कौन होगा? उसी की सवा म उपस्थित रहगी मारमली। यह कसा मनोरथ है। पहन तो आसक्ति हुई। फिर लालसा जगी। राजपुरुष के सामीप्य की लालसा। मण्डोर नरेश के साहचय की लालसा। यह अवसर जीवन म बार बार नहीं मिलता। मारमली जान गई अपन सौ दय के उस वश का। रावजी की उस अज्ञात पीडा को। स्वय का साथक करगी मारमली। नारी का अभीष्ट भी यही है क्या? कौन जानता है? भविष्य क्या है। जा होना था हो चुका।

राव रणमल के अनुकूल आचरण करेगी मारमली। उ हें सतुष्ट करेगी।

अत्यन्त प्रसन्न हैं रावजी। अब उनके भवन म यदा कदा आती रहेगी भारमली। वे जब चाहेंगे, उसे बुला सकेंगे।

महाराणा कुम्भा अत्यन्त उद्विग्न थे। समाचार मिला था बूदी के हाडा मालवा के सुलतान से जा मिले हैं। माडलगढ का क्षेत्रपाल युद्ध परास्त हुआ है। हाडा न उसे बूदी राज्य मे मिला लिया है। इसका अथ था मेवाड की राजसत्ता को खुली चुनौती। यदि यही सिलसिला जारी रहा मेवाड की प्रतिष्ठा धूल मे मिल जायगी। महामात्य सहणपाल और काका राघवदेव मडोर नरेश राव रणमल जी सभी सभाकक्ष मे बैठे है। गुप्त मत्रणा चल रही थी। सबके हाथ तलवार की मूठ पर थे। वातावरण मे तनाव था।

प्रश्न मर्यादा का है अन्नदाता। हाडा ने मर्यादा भग की है। उचित उपाय करना ही होगा। महामात्य ने कहा।

'मैं महामात्य से पूर्णतया सहमत हू महाराज। उपाय केवल एक ही शेष है। माडलगढ पर पुन आक्रमण और हाडाओ से उसकी मुक्ति। सामन्त राघवदेव ने क्रोधपूर्वक कहा।

मैं जानता हूँ हाडाओ का यह अपराध है। सिर से पानी गुजर चुका है। हमें प्रतिकार करना होगा। महाराणा ने किंचित आदेश किन्तु शान्त स्वर मे कहा।

आदेश मे अन्नदाता। मेवाड के वीर तत्पर हैं। वे उतावले हैं इस आक्रमण के लिए। सेनाधिपति क्बध अपने स्थान से उठ खडे हुए। क्षण भर को मौन छाया रहा।

हम सेनाधिपति क्बध से सहमत है। माडलगढ पर चढाई की जाए। रावजी आप आज ही प्रस्थान कीजिए। मेवाड की सेना आपके अधीन युद्ध करेगी। यह हमारा आदेश ही नही—आन्तरिक इच्छा भी है।

इस आदश और इच्छा का पालन होगा महाराणा जी। रावजी आसन मे उठ खडे हुए। वे महाराणा को नमन करते हुए बोले।

जय एकलिंग महाराणा कुम्भा की जय वीर प्रसविनी मेदपाट भूमि की जय जयघोष गूज उठा।

आप विजयी होकर लौटें रावजी। महाराणा के स्वर म शुभकामना और कृतज्ञता का मिला जुला भाव था।

निश्चय निश्चय। महामात्य सहणपाल भी उठ खडे हुए।

पाच सौ चुने हुए पदाति और उतने ही अश्वारोही सनिको की शीघ्र व्यवस्था की जाये क्बध जी —महाराणा ने पुन आदेश दिया।

सभा समाप्त हो गई। दो घड़ी बीतते बीतते मांडलगढ़ का भाग मेवाड़ी सेना से घिर उठा। आकाश में धूल के बादल छाने लगे। आक्रमण अप्रत्याशित था किन्तु सुनिश्चित। हाड़ाओं की सेना न केवल पराजित हुई वरीसाल ने स्वयं आत्म समर्पण किया महाराणा कुम्भा ने मांडलगढ़ पुनः जीत लिया। वरीसाल को क्षमा दान मिला। राव रणमल की विजय एक नया कीर्तिमान। कुम्भा के वे अधिक विश्वासपात्र बने।

रावजी मैं आपको अधिक महत्त्वपूर्ण पद देना चाहता हूँ। महाराणा अवसर पाकर बोले।

कैसा पद महाराणा?' रावजी के मन में जिज्ञासा जागी।

चित्तौड़ दुर्ग की आन्तरिक सुरक्षा का भार अब आप पर होगा। दुर्गपाल आप नियुक्त करेंगे। दुर्ग की गतिविधियों की सूचना आप स्वयं हमें देंगे। दुर्ग की गुप्तचर व्यवस्था आपके अधीन होगी।

जो आदेश महाराज। मेरा परम सौभाग्य।

दूसरे दिन प्रातः ही महाराणा के आदेश जारी हो गये। राव रणमल की महत्त्वाकांक्षा का नया द्वार खुला।

राव रणमल ने नवीन उत्तरदायित्व खूब सोच समझकर ही लिया है। वे स्वयं को अत्यन्त प्रभावशाली बना देने को उत्सुक हैं। उनके प्रभावशाली बनने का अर्थ है राठौड़ों का प्रभावशाली बन जाना। मेवाड़ की राजनीति में उनकी महती भूमिका का श्रीगणेश। सिसोदिया वीरों का अब वे स्थान लेंगे। अपने भवन में एकाकी शैय्या पर लेटे लेटे सोच रहे हैं राव रणमल। आनन्द की विचित्र सिहरन। शरीर में रोमांच। मंडोर और फिर मेवाड़। अधिक शस्य श्यामल भूमि। तपती रेत के स्थान पर हरीतिमा भरी प्रकृति की लीला उधर राजसत्ता की अधिक व्यापकता। एक विशाल साम्राज्य की कल्पना। कुम्भा युवक है तो क्या हुआ? उनकी तरह अनुभवी थे नहीं। फिर मवदनशील बन जाने की कल्पना और अधिक सघन साम्राज्य प्राप्त होने की आशा व्याम जो गहरानी जाती है। एक अनचली मादकता जगाती है।

और भारमली? कामिनी और कंचन का स्वर्ण में सुगन्ध का कैसा सुमाग? शक्तिशालियों के लिए कोई दुष्कर नहीं। वीर भोग्या वसुन्धरा। शंका और भय का मन ही मन निराकरण कर रहे हैं रावजी। जीवन का यही यथार्थ है। फिर निर्वीर्य नहीं हैं राव रणमल। प्रथम बार चित्तौड़ आने की सार्थकता अनुभव हुई। प्रथम बार मानसिकता में सत्ता पाने की चरम आसक्ति बलवती हुई।

अपने भाग्य पर इठला रहे हैं राव रणमल। किन्तु भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है इसे विधि ही जानती है रावजी नहीं।

मालवा के सुलतान महमूद खिलजी ने महाराणा कुम्भा के शत्रु ऐका चाचा दत्त और महपा पवार को आश्रय देकर विरोध का और बीज बो दिया। सुलतान महमूद पर आक्रमण और दारा की पराजय अथवा एक और महपा पवार को कुम्भा को सौंपना। अन्य कोई विकल्प नही रहा। महाराणा के लिए यह प्रथम प्राथमिकता बन गई। महाराणा ने चाहा आक्रमण न करना पडे। दूत कार्य आरम्भ हुआ। सुलतान ने ऐका और महपा पवार को सौंपने से इन्कार कर दिया। इसका अर्थ था महाराणा की अवमानना। मेदपाट का अपमान। परिणाम एक ही था। माडू पर आक्रमण और युद्ध। अन्तिम निर्णय के लिए आमात्यगण मुख्य मुख्य सरदार और सरपचो की बैठक आयोजित की गई।

समाकक्ष मे कुम्भा का स्वर गूंज रहा था। महाराणा का मुख सुकुमारता त्याग कर आरक्त हो उठा था। त्यौरियाँ चढ गई थी। मन का आवेग और आदेश वाणी म व्याप्त था किन्तु वाणी दृढ थी और निष्कप।

महमूद खिलजी का उत्तर आप सबने सुन लिया। हमारा अभिप्राय आप समझ चुके होगे।'

समझ गए हैं अन्नदाता आपके आदेश की प्रतीक्षा है। मैं आपको आश्वासन देता हूँ—मेवाड की सेना तैयार है। सेनाधिपति बोले।

तो हम भी तयार हैं। माडू पर तुरन्त आक्रमण की तैयारी कीजिये। हम स्वय चलेंगे साथ होगे रावजी। चारो ओर से माडू दुग को घेर लिया जाये।" एक तीव्र आवेग आह्वान का स्वर निकला और वायुमण्डल मे विलीन हो गया।

जय एकलिंग भगवान। महाराणा कुम्भा की जय। जयघोष से समाकक्ष गूंज उठा। महाराणा उठ खडे हुए। भोर होते ही कूच के लिए हम सूचित *किया जाए।*

जो आदेश अन्नदाता। सेनाधिपति ने नमन कर कहा।

प्रहर भर रात्रि शेष होते होते महाराणा ने स्नान किया। भवन स्थित शिवालय मे अर्चन भ्राकपक नमन कर बाहर आए। राजमाता की चरण रज ली। रानी प्यारदेवी छोटी रानी अपूर्व देवी ने आरती उतार कर विजय तिलक कुम्भा के मस्तक पर अंकित किया। फिर गवाक्षों से अपने स्वामी को द्वार से निकल कर जाते देखती रही। महाराणा अश्व पर आसीन हुए। दूसरे ही क्षण एड लगाई। अश्व चल दिया पीछे पीछे अश्वारोही सैनिको की पक्तियाँ और पदातिक। राजप्रासाद का सुगंध प्रागण अब रिक्त हो गया।

कुछ चिंतित दिखाई देती हो बहन। महारानी प्यारदेवी ने रानी अपूर्वदेवी का हाथ थाम लिया।

चिन्ता कैसी जीजी मां। फिर स्वामी प्रथम बार तो युद्ध में नहीं गए हैं। मुझे उनकी विजय और सकुशल लौटने में पूरा विश्वास है। अपरिचित हैं हमारे स्वामी? दर्प से रानी अपूर्वदेवी ने कहा।

फिर भी चिन्ता तो मन की होती है। यही तो मानव हृदय का रहस्य है। गूढ़तम रहस्य। जो प्राणों से भी प्रिय हो उसकी चिन्ता न हो। असम्भव। आओ मेरे प्रकोष्ठ में चलकर वहीं विश्राम करो।

विश्राम?' अपूर्व देवी तनिक हंस पड़ी।

हां विश्राम एक रहस्य और है जिसे मैं जानती हूँ। राजमाता ने मुझे बताया है तुमने तो छिपाया है मुझसे।

कैसा रहस्य?

यह स्वयं से पूछ लो। मुझसे क्या पूछना। फिर दीपाधार के निकट आकर स्वयं को देखो। दर्पण मैं देती हूँ। पुत्र ही होगा। हंसकर महारानी प्यार देवी ने कहा।

ओह जीजी। कहते-कहते रानी अपूर्व देवी लजा गई। राजमाता से अधिक बेधक तो उनकी आंखें हैं। कहते कहते अपूर्व देवी महारानी से लिपट गई। फिर संभल कर बोली— इस भावावेश के लिए मुझे क्षमा करें जीजी मां।

महारानी प्यार देवी अप्रत्याशित रूप से गम्भीर हुईं। दोनों प्रकोष्ठ में आ गई। महारानी ने वातायन खोल दिए। प्राची में लालिमा दिखाई दी। पक्षियों की चहचह से प्रकोष्ठ निनादित हो उठा।

'मुझे दर्पण में क्या देखना। आपने बता ही दिया है जीजी मां।" अपूर्वदेवी की वाणी में पुलक का स्पर्श था। विनय की सुकुमारता। उस आत्म सम्मोहन से बाहर वे निकल नहीं पाई थीं। सम्मोहन जो किसी सुदूर के दिखाई देते भविष्य से बांधता है। आकांक्षाओं आशाओं की सृष्टि करता है। किसी स्वप्न लोक मां।

किन्तु महारानी गाड जी प्यार देवी जिन विचारों में खो गई थीं अपूर्व देवी को उसका आभास भी नहीं था। कुछ पल वे उसी अवस्था में बैठी रहीं। किसी दूसरे स्वप्नलोक में विचरण करती हुईं। फिर शिष्टाचार मन आया। कभी कभी आ जाया करो। यहां मेरे प्रकोष्ठ में आना वर्जित तो नहीं है।

आपके प्रकोष्ठ में आने में कैसी वर्जना। आप तो जीजी हैं मेरी बड़ी जीजी। कहते कहते रानी अपूर्व देवी ने गले में आंचल ठीक करते करते झुककर

प्रणाम किया। शुभमस्तु उस विनम्र से प्रभावित हो महारानी ने आशीर्वाद दिया। वातालय से सूर्य की प्रथम किरणें प्रकोष्ठ में अवतरित हुईं। प्रकोष्ठ प्रकाश से भर गया। दासी ने प्रवेश कर अभ्यर्थना की और के बीच मद कर दिया। न जाने कैसे कब प्यारदेवी आसन से उठी? आगे बढ़कर अपूर्व देवी को आलिंगन में ले लिया। फिर उसी प्रकार वे उस श्रृंगार पिटक की ओर हो गईं। रजत-मंजूषा उठाई। खोलकर एक चुटकी रक्त कुंकुम से अपूर्व देवी की मांग भरी और भास्वर पर अंकित कर दी एक और सुहाग-बिंदी। अपूर्व देवी गद्गद् हो उठी।

महमूद खिलजी का अनुमान ठीक निकला। वह जानता था मेवाड़ की ओर से आक्रमण होगा ही। कारण केवल एक चाचा देता और मध्या पवार को पनाह देना ही नहीं था। अन्य कारण भी था। इन्हीं महाराणा कुम्भा ने चाहा था उमर खां को मालवा की सल्तनत मिले। उमर खां के पिता हुशंगशाह की हत्या कर ही महमूद खिलजी मालवा का सुलतान बन बैठा था। कुम्भा ने उमर खां की सहायता कर मालवा की सल्तनत पुन दिलाने की योजना बनाई थी किन्तु महमूद खिलजी के हाथों पराजय बन्दीगृह की योजना और फिर मृत्युदण्ड उमर खां के हिस्से में आएंगे। महमूद जानता था महाराणा उस प्रसंग को भूले नहीं होंगे।

विचारमग्न बैठा था अपने दरबार में महमूद। मन्त्रणा चल रही थी। तभी दरबार में आकर उसके सिपहसालार ने कोर्निश की।

क्या खबर है मोहसिन खां? पूछा महमूद ने।

खबर अच्छी नहीं है जहांपनाह। मेवाड़ की फौज काफी नजदीक आ पहुंची है।'

और हमारी फौज?

'उसे पीछे हटना पड़ा है। रसद पहुंचने के सब रास्ते बन्द हैं। हम सब ओर से घिर गए हैं शाहआलम। शायद शिकस्त का मुंह देखना पड़े।

क्या बकते हो।' महमूद क्रोध से कायल हो उठा। हम खुद चलेंगे मैदान-जंग में। वह तिलमिला उठा। हमारी शमशीर में अब भी वही ताकत है। मेवाड़ी फौज इस वक्त कहां है?

सारंगपुर के पास पड़ाव डाले हुए है जहांपनाह। मोहसिन खां ने उत्तर दिया। खौफनाक जंग और मारधाड़ के बाद सुस्ता रहे हैं।

यही मौका है मोहसिन खां। फौज के ज्यादा दस्ते साथ लो। बस एक ही जरूरी हमला किया जाए।

जो हुक्म जहांपनाह मोहसिन खां ने फिर कोर्निश की—

फिर भयानक युद्ध हुआ जो रात्रि के अंतिम प्रहर तक चलता रहा। भूमि शवों से पट गई।

'हर हर महादेव' और 'अल्ला हो अकबर' की गजनाओं से आकाश गूँजता रहा। सिसोदिया और राठौड़ वीरों की मार से सुलतान की सेना के पैर उखड़ गए। महमूद खिलजी को पकड़कर शिविर में बन्दी बना दिया गया। महाराणा के आदेश से चित्तौड़ दुर्ग में उसे ले जाया गया। एक और मध्या पवार बन्दी बना लिए गए।

इस युद्ध मे गुजरात के सुलतान महमदशाह ने अवसर का लाभ उठाना चाहा। अपने पुत्र मुहम्मद खां को सेना सहित सारंगपुर पहुँचने का आदेश दिया—किन्तु मेवाड़ी सेना की विजय और महमूद के बन्दी बनाए जाने से पासा पलट चुका था। मुहम्मद खां को अपनी सेना के साथ लौट जाना पड़ा।

युद्ध में पराजय ही नहीं बन्दी बनाए जाने और फिर चित्तौड़ लाए जाने का अपमान महमूद खिलजी को भीतर से त्रस्त कर चुका था। मेवाड़ के महाराणा को पराजित कर कैद कर डालने के मंसूबे धूल में मिल चुके थे।

सोम को पूर्व ही रावजी और अपनी सेना के साथ कुम्भा चित्तौड़ दुर्ग मे पहुँच गए। मालव विजय का समाचार बिजली की भांति नगर में फैल गया था। प्रजाजनों ने मार्ग के दोनों ओर खड़े होकर महाराणा का जय जयकार किया। मरुदेश मे अद्भुत उत्साह और हर्षोल्लास समाहित हो उठा।

सभागार मे महाराणा पहुंचे। आमात्य परिषद् के सदस्य सामंत, सरदार पंक्तिबद्ध खड़े रहे। जय घोष पुनः गूँजा। महाराणा सिंहासन पर बैठ गए सभासद अपने अपने आसनों पर जा बैठे। आदेश पाते ही सभागार मे महमूद खिलजी को लाया गया। उसके बंधन खोल दिए गए।

'मैं नहीं चाहता था मालवा-विजय करूं।

चाहता था केवल यही आप हमारे शत्रुओं को आश्रय न देकर हमें सौंप देवें—आपने ऐसा नहीं किया। हमें चुनौती दी। फलस्वरूप कितने निर्दोष सैनिकों का रक्त बहा और आप अब हमारे बीच हैं सुलतान। हम अपना कार्य पूरा कर चुके। आपको बचने का मार्ग भी न मिला।'

महमूद खिलजी चुप रहा। इस घोर अपमान की पीड़ा और उसके दंश से किंकर्तव्यविमूढ़ सा खड़ा रहा।

महाराणा ने एक बार महामात्य सेनाधिपति और राव रणमल फिर सामंत राघवदेव की ओर कटी कटी सी दृष्टि डाली।

हम जानते हैं आप साधारण बन्दी नही है—मालवा के सुलतान हैं। मात्र युद्ध अपराधी नही। हमारा आदेश है सुलतान को बन्दीगृह मे सारी सुख-सुविधाएँ दी जाएँ जो शाही महल मे इन्हें मिलती हैं। इनकी रिहाई और मालवा की वापसी की तिथि हम स्वय निश्चित करेंगे। इतना ही दण्ड सुलतान के लिए पर्याप्त रहगा।' महाराणा उठ खडे हुए।

जल्दी जल्दी कहो—'आपका राज्य अक्षुण्ण रहेगा सुलतान। हमे उसकी कोई लालसा नही है। हमे आशा है आप यह प्रसग भूलेंगे नही।'

महामात्य।' कुम्भा ने पुकारा।

आज्ञा महाराज।'

हमारे आदेश के पालन की तुरन्त व्यवस्था हो। सुलतान को कोई कष्ट न हो।

महाराणा चलिए। महमूद खिलजी को इस सब की आशा नही थी। किन्तु अपमान का घाव भरना क्या सम्भव है? क्या सम्भव है इस प्रसग को भूल जाना? महाराणा न ठीक ही कहा था यह प्रसग कभी भुलाया नही जाएगा। इसका प्रतिशोध तो लेना ही होगा। वह प्रतीक्षा करेगा अपनी मुक्ति की। माडू लौटने की प्रतीक्षा।

उचित अवसर की प्रतीक्षा। और कुम्भा की उदारता पर चमत्कृत थी सारी सभा—राव रणमल सामत राघवदेव महामात्य और सेनाधिपति। राजनीति मे यह भी सम्भव है क्या?

सात

फूल भवन का शयन कक्ष। रात्रि का प्रथम प्रहर समाप्त होने को था। राव रणमल अधीर हो उठे। प्रतीक्षा करना कितना पीडादायक होता है। जानते हैं रावजी फिर भारमली की प्रतीक्षा? कितना कठिन होता है स्वय को वश मे रख पाना? सौन्दय भी कितना क्रूर होता है?

इधर एक रत्नहार बनवाया है राव ने। आज रात्रि वही भारमली को भेंट करेंगे। स्वय अपने हाथो उसे पहनायेंगे। दिप दिप करता वह रत्नहार उससे सुशोभित भारमली का उन्नत वक्ष। सुन्दर मुख मण्डल पर बिखरी केश-राशि जैसे मेघो से घिरा पूर्णिमा का चन्द्रमा। राव कल्पना मे खोने लगे।

अकेले मदिरा भी आनन्द नही देती। भारमली की उपस्थिति मादकता को कई गुना कर देती है। द्वार पर खटका होते ही सावधान हो जाते हैं राव रणमल। भारमली ही होगी। किन्तु आभास मात्र होता है। इस बार सच ही द्वार खुला। आ पहुँची भारमली। रावजी को प्रणाम किया। फिर उनकी शय्या पर बैठकर राव के अंगरखे के बंधन शिथिल करने लगी।

इतना विलम्ब कैसे हुआ भारमली ? राव ने प्रश्न किया।

लगता है रावजी थक गये हैं।" किंचित हास्य से भारमली प्रश्न का टाल गई। फिर सुरा पात्र उठाकर चषक भरा। विलम्ब के लिए क्षमा चाहती हूँ।' कह-कर भारमली ने चषक राव के होठों से लगा दिया।

मेरे प्रश्न का उत्तर यह तो नही हुआ राव ने सीधे भारमली की आँखों में ताकते हुए कहा। भारमली ने देखा अधेड़ आयु में भी राव की आँखों में तेजस्विता है। पौरुष झलक रहा है। भारमली ने पुनः चषक भरा और शैय्या पर पैताने बैठकर राव के चरण दबाने लगी। वह कोमल स्पर्श राव को भीतर तक रोमांचित कर गया।

मैं यहाँ प्रतीक्षा में व्याकुल रहूँ और तुम राजप्रासाद में। यह जीवन मुझे नही सुहाता। राव अब अर्द्ध स्वप्नावस्था में पहुँचने लगे थे। मसनद के सहारे अध लेटे वे भारमली की पीठ सहलाने लगे।

यह जीवन मेरा अपना तो नही है रावजी—चाहकर भी शीघ्र नही आ पाती। आप कदाचित् भूल गये ? मैं राजमाता की दासी हूँ। कोई स्वामिनी नही। दासी का अर्थ है पराधीनता। दूसरे की इच्छा का अनुगमन। इसमें अधिक कुछ भी नही।

राव रणमल ने सुना। फिर भारमली को अपने अंक में भर लिया। तुम्हें मुझसे कोई विलग नही कर सकेगा भारमली। एक चषक और भरो। कण्ठ शुष्क हो रहा है।

भारमली ने सुरापात्र से फिर मदिरा उँडेली। सब एक ही घूँट में पुनः पी गये।

तुमने अभी अभी कहा था भारमली। तुम कोई स्वामिनी नही दासी हो-मात्र दासी हो। किन्तु कुछ और प्रतीक्षा करो। तुम सचमुच स्वामिनी बनोगी मण्डोर की साम्राज्ञी। मण्डोर ही क्यों ? मेवाड़ की भी साम्राज्ञी। मैं तुम्हें वह सब सुलभ कराऊँगा। राजसत्ता मेरे हाथ में आने तो दो। तब राठौड़ चित्तौड़ के स्वामी होंगे। गुहिल नही। तब अनेक दास दासियाँ तुम्हारी सेवा में होंगी।

पहले भारमली स्वप्न में डूबने लगी। दूसरे ही क्षण शंकित हुई। शंकित

ग्रौर ग्रातकित । भावी ग्रनथ ग्रौर भय की शका जगने लगी । क्या करन जा रहे हैं रावजी ? ग्रनात भय से काप उठी भारमली । स्वामी से छल । मेवाड की राजसत्ता से छल । मेवाड की प्रजा से छल । वही मेवाड जिसमे वह जन्मी ग्रौर पली है । जिसकी जलवायु म उसने सास ली है । उसी को पराधीन करने की योजना उस व्यक्ति के द्वारा जिस उसने ग्रपना शरीर ग्रौर हृदय दिया है । यह कैसी विडम्बना ? कसी ग्रात्म प्रवचना ?

राव रणमल ने ग्रध खुली ग्राखो स भारमली की ग्रोर देखा । उसके मुख के भावों का पढना चाहा । मैं तुम्हे वह जीवन दूंगा जिसकी तुमन कल्पना भी नही की हागी । निकट ग्राग्रो प्रिय । राव न फिर ग्राश्वस्त करना चाहा । राव को स्पश शीतल लगा । सारी उष्मा जसे जाती रही । किससे भयभीत हो भारमली ? मेरे हात हुए नि शक हो जाग्रो । राव रणमल क हृदय मे फिर तृष्णा जागी । किन्तु भारमली का ग्रपना मन बुझा बुझा सा लगा ।

मेरी योजना पर विश्वास रखो भारमली । राव न पुन भारमली को ग्रक म भरना चाहा । तभी मदिरा के ग्रति प्रभाव म उसक बलिष्ठ बाहु शिथिल हुय । भारमली निवध हुई । रात्रि का ग्रतिम प्रहर बीत चला । न जाने सब कब सो गय । किन्तु जागती रही भारमली ।

फूल महल के ग्रन्त कक्ष मे बैठे है राव रणमल । रात्रि की खुमारी उतर चुकी है किन्तु भारमली से हुग्रा वार्तालाप का क्षीण स्मरण ग्रा रहा है । योजना कार्यान्वित करेंगे रावजी । ग्रपने विश्वस्त सुमेरसिंह को बुला भेजा है । पुत्र जाधा दुग की व्यवस्था मे लगा है । दुगपाल बदल दिया गया है । द्वार ग्रौर बुर्जों पर ग्रब राठौड सैनिक पहरा द रहे हैं । मेवाड की सत्ता को दुबल बनाने का उपाय सोच रहे हैं राव ।

भीतर ग्रा जाग्रो सुमेरसिंह । राव ने प्रतीक्षारत सुमेरसिंह को बुला लिया । क्या समाचार है ? राव ने प्रश्न किया ।

समाचार ठीक ही है स्वामी—सारा काय ग्रापके कथन ग्रनुसार चल रहा है । किन्तु ?

किन्तु क्या ?

मण्डोर के युवराज प्रसन्न नही है ।

ग्रप्रसन्नता का कारण ?

कारण है काका राघवदव स्वामी ।

सब कुछ स्पष्ट कहो ।

गुप्तचर ने समाचार दिया है । युवराज जोधा की कार्यप्रणाली से सामन्त राघवदेव रुष्ट हैं । कदाचित् महाराणा से वे प्रतिकार करेंगे ।

किसी ने छल किया है ?'

नहीं स्वामी । सामन्त की अनुभवी आँखें सब कुछ ताड़ गई हैं ।

राव रणमल कुछ समय मौन रहे ।

आप मौन हैं स्वामी ? सुमेरसिंह ने प्रश्न किया ।

मेरा अनुमान ठीक ही निकला । मेरे सशय की तुमने पुष्टि कर दी सुमेर सिंह । इससे पूर्व कि कुम्भा सब कुछ जान सके सामन्त को कार्य से हटाना होगा ।

रावजी ! स्वामी ! सुमेरसिंह हकलाया ।

हाँ सुमेरसिंह । सामन्त का जीवित रहना खतरनाक सिद्ध हो सकता है । उनके जीवन के दिन अब समाप्त हुए यही समझो । हमें तत्काल इस दिशा में सक्रिय हो जाना है । इसका अवसर हम तुम्हें देंगे । काम हो जाने पर मुँहमांगा पारितोषिक ही नहीं सेनानायक का पद भी पाओगे सुमेरसिंह । '

मुझमें वह क्षमता कहाँ महाराज ? '

यह सोचना मेरा कर्म है । तुम्हारा कर्म है केवल आदेश की अनुपालना । सामन्त राघवदेव के जीते जी हम असुरक्षित हैं । हमें तुम पर विश्वास है ।

उपकृत हूँ स्वामी । आप जैसा चाहते हैं वही होगा ।

किन्तु सावधान । इस कार्य में पूरी गोपनीयता रहे ।

समझ गया स्वामी । सुमेरसिंह प्रणाम कर द्रुतगति से बाहर निकल गया । सामन्त राघवदेव के विरुद्ध जाल बिछा दिया गया । अवसर की प्रतीक्षा होने लगी ।

सायंकाल निकट था किन्तु सभा कक्ष में मन्त्रणा चल रही थी । सभासद सब जा चुके थे । किन्तु महाराणा के साथ बैठे थे सामन्त राघवदेव रावजी और महामात्य सहणपाल ।

किले का निर्माण कार्य पूरा हुआ । आपकी योजना सफल हुई महाराज । सामन्त राघवदेव ने कहा— दुर्ग में नीचे से मुख्य द्वार तक रथ मार्ग बन चुका है ।'

हम स्वयं देख चुके हैं । महाराणा ने कहा । ' प्राचीन खंडित मन्दिरों के जीर्णोद्धार के साथ साथ नये मन्दिरों का निर्माण कार्य आरम्भ होना चाहिए । चित्तौड़ में कुम्भ स्वामी का विष्णु मन्दिर सर्वप्रथम निर्मित किया जाए । स्थान वही खंडित प्राचीन मन्दिर रहे । यवन आक्रान्ताओं के अत्याचारों के अवशिष्ट चिह्न मिटने ही चाहिए । मेवाड़ की धर्मपरायण प्रजा को परम सन्तुष्टि और सुख मिलेगा । क्यों महामात्य ?

निश्चय ही अन्नदाता।' सहरणपाल बोले। "अनेक मन्दिर ध्वस्त पड़े हैं। प्रजा दुःखी है।

तभी साँझ का झुटपुटापन उतर आया। सेवकों ने शीघ्र दीपाधारों पर रखे दीपक प्रदीप्त कर दिये। महाराणा को विलम्ब का आभास हुआ। वे उठ खड़े हुए। राव रणमल को साथ लिये बाहर आये। उनके राजप्रासाद की ओर चलते ही सहरणपाल ने सामन्त राघवदेव से विदा ली। उनके जाते ही सामन्त प्रस्थान के लिए अश्व पर आरूढ़ हुए। महाराणा के अनुदेशों का स्मरण करते हुए।

उस विजन एकान्त में अपने अश्व की टापों के अतिरिक्त सामन्त ने अन्य आहटें सुनीं। दो अश्वारोहियों को अपनी ओर आते देखा। किसी सदेश की संभावना से अश्व को रोक कर वे उतर पड़े। दोनों अश्वारोही निकट आ पहुँचे। घिरती साँझ के अँधेरे में सैनिकों की आकृतियाँ अपरिचित सी लगीं। मुण्डों पर बँधे ढाटों पर चमकती हुई आँखें केवल दिखाई दीं। तभी दोनों अपरिचित सैनिकों की हाथों में तलवारें चमक उठीं बिजली की फुर्ती से दोनों ओर से आक्रमण हुआ। दूसरे ही पल नंगी तलवारें सामन्त की छाती और पृष्ठ भाग को चीरकर आर पार हो गई। रक्त बह निकला। सामन्त की निर्जीव देह उस रक्त में लथपथ नीचे गिरी। उनका अश्व ऊँचे स्वर में हिनहिनाया। दोनों अश्वारोही अपने अश्वों पर चढ़कर भाग निकले।

सामन्त राघवदेव की कायरतापूर्ण हत्या का समाचार सुनकर महाराणा सन्न रह गये। सारे दुर्ग में ही नहीं, नगर में लोग भयग्रस्त हो उठे। हत्या का विवरण ही ऐसा था। किसने यह दुस्साहस किया है? यही प्रश्न सबके मन में था। राजदादी हंसाबाई राजमाता सौभाग्यदेवी सारा राजकुल महाराणा के साथ दुःखी है। सामन्त राघवदेव की पूरे राजकीय सम्मान के साथ अन्त्येष्टी कर दी गई है। किन्तु वही प्रश्न अनुत्तरित रह गया है। श्राद्ध कार्य के उपरान्त सभा आयोजित है। राज पुरोहित गुरुदेव तिल्हभट्ट व्यासपीठ पर आसीन हैं। सम्पूर्ण सभा शोक मग्न है। शुद्धि तो हो गई किन्तु शंका का निराकरण नहीं हुआ। महाराणा किस पर संदेह करें? हत्या तो हो चुकी।

सामन्त राघवदेव ने अपने प्राणों की आहुति व्यर्थ नहीं दी है महाराज। यह भविष्य का दिशा संकेत है शत्रु का प्रथम आघात? भावी विनाश की भूमिका — गुरुदेव ने कहा।

मेरी समझ के तो परे है गुरुदेव! मेवाड़ की प्रजा के पितृ तुल्य पूज्य काका सा की हत्या इस पुण्य भूमि की प्रतिष्ठा पर लगा कलंक है। इसे धोकर ही हम शान्ति की श्वास ले सकेंगे चाहे हमें अपने प्राण ही क्यों न उत्सर्ग करना पड़े। महाराणा के स्वर में विषाद और आक्रोश ध्वनित हो रहे थे।

सनाजित

इसका पता शीघ्र चल जायगा मन्नाला। हमारे गुप्तचर सक्रिय हैं। सनाधिपति चाचग न आश्वस्त किया। राव रणमल और दुर्गपाल शत्रु सब मौन बैठे रहे। सनाधिपति चाचग न एक रहस्यमयी दृष्टि उस ओर डाली। उस दृष्टि के साथ साथ महामात्य महणपाल की दृष्टि भी उठी। गुरुदेव सिंहभट्ट से कुछ गोपन नहा रहा। वे मन ही मन क्षुब्ध हुए।

कदाचित् हमें अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़गी।' कुम्भा न आसन स उठत हुए कहा। सभा विसर्जित हो गई।

आठ

राजमाता सौभाग्यदवी और महाराणा कुम्भा दीर्घ मन्त्रणा म व्यस्त हैं। उस कक्ष म किसी क आने की अनुमति नही है।

काका राघवदव की नृशंस हत्या न मुझे झकझोर कर रख दिया है माता? न जान कसा भीषण अंधड आन को है मवाड म। अंधड अथवा बवंडर। उस प्रवाह म कौन सुरक्षित है? कौन नही?

इतनी सी बात स घबरा गय वत्स! यह ता जीवन का प्रवाह है। अनुकूल भी बहता है प्रतिकूल भी। प्रतिकूलता ही हमारे जीवन की चुनौतियां हैं। अन्यथा जीवन का अर्थ ही क्या है?

मैं जानता हूँ माता। मुझे गुरुदेव के शब्दो का स्मरण आ रहा है। राज्यारोहण के अवसर पर उन्होंन मुझे सावधान किया था दुरभिसंधियों और षडयन्त्रों से। आन्तरिक शत्रुओं से।

मुझे भी स्मरण है वत्स। फिर चिन्ता क्यों? गुरुदेव से मार्ग दर्शन लो। वे समस्या का समाधान अवश्य निकालेंगे। कैलाशवासी महाराज और फिर सामन्त की अनुपस्थिति म वे ही तुम्हारे लिए पितृ तुल्य हैं। वन्दनीय और विश्वसनीय हैं।

किन्तु समय समय हाथों से फिसलता दिखाई देता है माता। महमूद खिलजी को हमने मुक्त तो कर दिया किन्तु वह चैन स बैठने नहीं देगा। अपने अपमान का प्रतिकार करके रहेगा। और गुजरात का अहमदशाह। वह भी घात लगाये बैठा है। शत्रुओं से बाहर भी हम घिरे हैं।

समय को बांधने की सामर्थ्य किसी मे नहीं होती। काल चक्र की गति अबाध

है। कि तु जिसमे पौरुप होता है उनसे स्वय काल कतराता है। उनका माग छोड देता है। वाताचक्रो म फसन के स्थान पर तैर कर निकल जाना ही वीरो का कौशल है। तुम ग्रन्तत विजयी होग्रोगे। राजमाता ने कुम्भा के शीश पर हाथ रख दिया। कुम्भा न माता की चरण रज ली। चलन का उद्यत हुए।

ग्रौर सुनो वत्स। रावत चूण्डा को तुर त बुला भेजो। कल ही सदशवाहक माडू को कूच प्रस्थान करे। मेवाड को उनकी ग्रावश्यकता है। यही ग्रवसर है ग्रपनो की परख करने का।' राजमाता ने पुकार कर कहा।

ग्रापकी ग्राज्ञा का तत्काल पालन हागा माता। हम तुर त सदश भेजते है। एका चाचा दल ग्रौर मध्या पवार के मामले का निपटारा उन्ही के स मुख होना उचित है।'

महाराणा राजमाता के कक्ष से बाहर ग्राये फिर ग्रपने भवन की ग्रोर चल दिय। रानी ग्रपूवदेवी को स्मरण दिलाने। कु वर जी की परख का समय ग्रा पहुँचा रावत चूण्डा की नसो मे वही पूव म का रक्त है जो हमारी नसो मे प्रवाहित हो रहा है। फिर मातृ-भूमि प्रथम है। प्रथम है उसकी सुरक्षा। वृत्त वदलते हैं। वे मनुष्य के लिए हैं मनुष्य उनके लिए नही—सोचते रहे महाराणा। विचारो का मथन चलता रहा।

ग्रविलम्ब सदेशवाहक मालवा भेज दिया गया। रावत चूण्डा दिन मे सम्मुख होगे। कुम्भा को विश्वास था व रुकेंग नही।

राजगुरु तिल्हभट्ट साधना कक्ष म बैठे थे। महाराणा को बाह्य प्रकोष्ठ मे ग्रासन द दिया गया। उ ह प्रतीक्षा करनी पडी। जप समाप्त हुग्रा। गुरुदेव बाहर ग्राए। ग्राग्रो महाराणा। कुशल ता है ?

कैसी कुशल गुरुदेव ?

ग्रपनी कुशल। राज परिवार की कुशल। हम तो ग्रकुशल देखना नही चाहते। मगल की कामना करते हैं। तिल्हभट्ट न हाथ की रुद्राक्ष का गले म धारण कर लिया। महाराणा के सम्मुख काष्ठपीठ पर बठ गये।

गुरुदेव। मेरी चि ता। राजमाता की चि ता ?'

मैं ग्रवगत हूँ। उपाय बताऊँगा। समय की प्रतीक्षा करनी होगी।

पुन समय। राजमाता समय की बात कहती है ग्राप समय की बात कहते हैं। कौनसा समय ग्रब शेप रह गया है गुरुदेव ?' महाराणा ने प्रश्न किया।

समय की प्रतीक्षा नही करोगे तो समस्याग्रो का समाधान कसे पाग्रोगे ? वह कौन सी रात्रि है जिसका प्रभात नही होता ? सूय की किरणें प्रतिदिन नई लगती

हैं। नया प्रकाश देती हैं। कितना भ्रमण करते हैं सूर्यदेव ? किन्तु थकन नहीं। अविराम चलती है उनकी यात्रा। समय से ही बंधी हुई। सब कुछ सहना पुरुष का धर्म है। धैर्य की परीक्षा तभी होती है।' कहते कहते गुरुदेव किंचित मुस्कराये।

मेरी चिन्ता से अवगत है गुरुदेव। फिर मैं ही नहीं राजकुल सकट म है सकट म है मेवाड की सम्पूर्ण प्रजा। मैंने कहा था सकट म आपका ही स्मरण करूंगा। महाराणा फिर अधीर हो उठे।

जब तक भगवान शिव का वरद हस्त है सकटो स निवृत्ति मिलगी। भगवान एकलिंग मे आस्था है न। वे ही उबारेंगे। जो प्रजा का सुखी बनाना चाहता है उसकी रक्षा का व्रती है वे ही उसे सुखी बनाते हैं। अपनी सुरक्षा देते हैं। कहते कहते तिल्हभट्ट ने आँखें मूंद ली। महाराणा सकेत समझ गए। प्रणाम कर चलने को उद्यत हुए।

'रावत चूडा के आगमन की हम प्रतीक्षा है आप भी कीजिए महाराणा। अबकी बार उन्हीं के साथ सभा में पधारें। साथ आमात्य भी हो। वे भी कुछ कहने की स्थिति म होगे।" राजगुरु ने महाराणा को आशीर्वाद दिया और पुन साधना कक्ष मे प्रवेश कर गए। लौट चले महाराणा।

दूत माग म ही मिल गया। 'क्या समाचार है ?" महाराणा ने प्रणाम के उत्तर म प्रश्न किया।

महाराणा की जय हो। रावत चूडा चित्तौड की सीमा म प्रवेश कर चुके है। आधी घडी है दुग म प्रवेश म।

अविलम्ब महामात्य को सूचित करो। कुवर जी के स्वागत अभ्यर्थना की शीघ्र तयारी कर। द्वार पर हम स्वय उपस्थित रहगे।

जो आज्ञा देव। दूत लौट गया। राजमाता का आश्वासन गुरुदेव का आशीर्वाद सब सच निकले। महाराणा का हृदय पुनक से भर गया। पिता की छाया न थी। वह अब मिलेगी। मेवाड़ को राघवदेव के स्थान पर पितृत्व मिलेगा।

महाराणा कुम्भा ने महामात्य के साथ दुग के प्रमुख द्वार पर पहुचकर रावत चूडा का स्वागत किया। रावत चूडा ने महाराणा को गले लगाया। वे उन्हे सादर लिवा लाए। काका राघवदेव की नृशस हत्या से मेवाड का राजकुल दुखी है प्रजा दुखी है। आपका आगमन नई आशा और उत्साह का सचार करेगा। कुम्भा ने कहा।

मेरा प्रयत्न होगा हत्यारो को उचित दण्ड मिले। राज्य मे आतक न फले। राघवदेव मर भी आदरणीय थे। मेवाड से दूर रहा तो क्या हुआ ? मैंने सदा आप

सबका हित ही सोचा है। अनिष्ट-चितन कभी नही किया। रावत चूडा ने कहा।

मै जानता हू आपके हृदय म हमारे प्रति स्नेह है। आपका त्याग धय है। अनुकरणीय हैं आप। अयथा मेवाड के सिंहासन पर आसीन होकर आप वही सुख भोगते।

अब मेदपाट की सेवा म ही मुझे सुख मिलेगा। फिर मेरा और आपका ध्येय भी एक ही है। मैं भगवान एकलिंग को साक्षी कर शपथ लेता हूँ कि मेदपाट की रक्षा एकमात्र मेरा व्रत होगा। हमारी स्वतन्त्रता का कोई पददलित नही कर सकेगा।'

हम आप पर सदा विश्वास रहेगा।

उस विश्वास की रक्षा मैं करूगा। रावत चूडा ने भावावेश मे महाराणा के दोनो हाथ उठाकर अपने हाथ मे ले लिए।

अपने शयनकक्ष मे जाग रही थी राजमाता सौभाग्यदेवी। भविष्य की चिन्ता म डूबी हुई। इसी समय भारमली ने कक्ष मे प्रवेश किया।

आपने स्मरण किया था स्वामिनी? भारमली ने कहा। सकल्प विकल्प मे डूब रही थी भारमली।

नही तो। राजमाता ने उत्तर दिया।

स्वामिनी मैं बडी विकट परिस्थिति मे हूँ। अत्यत विचलित दिखाई दी भारमली।

कसी विकट परिस्थिति?

मुझसे अपराध हुआ है।

कैसा अपराध। तुमसे कोई अपराध हो ही नही सकता। राजमाता उठ कर बैठ गई। कहो क्या बात है?

स्वामिनी। भारमली ने अपना कथन आरम्भ किया। 'बहुत बडा अनथ होने को है। अनथ की कल्पना से मन काप उठता है।

कैसा अनथ? नि शक होकर कहो। यह कैसी विडम्बना है? क्षण भर के लिए सोचने लगी भारमली। एक ओर रावजी का प्रबल आकर्षण था, उसके प्रति प्रेम अपने प्राप्त पुरुष का मोह—वह भी राजपुरुष वीर और रावल। दूसरी ओर थी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की अभिलाषा उसके गौरव की रक्षा की चिंता। भोग मे क्या रखा है। अपनी स्वामिनी अपने देश और मातृभूमि से विश्वासघात नही करेगी भारमली। उस सिवत पाप का ही पर्याय है। फिर यह दूसरा पाप होगा।

मारमली की आखे भर आइ। स्वय को सतुलित कर बोली— अचानक छल होने का है स्वामिनी। रावजी मेवाड के अधिपति बनने का स्वप्न देख रहे हैं। महाराणा जी का जीवन खतरे में है। सत्ता के लोभ मे कत्तव्य अकर्त्तव्य का कोइ उ हे भान नही है।

तुमने कैसे जाना ?

मुझसे स्वय वे यही सब कह रहे थे। मदिरा के प्रभाव म कथनीय अकथनीय का अ तर मिट जाता है स्वामिनी। मेरा अपराध क्षमा हो। मैं किसके मोह म ना फसी ? क्या परिणाम निकला।" मारमली सिसक उठी।

राजमाता सौभाग्य देवी पर्यंक से उठ खडी हुई। मुझे तुम पर गव है मारमली। यह सब कहकर तुमने मेवाड के राजकु र मेवाड की प्रजा का बडा उपकार किया है। अपने प्रेम की बलि देकर मातृभूमि के प्रति कत्तव्य की रक्षा की है। ध य हो तुम।'

राजमाता ने मारमली को अक मे भर लिया। पुन फूट पडी मारमली।

अपने मन को और दु खी न करो मारमली। हम अभी व स कुम्भा को सचेत करगे। तुम हमारे भवन मे विश्राम करोगी। तुम्हारी सुरक्षा का भार हम पर रहेगा। मेवाड के प्रति द्रोह का उचित दण्ड अवश्य मिलेगा राव को।

राजमाता का बुलावा पाकर प्रथम तो चकित हुए महाराणा कुम्भा— इस समय अद्ध रात्रि को बुलाया है माता न ? परिचारिका से उ होने प्रश्न किया।

हाँ अन्नदाता। अविलम्ब पधारिए अ यथा स्वामिनी स्वय आ पहुचगी। परिचारिका न दोहराया।

महाराणा शया स उठ खडे हुए। अत वस्त्र ठीक कर अगरखा पहना। शिर पर पगडी धारण की—कमर म कटार खोस भगवान एकलिग का स्मरण करत हुए परिचारिका के साथ साथ चल दिए। राजप्रासाद के प्रहरी सचत हुए। सावधान की मुद्रा म। एक सनिक साथ चलने को प्रयत्नशील हुआ। महाराणा न सकेत स वजना की। तभी अद्ध रात्रि की गजर बजी। प्रहरियों ने महाराणा को नमन किया। फिर एक ओर हट गए। पूरा राजप्रासाद किसी रहस्य के आवरण म डूब गया।

आओ वत्स। राजमाता को महाराणा ने अपनी प्रतीक्षा म पाया।

नौ

राजगुरु तिल्हभट्ट सब कुछ जान गये। दुर्गपाल शत्रुसाल के सम्मुख अन्य कोई मार्ग ही न था। अपनी दृष्टि से गिर जाना इससे अधिक बुरा कुछ नही हो सकता। शत्रुसाल गहन सकल्प विकल्प म दो दिन डूबा रहा। उसकी अन्तर आत्मा उसे प्रतिक्षण प्रताडित करती रही। साम न्त राघवदेव जसे देव तुल्य पुरुष की हत्या स दुग अपवित्र हुआ है। उसकी आत्मा भी कलित हुई है। उनके वध के षडयन्त्र का आभास था उसे। किन्तु वह अपना मुख नही खोल पाया। प्रायश्चित करेगा शत्रुसाल। आत्मशुद्धि के लिए गुरुदव की शरण मे जायेगा। दुगपाल के दायित्व से मुक्त हुआ तो क्या ? कत्तव्य च्युत हुआ है शत्रुसाल।

इस पाप से मुक्ति कसे हो गुरुदेव ? आत्मग्लानि मे डूब गया शत्रुसाल। आखें अश्रुओं म डूब गई।

पश्चाताप कर पाप मुक्ति की दिशा मे ही तुमने कदम रखा है शत्रुसाल। सामन्त राघवदेव की हत्या का प्रमाण मिल गया। मुझे दु ख तो इस बात का है कि रावजी की प्रेरणा से यह सब हुआ। कितना निन्दनीय और जघन्य कृत्य है यह राव का। विश्वासघात की पराकाष्ठा नीचता की सीमा का अतिक्रमण। तुमने सब कुछ बताकर अपन कत्तव्य का पालन किया है आयुष्यमान्।

अब समय नही है गुरुदेव। स्वामी को शीघ्र सूचित कीजिए। मेरा तो साहस नही होता। सेनाधिपति महामात्य सहणपाल किसी के भवन मे प्रवेश नही कर पाया। आपके पास आना ही निरापद समझा।' शत्रुसाल पुन विफर पडा। 'मैं तो अत्य त साधारण सेवक हूँ गुरुदेव।

'साधारण नही तुम असाधारण हो शत्रुसाल। शत्रु से घिरे होने पर भी सत्य का उद्घाटन युद्ध की वीरता मे कम नही। फिर सब और उनके समथक तुम्हारे प्रति पहले ही शकालु हैं। किन्तु मैं तुम्हे अभय देता हूँ–मेवाडाधिपति की ओर से। तिल्हभट्ट ने कहा।

राजमाता के कक्ष मे लौटकर महाराणा कुम्भा शेष रात्रि जागते रहे। काका राघवदेव की हत्या का शोक भारमली के रहस्योद्घाटन और राव की कृतघ्नता–कालकूट विष के सदृश्य जान पडा। फिर गुरुदेव के कथन का स्मरण हुआ। कुवर चूण्डा और आमात्य परिषद की सभा का आयोजन का आह्वान किया है राजगुरु ने। निश्चय ही काका राघवदेव की हत्या का कोई प्रमाण उनके पास हो। अन्यथा इतने स्थिर नही होत।

प्रभात की प्रतीक्षा मे रात्रि व्यतीत हो गई। सुबह के कार्यों से निवट कर

स्नान किया। देवगृह म जाकर पूजा की। मन उद्विग्न रहा। वस्त्र पहनकर प्रकोष्ठ म आये। रानी अपूर्वदेवी को प्रतीक्षा म खड़ा पाया।

'चिंतित है महाराज ?' रानी ने अग वस्त्र ठीक कर उत्तरीय व्यवस्थित किया। फिर स्नेहमयी दृष्टि स्वामी पर डाली।

चिन्ता हमारी सहचरी बन गई है प्रिये। समस्याओ का घटाटोप म माग नही सूझ रहा है।

किन्तु यह आपकी प्रकृति के अनुकूल नही है। माग खोजना फिर सफलता की ओर अग्रसर होना—यही आपके हेतु कल्पनीय है।'

राव हमसे छल करना चाहते है। वे मेदपाट के शासक बनन का स्वप्न देखने लगे हैं। हम अपने प्राणो के सकट का भय नही भय है मेदपाट की स्वतन्त्रता के हरण का। वह भी अपनो ही के द्वारा। मनुष्य कितना क्रूर हो सकता है। जिसका अन्न ग्रहण करे उसी का अनिष्ट विचारे।

मुझे प्रतीत होता है रावजी को लेकर आपक मन मे कोई भ्रम है।'

कैसा भ्रम ? भारमली असत्य नही कहेगी–मैं भली-भाँति जानता हूँ मेवाड की उस वीर पुत्री को। राव न उसे अपनी वासना की पूर्ति का साधन मात्र समझा और वह उन्हे गम्भीरता से लेती रही। अपन प्रेमी के रूप मे। कभी कम का विचार नही कर पाई। नारी का मन भी विलक्षण होता है। पात्र-अपात्र नही देखता।'

'यदि पर्याप्त प्रमाण है, राव दोषी है। राजद्रोह के दण्ड का भागी है स्वामी।

इसका निणय समय करेगा।

'समय नही आप करेंगे। मेवाडाधिपति आप है।

हम भूल ही गये थ। तुमन स्मरण करा दिया प्रिय। फिर मेवाडाधिपति स्वय भगवान एकलिंग हैं हम केवल निमित्त मात्र हैं।

महाराणा सभा कक्ष की ओर चल दिये। अश्वारूढ। साथ दो अन्य अग रक्षक। अपने अपने अश्वो पर आरूढ।

सभा कक्ष आमात्य परिषद सभासदो सामन्तो स भर चुका था। गुरुदेव तिलट्भट्ट भी आ चुके थे।

रावत चूण्डा से मन्त्रणा चल रही थी। महाराणा के प्रवेश होते ही जयघोष हुआ। सभासद उठ खडे हुए।

प्रमाण मिला सेनाधिपति क्या ? महाराणा न आसन पर बठते ही प्रश्न किया।

हाँ महाराज प्रमाण मिल गया। राजगुरु तिल्हभट्ट ने दिया। इस हत्या के दोषी राव रणमल हैं। उन्हीं द्वारा यह कुकृत्य कराया गया है।'

गुरुदेव अपने कथन का परिणाम जानते हैं?'

'जानता हूँ। राव ने ही यह दुस्साहस किया है। वे अपराधी हैं महाराज।'

एक और अपराध करने का आरोप है उन पर मेवाड़ के प्रति मेवाड़ की जनता के प्रति राजद्रोह का। प्रमाण हमारे पास है। निश्चित समय पर दोनों अभियोग उन पर चलेंगे। किन्तु हमें विचार करने का अवसर मिले।' महाराणा कुम्भा के मस्तक पर चिन्ता की रेखायें सघन हो उठीं।

दोनों अपराध अक्षम्य हैं अन्नदाता। दण्ड की व्यवस्था में विलम्ब क्यों?' महामात्य ने उठकर कहा। सेनाधिपति कबंध से भी रहा नहीं गया। राव का आसन रिक्त है। वे आखेट को गये हैं। इसका अर्थ स्पष्ट है राव की रुचि आखेट में क्यों थी हत्या की गुत्थी सुलझाने में क्यों नहीं।

कुंवर चूण्डा का अभिमत क्या है? हम जानना चाहते हैं। महाराणा ने कहा।

रावत चूण्डा आसन से उठे। राजगुरु तिल्हभट्ट और दुर्गपाल भाटी शत्रुसाल से हम पूरा विवरण जान चुके हैं। राजमाता सौभाग्यदेवी से भेंट कर भी अभी लौटे हैं। राव के विरुद्ध दोनों अभियोग भयानक हैं। आरोप प्रमाणित हो चुके हैं। अतः निर्णय शीघ्र होना चाहिए महाराज। चूण्डा ने कहा।

हम कुंवरजी से पूर्णतः सहमत हैं। उनकी और सभासदों की चिन्ता से हम अवगत हैं। मेवाड़ की प्रजा भी परिणाम जानने के लिए उत्सुक है। अपराधी को दण्ड मिले यह हमारा सकल्प है। तथापि हमें विचार करने का और अवसर चाहिए। सभा समाप्त हो।' महाराणा अपने आसन से उठ खड़े हुए।

एक और निवेदन है महाराज।" रावत चूण्डा ने पुनः उठकर कहा।

निःसंकोच कहें कुंवर जी। महाराणा पुनः सिंहासन पर बैठ गये।

एका और मध्या पवार को मानवीय आधार पर बन्दीगृह से मुक्त किया जाये महाराज। वे अपने किये पर लज्जित हैं। मेवाड़ के प्रति निष्ठा रखने का वचन देते हैं। आपकी उदारता पर मुझे पूर्ण विश्वास है महाराज। उन्हें क्षमादान दिया जाए।

उनका अपराध अक्षम्य है किन्तु यदि आप सन्तुष्ट हैं हम उन्हें क्षमादान देते हैं। आशा है उनका भावी आचरण मेवाड़ के प्रतिकूल नहीं होगा।'

निश्चय ही। वे आपके दर्शनों को उत्सुक हैं महाराज।

उ ह तत्काल उपस्थित किया जाय । महाराणा न महामात्य को आदेश दिया । कुछ ही पलों म वे महाराज के सम्मुख थे । व करबद्ध नमन की मुद्रा म आगे आये । महाराणा कुम्भा के चरणों मे झुके ।

अपराध क्षमा करे महाराज हम आपके आजीवन सेवक रहग अन्नदाता । दोनों ने कहा । उनकी आखो म अश्रु थे ।

भगवान एकलिंग ने तुम दोनों को सद्बुद्धि दी है । हम क्षमा करते है । महाराणा ने अक्षय की मुद्रा मे कहा और चल दिय । राजगुरु तिल्हभट्ट ने उनका अनुसरण किया । कि तु उनके जाते ही सभासद क्रोध और आवेश से गरज उठे । राव ने जीने का अधिकार खो दिया है" एक न कहा । दूसरा बोला— मेरा यह खड्ग उनके प्राण लेकर रहगा यदि अनुमति मिल । कुछ और तलवारें म्यानों से खिच गइ । देखते देखते सभा कक्ष म कोलाहल बढन लगा ।

शा त हो शा त हो —महामात्य सहणपाल ने उठकर साम तों और सभासदों को शा त करने का प्रयत्न किया । 'उत्तेजना त्यागें और महाराज की व्यवस्था की प्रतीक्षा कर । कि तु कोलाहल बढता चला गया । सभासद सूत्रो मे फिर बैठ गय । म त्रणा होने लगी । दण्ड मे विलम्ब कैसा ?

राव रणमल को तुर त ब दी बनाया जाए ।' किसी ने व्यवस्था दी । राजद्रोह के अपराध का दण्ड केवल मृत्यु है । सार्वजनिक रूप मे मृत्यु दण्ड । मवाड की प्रजा उत्तेजित है । वह उसी से स तुष्ट होगी । दूसरे न कहा ।

राव रणमल के आखेट से लौटने की सूचना तुर त हमे भी दी जाए ।' महामात्य सहणपाल बोले । उसकी सम्पूर्ण गतिविधियों पर दृष्टि रखनी होगी कु वरजी । अ यथा और भी अनिष्ट हो सकता है ।

वह नहीं होगा । कु वर चूण्डा ने आश्वस्त किया । फिर उठकर वे बाहर आए । फूल भवन के आस पास गुप्त रूप म विश्वस्त सैनिक नियुक्त कर दिये गये ।

देर रात्रि राव रणमल आखेट स लौटे । गुप्त सैनिक सतर्क हो गये । राव न वस्त्र बदले । एक सेवक ने सुरापात्र और चषक लाकर थाल म रख दिये । चषक पर चषक भरकर राव मदिरा पान करते रह । जस पिपासा तृप्त होने का नाम ही नहीं लेती थी । उ होंने ताली बजाकर सकेत किया सेवक न पुन सुरापात्र भर दिया । भारमली, उसे शीघ्र उपस्थित करो । तत्काल बुलाओ । राव आवेश म नहीं थे ।

सुना नहीं । राव न कड़ककर कहा । सेवक चुपचाप चला गया । तभी राव शैय्या स उठे । कि तु पैर लड़खड़ान लग । अधिकारपूर्ण स्वर म पुन पुकारा— कहाँ है सार सेवक ? भारमली अभी तक नहीं आई । राव का कण्ठ शुष्क

होने लगा। सुरापात्र हाथ से छूट गया। सवत्र मदिरा फैल गई। बाहर कुछ कोलाहल हुआ। फिर मौन छा गया। राव कुछ समझ नही पाय। शैय्या पर पसर गए। तभी, विद्युत की तीव्रता से दो शस्त्रधारी भीतर आ घुसे। शयन कक्ष के दीपाधार पर जलते दीपक सहसा मन्द हो गए। उस अधरे म दो खड्ग चमके फिर राव के शरीर के आर पार प्रवेश कर गए एक भयानक चीत्कार स शयन कक्ष गूज उठा। राव का शरीर छटपटाया। फिर चारो ओर रक्त फैल गया। सब कुछ शान्त हो गया। दोनो शस्त्रधारी कक्ष से बाहर निकल गए। गुप्त सैनिक तत्काल हटा दिए गय।

रात्रि का चौथा प्रहर बीतन को था। द्वादशी का चन्द्रमा किसी मेघ की ओट म जा छिपा था। तारा का प्रकाश क्रमश मन्द होता जा रहा था। दूर शृगाल समवेत स्वर मे हुआ हुआ पुकार उठे थे। राव रणमल का शरीर निस्पद पडा था। सारी महत्त्वाकाक्षाएँ मेवाड की सत्ता पान की लालसा भारमली के सौन्दय की पिपासा और भोग की इच्छायें सदा के लिए शान्त हो चुकी थी। दुष्कम की अन्तत परिणति क्या है? प्रकृति का अपना भी कोई नियम है क्या?

और भारमली। तुमन जिसे अपना सवस्व अर्पित किया प्रणय दिया प्राणो से अधिक चाहा किन्तु समर्पण प्रणय और आसक्ति सब कुछ व्यथ हुआ। तुम नही जानती थी विलासी प्रणय का अथ नही समझता। कितना दुबल और क्षुद्र हो जाता है मनुष्य। क्षण भर मे सारी गरिमा खो बैठता है। और तुम भारमली। अपने प्रेम का मातृ भूमि क लिए बलिदान कर त्याग के किस शिखर पर पहुँच गई?

दासी कम कितना कठिन होता है?

दस

चैत्र शुक्ल त्रयादशी का वह प्रभात एक साथ दा समाचार लेकर उदित हुआ। राव रणमल का अन्तात सामन्त सरदारो ने रात्रि का समाप्त कर दिया। अपराधी को उचित दण्ड देना ही राजनीति है। विलम्ब और भी अनिष्टकारी हो सकता है। सिसोदियाओ की मान मर्यादा का प्रश्न था। राठौडो की बढती हुई प्रतिद्वद्विता और मवाड की राजनीति मे अनचाहा हस्तक्षेप असहाय हा गया था। जसे ही राव के वध का समाचार फैला सेनाधिपति कवध ने सिसोदिया वीरो को सचेत कर दिया। दुग द्वारो पर पहरा कडा कर दिया गया। कोई भागने न पाय। आवश्यकता पडी तो युद्ध हो सकता है। किन्तु राव जोधा अपन विश्वस्त साथी सुमेरसिंह के साथ पलायन कर ही गया। राठौड सनिको को और अधिक रुकना व्यथ लगा वे पीछ हो लिए किन्तु मेवाड की सेना की टुकडिया पीछा करने लगी। रावत चूण्डा

स्वय समरामण्ड म मेवाडी सेना के साथ थे। कपासन के निकट राठौडो से टक्कर हुई। राव जोधा किसी प्रकार प्राण बचाकर भाग निकला। मण्डोर विजय कर ही चूण्डा मेवाड लौटेंगे। हुआ भी वही।

महाराणा को प्रथम वेदना हुई। राव रणमल विपत्ति में न केवल सहायलम्बी थे कैलाशवासी महाराणा मोकल के हत्यारो को दण्ड दिया था अनेक युद्धो मे मेवाडी सेना का कुशल नेतृत्व भी किया था। वही राव रणमल राज सत्ता हथियाने का षडयन्त्र कर बठे। वीर पुरुष भी कितना दुबल हो सकता है? दुबल और क्षुद्र?

एक अ य समाचार था रानी अपूवदेवी के पुत्र ज म का। मेवाड को युवराज मिला है। गत दिवस के प्रदोष का पारायण समाप्त कर राजगुरु तिल्हभट्ट पादप्रक्षालन कर उठे ही थे कि समाचार मिला राजमाता ने राजप्रासाद म गुरुदव को आमन्त्रित किया है। वे पधारे और भावी युवराज को आशीर्वाद दें। चित्तौड नगर मे यह समाचार आन द से सुना गया है—नगरवासी प्रसन्न चित्त चौराहा विथियो मे एकत्रित हो रहे हैं। काका राघवदेव की नशस हत्या का विषाद राव रणमल के दुष्कृत्य के कारण दण्डस्वरूप वध और युवराज के ज म के समाचार से विस्मृत हो गया है। दुग के सिंह द्वार पर कुछ शहनाई वादक शहनाई बजा रहे हैं। राज भवन मे उत्सव जसी शोभा दीख पडती है। राजकुल दास दासिया प्रसन्न हैं। गुरुदेव आचाय तिल्हभट्ट शिवचित और विशेष मागलिक पूजा सम्पन्न कर आशीर्वाद प्रदान करेंगे। देवग्रह के बाह्य मण्डप म सब एकत्रित होंगे। पूजा की तैयारिया आरम्भ हो चुकी हैं।

दादी माँ हसा और राजमाता सौभाग्यदेवी को प्रणाम कर महाराणा कुम्भा निज भवन म पधारे। प्रतिहारी परिचारिकायें माग देती हुई एक ओर नमन करते हुए हट गय।

कैसा स्वास्थ्य है देवी? महाराणा न रानी से पूछा।

स्वस्थ ही हूँ स्वामी? रानी न उत्तर दिया।

मुझे सूचना तक नही दी अपन कष्ट की?

कैसे देती। फिर आपकी व्यस्ततायें चि ताओ से अनभिन नही हूँ।

यह व्यस्ततायें और चि तायें। कुम्भा सहसा चुप हो गए। आप मौन क्यो हो गए महाराज? रानी ने प्रश्न किया।

मैं सोच रहा था शासक का जीवन भी कैसा है? आकाक्षाओ और रहस्यो से घिरा हुआ। राजनीति से पूणतया आच्छादित राजा का व्यक्तित्व नहीं होता? साधारण मनुष्य की तरह जीने का अधिकार भी उसे नही? महाराणा न दीघ नि श्वास लिया।

कुमार का मुख नही देखेंगे ? ' रानी अपूवदेवी ने प्रश्न किया ।

ओह, मैं भूल ही गया । कुछ अनुचित कहा हो अ यथा न समझना प्रिय ।"

महाराणा ने नवजात शिशु पर दृष्टि डाली—उनका अपना रक्त मेवाड के वशज का वशज । भावी युवराज । महाराणा न मन ही मन भगवान एकलिंग का स्मरण कर उन्ह प्रणाम किया । दासी न समाचार दिया ।

क्षमा करें अन्नदाता ? राजमाता के साथ गुरुदेव पधार रह हैं ।

कोई कष्ट तो नही । प्रिये ? महाराणा न शीघ्रता से पूछा ।

आप निश्चित रह स्वामी । ' रानी न उत्तर दिया । सेविका ने रेशमी पदा व्यवस्थित कर दिया । त्वरित गति से कुम्भा कक्ष के बाहर आ गए । आचाय श्री और राजमाता की प्रतीक्षा करने लगे । दूर से उनकी पदचाप सुनाई दे रही थी । खडाऊँ की खट खट निस्तब्धता भग करती हुई ।

आशीर्वाद प्रदान कर गुरुदेव तिल्हभट्ट चल गए । तभी प्रतिहारी ने आकर कहा— महाराज की जय हो । सभा कक्ष मे महामात्य सेनाधिपति भमाराव प्रतीक्षा मे हैं । दीघकाल से बैठे हैं । स्वामी आदेश दें ।

हम चलते हैं ।

अपने भवन से कुम्भा निकले ही थे कि गलियारे मे श्वेत वस्त्रावृता सु दर स्त्री दिखाई दी । अलकरण विहीन मुख पर किंचित विषाद की छाया ।

भारमली तुम । इस वेश म ? महाराणा पहचान गए ।

प्रणाम अन्नदाता । मेरा यही वेश उपयुक्त रहेगा । क्षमा करें महाराज । मैं पितृगृह लौट जाना चाहती हूँ । स्वामिनी और आप अनुमति प्रदान करें ।

पितृगृह क्यो ? तुम्हारी आवश्यकता राजमाता को है । हमे है । मेवाड के समस्त राजकुल को है । तुम्ह यहाँ कोई कष्ट है ?

नही अन्नदाता ।

'तो फिर राजमाता के भवन मे ही तुम निवास करोगी । जब उचित जान पडेगा तुम्हारे जाने की हम स्वय व्यवस्था करेंगे तुम्हारे उपकार को हम आजीवन नही भूलेंगे—तुम्हारे आत्मसुख के बलिदान की कथा स्मरणीय रहेगी ।'

कैसा उपकार अन्नदाता ? कैसी कथा ? मैं तो साधारण दासी हूँ महाराज । राजमाता की अनुचरी । उनकी कृपा की आकाक्षी । तो फिर तुम्हारा निणय क्या रहा ? महाराज ने प्रश्न किया ।

आपकी आज्ञा शिरोधाय है महाराज । भारमली ने नमन कर माग छाड दिया ।

दिवस रात्रि सप्ताह मास और फिर वर्ष। समय का प्रत्यावर्तन। किन्तु व्यस्तता ही व्यस्तता। युद्धों में व्यस्तता। मालवा के सुलतान मुहम्मद खिलजी के पुन पुन आक्रमण और उसकी पराजय। फिर गुजरात के कुतुबुद्दीन बादशाह के साथ सम्मिलित आक्रमण उसमें भी कुम्भा की विजय। विषमतम परिस्थितियाँ। समय का नितांत अभाव किन्तु कार्यों की विविधता और सघनता। नागौर विजय नागसेन दुर्ग पर पुन अधिकार आदि आदि।

सम्पूर्ण मेदपाट ही नही उत्तरी भारत में आर्यावर्त के निखिल नीलाकाश में देदीप्यमान नक्षत्र की भांति प्रकाशित है कुम्भा के यश की कीर्ति का आलोक। अवतारी पुरुष हैं महाराज। दिव्य पुरुष। सारी प्रजा धन्य धन्य पुकार उठी। जीवन का अर्थ क्या इतना ही है? मेवाड की सीमाओं की रक्षा मेवाड साम्राज्य को सुदृढ करने के लिए सेना का पुनर्गठन दुर्गों का निर्माण। परिस्थितियाँ अनुकूल होती चली गई। अपने सांस्कृतिक आग्रहों के कारण शिक्षा का प्रचार हुआ। पाठशालाएँ वेद अध्ययन केन्द्र उनके लिए अनुदान देव मन्दिरों के लिए भूमिदान लोकोपकारी कार्यों का प्रसार और कला को प्रश्रय मिला। शैव वैष्णव शाक्त और शाल सभी को पूजा की स्वतन्त्रता विकास का समान अवसर। मालवा और गुजरात के साथ निरन्तर युद्धों के साथ साथ अद्भुत निर्माण कार्य कला सृजन और साहित्य रचना।

चित्तौड दुर्ग कीर्तिस्तम्भ का लक्ष्य का कार्य चल रहा है। वास्तुशिल्पी सूत्रधार जेता उसके पुत्र नापा और पूजा अत्यधिक व्यस्त हैं। बीच बीच में महाराणा स्वयं अवलोकन करते है। कुम्भ स्वामी के विष्णु मन्दिर और शृंगार चवरी का निर्माण समाप्ति पर है। चैत्र कृष्णा प्रतिपदा को देव प्रतिमा की प्रतिष्ठा है। यज्ञ कथा और ब्रह्मभोज की आयोजना है। उधर आम्मि पुत्र कवि महेश ने कीर्ति स्तम्भ की प्रशस्ति की रचना पूरी करदी है। महाराणा कुम्भा पुरस्कृत करेंगे। स्वर्ण मण्डित चवर छत्र और दो हाथी पुरस्कार स्वरूप मिलेंगे। इधर कुम्भा प्राचीन हिन्दू संस्कृति कला स्थापना को प्रश्रय देते हैं उधर श्रेष्ठिवर जैन संस्कृति का संवर्धन कर रहे हैं चित्तौड ही नही देलवाडा नागदा पिंडवाडा और अचलगढ़ आदि जैन संस्कृति के केन्द्रों के रूप में विकसित हो चुके हैं रणकपुर में धारणक श्रेष्ठी द्वारा विशाल जैन मन्दिर का निर्माण किया जा रहा है।

सन्ध्या सघन हो चली थी। अस्ताचलगामी सूर्य की किरणें अब महाराणा के भवन और गवाक्षों का अन्तिम स्पर्श पाकर तिरोहित होती चली जा रही थीं। उनके उद्यान में वृक्षों की पंक्तिबद्ध छाया हरितिमामयी झाडियों पर पड रही थी उनके बीच चमक उठते थे यत्र तत्र शलपुष्पी के फूल। अमलतास इठला रहे थे। महाराणा कुम्भा बापी के निकट मरमरमरी प्रस्तर पीठ पर जा बैठे। दूर अरावली पर्वतमाला। ग्रामों का घना जंगल सब छाया चित्र से लगे। सुदूर पश्चिम में सान्ध्य तारा दमत-दमत उग आया।

रानी अपूवदेवी कब आ गई महाराणा नही जान पाए। स्वामी सम्बाधन पर वे तनिक चौके।

'रानी तुम कब आ गई ?

आज सध्या उपासना नही हागी ? सोचा स्वामी को स्मरण कराऊँ। भवन म खोजा। मालिनी न कहा—महाराज उद्यान म है।

हाँ मन हुआ यहाँ चला आया। फिर यह उपासना का ही तो अग है। दखा प्रिय। इस नीरवता म भी कैसा सगीत समाहित है। यह वृक्ष पुष्प लतिकाएँ कभी को मद वायुवग स प्रवहमान लहरिया किसी मधुर सगिनी से कम है क्या ? प्रकृति की उपासना म नीराजन करती हुई। है न देवी ?'

फिर वही दवी ? हम दवी कहाँ ? मानवी हैं महाराज। सगीत की बात आपने कही तो स्मरण हो आया' सुना है आपकी सगीतराज ग्र थ की रचना सम्पूण हुई। सगीत मीमासा और सूड प्रब ध के पश्चात्। सगीतराज का प्रणयन ।

हाँ प्रिय सगीत राज पूण हुआ। गीत गोवि द पर रसिक प्रिया टीका और आरम्भ करूगा। कि तु तुम्हे किसन कहा ?

मैंने स्वप्न मे देखा। आप ग्रथ समाप्त कर आन दातिरेक से स्वय वीणा-वादन कर रहे हैं। और मैं स मुख बैठी हूँ। कबसे आपने वीणा वादन नही किया स्वामी ?

'स्मरण नही। कि तु सृजन के क्षणो म जो वीणा बजती रही है वह जैसे अ तर के तारो को झनझनाती रही है। फिर मेरे वीणा वादन का अथ ?'

अथ है स्वामी। उस अनुभूत आन द को हमने साथ साथ अनुभव किया है। चारा दिशाओ मे जैसे उस आन द की लहरियाँ प्रवाहित हो उठती हैं। श्रवण थकते ही नही। समय जैसे थम जाता है।

तुमने कभी सकेत नही किया। वह अनुभव हम पुन करत।

सकेत कसे करती ? जब भी देखा आपको चि तन म दखा अथवा किसी ग्रथ रचना म सलग्न पाया।

हाँ प्रिये। सगीत राज की रचना एक दि य अनुभव है। सोलह सहस्र श्लोको मे पच कोषो मे विभाजित विशाल कलेवर कल यह ग्रथ मै स्वय विस्मित हू विस्मित और चमत्कृत। कस यह सम्भव हुआ ?

तभी मालिनी ने निकट स्थापित दीपाधारो पर दीप जला दिय। फिर स्वामी और स्वामिनी को साध्य प्रणाम किया। प्रतीक्षा म क्षण भर ठहरी।

'ज्यष्ठ कुमार कहाँ है मालिनी ? रानी अपूवदेवी ने पूछा ।

सनानायक दिग्विजय के साथ अश्वारोहण से अभी अभी लौटे हैं स्वामिनी ।
मालिनी न उत्तर दिया ।

और अनुज राजमल

राजमाता के कक्ष म हैं ।

मालिनी स्वामिनी का सकेत समझकर चलदी ।

पधारें महाराज रात्रि आरम्भ हो चुकी ।

चलो । महाराणा उठ खड़े हुए ।

हमारे कक्ष म ? रानी अपूवदवी के स्वर म प्राथना अनुनय और आग्रह
एक साथ ध्वनित हुए ।

हाँ तुम्हारे कक्ष म । अब हम वीणावादन करेंगे । तुम सुनोगी न ।

महाराज । रानी आल्हादित हो उठी ।

ग्यारह

महाराज क [illegible] म पधार रहे हैं । लेकिन [illegible] म गोरी रानी को सूचना था । रानी स्वारूपदेवी क मन में कौतूहल जगा । महाराज उनके कक्ष म आज फिर पधार रह हैं । कम ही आ पाते थ । रात्रि भर यहीं रह थ पहले तो ऐसा नहीं था । गोरी रानी अपनी विवशता पर दुःखी थी । [illegible] होने पर भी युवराज उत्पन्न करने का श्रेय विधाता ने [illegible] रानी अपूवदेवी को प्रदान किया । बस ऐसा [illegible] विचलित हो [illegible] भर भी [illegible] हुई किन्तु उनके पधारे । [illegible] कुमार का [illegible] है गोरी रानी ।

महाराणा [illegible] पहुँचे । गोरी रानी न [illegible] दिया ।

[illegible] महाराणा ने प्रश्न किया ।

[illegible] के साथ । किन्तु आज [illegible] महाराज [illegible] कुमार [illegible] हैं ही । [illegible] के स्वर म [illegible] कुमार की [illegible]

[illegible] दिया गोरी र [illegible] ।

[illegible] रानी हो [illegible] । [illegible] रानी से कोई [illegible] है क्या ? [illegible] है वही [illegible]

[illegible] है [illegible] सुखद और [illegible] जो [illegible]

[illegible] है ।

कुम्भा ने एक बार गौडी रानी की ग्रोर देखा दीघ ग्रौर पुष्ट दहयाष्टि। प्रशस्त वर्ण। सु दर मुख पर काल कजरारे नेत्र। ग्रावपक कि तु मान भरे। रानी तनी खडी रही।

ग्र तर यही है कि तुम ज्यष्ठी हो। प्रथम मैंने तुम्हे जय किया है। तथापि तुम सब पर समान रूप से गव ह मुझे।

गव हो सकता है स्वामी ? कि तु समान रूप से सबसे एक सा सुख पाना कुछ ग्रौर बात होती है। मुझे स्मरण है महाराज कुमार के नामकरण उत्सव मे प्रथम ग्रासन मुझे नही—बहन ग्रपूव को दिया गया था। मेरा क्रम उनके पश्चात् था। फिर ग्राप भी ग्रधिक समय उ हे दत हैं।

महाराज तनिक हस। वे समझ गए गौडी रानी के मन मे ईर्ष्या का भाव है। ईर्ष्या ग्रथवा दु ख जननी का कसा समय चुना था रानी ने ? ग्रपूवदबी के प्रति गौडी रानी का यह भाव उ हे ग्रच्छा नही लगा। तक की ग्रपक्षा सौहार्द्र रखना ही उचित है।

उस ग्रासन का कोई ग्रथ नही था रानी। तुम्हारा वास्तविक ग्रासन तो हमारे हृदय मे है प्रिय ? महाराणा ने कहा।

ग्राप राजपुरुष है मेवाड के स्वामी पति हो नही महाराज ? सब तरह से ग्रधिकारी। फिर हमारे समाज ने पुरुष को बहुपत्नी का ग्रधिकार प्रदान किया है। ग्रापको भी वही ग्रधिकार है। हम तो परिनया मात्र है। ग्रापकी कृपा पर ग्राश्रित। हृदयासन का ग्रधिकार मात्र प्रवचना लगता है। —गौडी रानी ने उत्तर मे कहना चाहा कि तु कहा नही।

ग्रापको पाकर मैं ध य हू स्वामी। गौडी रानी ने किसी प्रकार कहा। स्वय उ हे ग्रपना यह कथन हास्यास्पद लगा।

पुन हस पड महाराज। हम निश्चि त हुए कहकर गौडी रानी के कक्ष से बाहर ग्रा गए। गौडी रानी के साथ स्वय को स तुलित बनाये रखेंगे कुम्भा।

इधर महाराणा के मन मे एक नया विचार ज म ले रहा है। चित्तौड दुग से भी ग्रधिक सुरक्षित दुग के निर्माण का। स्थान श्री एकलिंग भगवान की कैलाशपुरी के निकट हो। चयन कर लिया है महाराणा ने। वे निरीक्षण कर स्वय लौटे हैं। बनास के तट पर ग्राम्र पलाश ग्रौर खजूर के वृक्षो से ग्राच्छादित ग्ररावली का सर्वोच्च शिखर। बबूल बेर ग्रौर एरज की घनी झाडियाँ—बीच बीच म शीश उठाये ग्ररुण फलो से लदी कटीली नागफनी। इससे ग्रधिक सु दर ग्रौर सुरक्षित स्थान ग्रौर कोई नही।

बुलावा पाकर सूत्रधार मण्डन म त्रणा कक्ष मे ग्राए। विनत प्रणाम किया। साथ महामात्य थे।

बैठिए महामात्य बधु मण्डन। महाराणा ने प्रणाम स्वीकारा।

एक नये दुग का निर्माण काय आपको सौंपना चाहते हैं सूत्रधारजी कुम्भलगढ़ मे कुम्भलमेरु का। तीन द्वारो से सम्पन्न प्राचीरो पर रक्षागार। राजप्रासाद के अतिरिक्त कर शाला वेदी यज्ञ शाला देवालय और जलाशय। शुभ मुहूत मे शीघ्र काय आरम्भ कीजिए। धन की समुचित व्यवस्था करेंगे महामात्य। राज मुद्रा अकित कर आदेश दो। कृताथ हूँ महाराज। सूत्रधार मण्डन ने कहा।

भगवान एकलिंग के जीर्णोद्धार और गभ मण्डप के नव निर्माण का काय कैसा चल रहा है ? महाराणा न जिज्ञासा साधी।

वह काय लगभग पूरा होने को है। जलाशय के निकट विष्णु मन्दिर की आधार शिला रख दी गई है। सुलतान द्वारा क्षतिग्रस्त सभी देवालय यथापूव निर्मित कर दिए गए हैं।

ठीक है नवीन गभ मण्डप म ध्वज दण्ड स्थापना देव प्रतिष्ठा और यज्ञ के लिए मठाधीश कुशिक सोम प्रभु ने हमे आमन्त्रित किया है। समय पर हम स्वय आयेंगे। हमारी ओर से आप उन्हें आश्वस्त कर दें।

जैसी स्वामी की आज्ञा।' विदा लूँ महाराज ? सूत्रधार मण्डन उठ खडे हुये।

अवश्य।

सूत्रधार मण्डन मन्त्रणा कक्ष से बाहर आ गये। महामात्य बैठे रहे। उसी क्षण कु वर चूण्डा आ पहुँचे।

आपने स्मरण किया था महाराज ? कु वर चूण्डा न पूछा।

हाँ कु वर जी। आपसे आवश्यक मन्त्रणा करनी है।

आज्ञा महाराज।

प्रथम तो यह दादी माँ का अभिलाषा है मण्डोर राव जोधा को लौटा दिया जाये। अपने किये का दण्ड राव रणमल पा चुके। राव जोधा को वे निर्दोष मानती है।"

आपका निणय क्या है ?

यही कि मण्डोर हम यो ही नही लौटायेंगे—राव जोधा स्वय जाकर अधिकार ले अपना सामरिक कौशल दिखाके। हम बाधा नही बनेंगे। न अतिरिक्त सेना भेजेंगे। बस कुतल और झाला बीदा सरदार अवरोध न कर मण्डोर का प्रबन्ध जोधा को सौंप देंगे।"

धन्य है महाराज। धन्य है आपकी उदारता। फिर इस सदाशयता से मडोर और मेवाड के सम्बन्ध सुधरेंगे। आपके गौरव की रक्षा होगी।'

'दूसरी समस्या क्षेमकर्ण की है कु वर जी। हमने सादडी की जागीर देकर चाहा वह हमारी शत्रुता भुला देंगे। मित्र की तरह आचरण करेंगे। किन्तु भगवान एकलिंग जी ने उन्ह सद्बुद्धि नही दी—वे निरन्तर शत्रुता का भाव रखते रहे हैं मेदपाट के शत्रुओ का न केवल समर्थन करते रहे हैं—मालवा के सुल्तान महमूद खिलजी से जा मिले है। हमारे पास प्रमाण ह हमारे विरुद्ध भडकाने और आक्रमण करने म उनका ही हाथ था।

वह मैं जानता हूँ महाराज कु वर जी बोले।

और अब सुलतान हमारे विरुद्ध शस्त्र नही उठायेंगे। आपके शौर्य और मेवाड के सैनिकों की वीरता के व कायिल हो चुके हैं।

नही कु वरजी। पुरस्कार मे रामपुरा मानपुरा की जागीर सुलतान से पाकर भी वे सन्तुष्ट नही हुए। चित्तौड का राजसिंहासन पाने की लालसा उनकी पुन प्रबल हुई। वे गुजरात पहुचे। गुजरात के सुलतान कुतुबुद्दीन को हमारे विरुद्ध उकसाया है—अब गुजरात और मालवा के सुलतान दोनो ने अहमदाबाद के निकट चाम्पानेर मे सधि कर ली। उनकी सम्मिलित सेनाए मेवाड की ओर कूच कर चुकी हैं। किन्तु हम भयभीत नही हैं।

इस बार भी शत्रु की पराजय होगी। इतिहास साक्षी रहेगा मेवाड के शौर्य की इस गाथा का। आपकी निरन्तर विजय का। महामात्य सहणपाल ने उत्साह भरे स्वर मे कहा।

हाँ महामात्य। सेनाधिपति को तुरन्त सचेत कीजिए। युद्धो की दारुण परिणतियों को हमने देखा ह। निर्दोष सनिकों की बलि और रक्तपात हमे नही सुहाता किन्तु अपनी अपनी दुर्बलताए हैं सत्ता की लालुपताए है मिथ्या महत्त्वाकाक्षाए हैं। यदि युद्ध थोपे जाते हैं तो हम वीरोचित कर्म करेंगे। विवश होकर। एक विजयो माद और सही। कुम्भा ओजपूर्ण वाणी मे बोले। अश्वसेना गज सेना और पदातिक सभी सावधान किए जायें। प्रात ही प्रति आक्रमण हो।

भयानक युद्ध हुआ। माडल और फिर चित्तौड गुजरात और मालवा की सयुक्त सेनाओ को कौए की तरह चीरते हुए मेवाडी वीर फलते चले गए। गजो की चीत्कार और अश्वो की हिनहिनाहट म सैनिको की चीखे नभ मण्डल म गूंजती रही। शत्रु सेनायें घेरेव दी नष्ट होते ही अपनी अपनी राजधानियो की ओर पराजित हो लौट चली। विजयश्री ने पुन महाराणा को ही वरण किया।

पुन विजयोत्सव। चित्तौड दुर्ग पर पुन दीपमाला एक आलोक। विजय का चित्तौड के नागरिको म हर्ष का अतिरेक। कल विजयादशमी है। महाराणा की राजकीय शोभायात्रा नगर म निकलेगी। वे गज पर स्वय विराजेंगे। चवर छत्रधारी

वेत्र धारक सेनानायक साथ चलेगे । अश्वो पर आरूढ रहगे महामात्य और सेनाधिपति । गुरुदेव तिल्हभट्ट विशेष पूजा और शिवाचन कर महाराणा को आशीष देंगे । पूजा मे सम्पूण राजकुल उपस्थित रहगा । विगत दिनो मे अनेक अशुभ घटनाएँ घटित हुई है । कि तु महाराज विचलित नही हुए है । अपना कम करत रह । वीरोचित कम । साधु साधु एक स्वर से प्रजा पुकार रही ह । साहस धैय बुद्धिमता विद्वता और उदारता के मूर्तिम त आदश ह महाराज । उनके इस सौभाग्य पर—किसे ईर्ष्या न होगी ?

यह पृथ्वी कितनी विराट है ? इस सृष्टि मे क्या क्या नही घटित हाता ? कभी शोक कभी आन द कभी युद्ध कभी शांति । फिर राजा की नाना भूमिकाएँ ? कला की उपासना सगीत साहित्य रचना और कविता ? कोई ईर्ष्यातुर कोई समपण मे ही लीन ? आत्मीयो के भिन्न भिन्न रूप और उनकी अभि यक्तियाँ प्रेम आसक्ति घणा ? शाप और वरदान ? हाँ भगवान एकलिंग जी का वरदान ही तो मुझे मिला है । इतने द्वन्द्वो के बीच भी द्वन्द्वातीत निश्चि त हूँ मैं । विचारो म लीन हैं महाराणा । आखो म जल भर आया है । अदभुत श्रद्धा का भाव । एक अहोभाव । महाराणा कुम्भा पूर्वाभिमुख होकर प्रणाम कर रहे हैं अपने आराध्य को । कल्पना मे बार बार वही छवि देख रह हैं । आऊँगा प्रभु ठीक समय पर आऊँगा । प्रत्यक्ष दशन करू गा । मेरा मान भग न हो । व्रत पूरे हो । सकल्प पूरे हो । धर्माचरण करू । गुरुजन प्रसन्न रहे । प्रजाजन की सेवा से विमुख न रहूँ । सर्वे भव तु सुखना सर्वे भव तु निरामता । प्राथना रत है सध्या उपासना म महाराज । नीरव आकाश मे साध्य तारा उग आया है ।

राजभवन के ऊपरी तले से नीचे उतर आए है कुम्भा । रानी अपूर्वदेवी के कक्ष की ओर उनके चरण बढे जा रहे हैं ।

स्वामी आप । आप ही की कामना कर रही थी मन ही मन महाराज । रानी अपूर्वादेवी—स्वय को सदा उदघाटित कर दती है स्वामी के सामन ।

आज आश्विन शुक्ला नवमी है स्वामी । एकासन हूँ । आशीर्वाद कीजिए । स्वय को कुम्भा के चरणो म प्रस्तुत कर रही हैं रानी । परिचारिका न जाने कब जल ले आई है । थाल मे शखपुष्पी के रक्तिम फूल कितनी चतुर है मालिनी ? विस्मत मे पड जाते हैं महाराणा । उसके पाद प्रक्षालन कर अपने स्वण खचित पट से पोंछ रही है अपूवदेवी । फिर शख पुष्पी की पुष्पाजलो अर्पित कर रही हैं । महाराज पद त्राण उतार कर मुग्ध भाव से देखते खडे हैं ।

तुम्हारी मालिनी अन्तर्यामी है क्या ? महाराणा सस्मित पूछते हैं ।

नही ता । वह तो आप ही हैं स्वामी । मैंने कल्पना की आप अब पधारे ।

महाराज आल्हादित हो उठे । मुख पर अनुराग उमड पडा । आप एकासन ... हो प्रिये ? प्रश्न किया ।

हाँ स्वामी ।

तो भीतर चलो । हमारी हस्तिमस्तक वीणा मगवाओ । उस दिन तुम वीणा वादन सुनना चाहती थी न । आज हम स्वय सुनाना चाहते है । और कुछ चाहती हो तो कहो ?

कुछ नही स्वामी । केवल आपकी प्रीति । अनुकम्पा । वही मेरा अभीष्ट है ।

क्षरण ?"

सत्य ही स्वामी । मेरी याचना अब और क्या होगी ? राजप्रासाद का वैभव सम्मान सब कुछ मिल चुका आपकी प्रीति मिली । एक नारी को और क्या चाहिए ? वह भी राजगृहिणी का ।

बारह

बहुत प्रसन्न है महाराणा कुम्भा । जयदेव के गीत गोविन्द की सस्कृत टीका पूर्ण कर उठे है । पूर्ण पुरुष श्री कृष्ण । आनन्द प्रेमिका श्री राधा । परमानन्द मे लीन होने की परम आनन्दमयी स्थिति । प्रभु की आल्हादिनी शक्ति राधा ही तो है । आनन्द की ओर लौटना ही मुक्ति है । जीव उसी परमतत्व से प्रणयबद्ध होना चाहता है । सत चित और आनन्द जीव का चैतन्य स्वरूप वही तो हैं । ब्रह्म सम्बन्ध भी वही है । राजकवि श्रेष्ठ कन्ह व्यास कवि महेश महाराणा के निज भवन मे आमन्त्रित हैं । काव्य चर्चा के साथ साथ भक्ति प्रेममयी भक्ति की चर्चा चल रही है ।

कुम्भा का व्यक्तित्व अदभुत लगता है कवि श्रेष्ठ कन्हकारा को । एक ओर 'पत्रेण रक्षित राष्ट्रे' स्वदेश की सुरक्षा मे अग्रणी राष्ट्रधम के प्रवतक भगवान एकलिंग के उपासक उनके रुद्ररूप और फिर समरागण म माँ चण्डी भवानी के आराधक दूसरी ओर परम वैष्णव विष्णु पूजक भी माँ सरस्वती की आराधना मे भी लीन । युद्धो मे मिली विजय राजकीय वैभव राजसत्ता साथ साथ दाम्पत्य के समस्त भोगो मे आसक्त किन्तु विरक्त थी । कला साधना के आग्रही कला ममज्ञ । यह कैसा रहस्य है ? वैसे मेदपाट के गौरव परम श्रेष्ठ महाराणा कुम्भा के लिए यह सब कोई बडी बात भी नही । राजा स्वय ईश्वर का अवतार होता है सुना है । कुम्भा के व्यक्तित्व मे सच ही इस कथन के सत्य की प्रतीति होती है । फिर स्वामी

के विचारों को खूब समझते हैं कवि श्रेष्ठ। उनके रसावेश को जानते हैं। बाणभट्ट कृत चण्डी शतक के व्याख्याकार, कामराज रतिसार शतक के रचनाकार। कितना विशाल प्रणयन। साधारण कर्म है ही नहीं।

कवि महेश ने कहा—'सुना है महाराज गीत गोविन्द की मेवाडी टीका की रचना का विचार कर रहे हैं?

हाँ हमने यह भी निश्चय किया है। चारण विमलदान का अनुरोध है मेवाडी भाषा के प्रयोग का। हमने उसे स्वीकार कर लिया है।' कुम्भा ने कहा।

फिर हम अपनी भाषा के प्रति उदासीन भी नहीं हैं।

राजभाषा के रूप में भी वह प्रयुक्त होनी चाहिए। परवानों शासकों और राज्यादेशों को जन भाषा मेवाडी में जारी करने के हमने आदेश दिए हैं। राजमुद्रा के रूप में भाले का चिन्ह अंकित रहेगा।'

यह सर्वथा उचित रहेगा अन्नदाता। चारण विमलदान प्रसन्न हैं।

एक अनुरोध था महाराज। आज्ञा है तो निवेदन किया जाए।

आपको सब कुछ कहने की अनुमति है। आपका प्रत्येक वचन सार्थक ही होता है। कुम्भा ने उत्तर दिया।

'राज्य की विद्वत् परिषद का एक प्रसाद है महाराज।'

किस प्रसंग में?

प्रसंग आप ही से सम्बन्धित है महाराज।"

हमसे सम्बन्धित। कवि श्रेष्ठ शीघ्र कहें।

विद्वत परिषद ने निर्णय किया है। अभिनवभर्ताचार्य की उपाधि से आपको विभूषित करने का। बसन्त पंचमी को महा सरस्वती पूजन एवं आपके सम्मान में सारस्वत समारोह की आयोजना है। यदि स्वीकृति प्रदान करें महाराज, तैयारियाँ आरम्भ की जायें।

किन्तु यह उपाधि किस उपलक्ष में?

साहित्य कला संस्कृति और नाट्य कर्म में आपके योगदान, संरक्षण और अभिवृद्धि के लिए।

इसकी आवश्यकता?

आवश्यकता आपको नहीं किन्तु विद्वत परिषद को है महाराज। मेवाड़ की प्रजा को है। महाराज का कृत्य अनुकरणीय है। इस क्षेत्र में प्रेरणा का स्रोत एवं आदर्श हैं आप।

यदि आप सब विद्वत परिषद और मेवाड़ की प्रजा इस प्रकार सोचती है

हमारे विषय मे हम निश्चय ही स्वय को सौभाग्यशाली मानते हैं। फिर प्रशसा किसे अच्छी नही लगती ? महाराज न किंचित हँसते हुए कहा।

फिर महाराज का आदेश ?'

हम अपने विचार दे चुके। फिर जिस परिस्थिति मे भगवान एकलिंग डालेंगे हमे स्वीकाय होगी। किन्तु आडम्बर न हो।

हमारा लक्ष्य वृहतर है महाराज कोई आडम्बर नही होगा।

किन्तु सभा य अतिथियो की अभ्यथना करना हमारा भी कत्तव्य होगा। औपचारिकता का निर्वाह होना ही चाहिए।'

आपके आदेश का अनुपालन होगा।

किन्तु मन्त्रि परिषद के परामश से महामात्य उसका प्रबन्ध करेंगे।"

महाराज की जसी आज्ञा।'

महाराणा आसन से उठे। अन्य सभी उनके साथ ही उठ खडे हुए। वे बाहर निकले। प्रसन्न मन स राज्य कवि कन्ह व्यास कवि महेश तथा चारण विमलदान आदि। सभा समाप्त हो गई।

कीर्ति स्तम्भ का निर्माण काय समाप्त हुआ। वास्तु और तक्ष्य कला का अद्भुत सगम नौ मन्जिला विशालकाय स्तम्भ। बारह फुट ऊँचे तथा बयालीस फुट चौडे आयताकार चतुष्कोणीय वलय पर आधारित। प्रथम तल पर चतुष्युगीन जनवन द्वितीय तल पर अद्ध नारीश्वर दृष्टि तृतीय तल पर विरेचो जयन्त नारायण और चन्द्रा की पितामह की सुन्दर प्रतिमाएँ तथा चतुथ तल पर देवी प्रतिमाओ की बहुलता। अन्य तीन तलो पर भी लक्ष्मी नारायण उमा महेश्वर ब्रह्मा-सावित्री सरस्वती गजलक्ष्मी भगवान बुद्ध सहित विष्णु के दशावतारो की विशाल एव लघु प्रतिमाएँ आठवें तल पर स्तम्भो पर टिकी मुक्ताकाशी अट्टालिका अन्तिम तल पर देव प्रतिमाओ के साथ साथ मेदपाट के लोक जीवन के उत्कीरण दृश्य। विजय स्तम्भ पर प्रशस्ति का उत्कीरण करने का काय चल रहा है—महाराणा कुम्भा के मालवा-विजय की स्मृति ही नही—उनके देवाराधन रूप का जीवन्त मूर्तिमान साक्षी। मेवाड के शिल्पियों मूर्तिकारो के कौशल का उत्कृष्ट प्रमाण विजय स्तम्भ।

उधर कुम्भल दुग एव राजप्रासाद के निर्माण और भगवान श्री एकलिंग के गभ मन्दिर के नवीनीकरण तथा तोरणो से अलकृत किये जाने का निर्माण काय भी चल रहा है। नूतन ध्वज दण्ड और कलश स्थापित किए जायेंगे। वास्तु स्थापत्य और मूर्ति शिल्प के अनूठे रूपाकारो स्वरूप मे की सृष्टि महाराणा का अभीष्ट है।

वैष्णव और शव देवालय ही नही भव्य कलाकर जिनालयो और देव गृहो का निर्माण भी निरन्तर ही गतिशील है—रणकपुर का चतुमु ख आदिनाथ मन्दिर

चित्तौड दुर्ग पर महाराणा के कोषाध्यक्ष वलाक द्वारा शान्तिनाथ मंदिर पिंडवाडा बसन्तगढ सजाहरी नागरा तथा देलवाडा मे यवनो द्वारा क्षतिग्रस्त पुराने जैन मंदिरो का जीर्णोद्धार एव नये मंदिरो का निमाण उसकी धार्मिक सहिष्णुता एव सर्वधर्म समभाव महाराणा की बुद्धि के परिचायक हैं।

मेदपाट विद्वत परिषद द्वारा आयोजित महासरस्वती पूजा और वसन्तोत्सव सम्पन्न हुए। पूजा अर्चना के साथ-साथ सगीत सध्या और नृत्य का भी समायोजन हुआ। महाराणा कुम्भा 'अभिनवकर्ताचार्य की उपाधि से अलकृत किए गये। सास्कृतिक क्रिया कलापो का विस्तार होता चला गया। यशस्वी साहित्य सृजन का कार्य आरम्भ हुआ। सस्कृत मेवाडी तथा प्राकृत मे जैन तथा वैष्णव रचनाकारो ने ग्रन्थो का प्रणयन किया। जैनाचार्यो मे सोम सुन्दर सूरी, मुनि सुन्दर, मुनि सामदेव, जय शेखर सूरी आचार्य द्वारा सकल कीर्ति एव भवन कीर्ति रचनायें लिखी।

महाराज कुम्भा मे शौर्य और युद्ध कौशल ही नही वे प्रबल कला आग्रही एव साहित्यानुरागी है। जिधर जाते हैं सम्मान पाते है महाराज। मेदपाट की सम्पूर्ण प्रजा गुहिल राजवश और राजकुल मे श्रेष्ठता प्रतिपादित की है कुम्भा ने। मुग्ध है गौडी रानी, रानी अपूर्वदेवी तथा अन्य रानिया।

राजगुरु तिल्हभट्ट से भेट करने पधारे है महाराज।

राजगुरु ने यथोचित आसन देकर महाराणा कुम्भा की अभ्यर्थना की। 'आपने क्या कष्ट किया? मुझे बुला भेजते महाराज। राजगुरु ने सहजता से कहा।

'प्रत्येक बार आपको ही बुलाया करें क्या यह अशोभनीय नही है?

'नही महाराज। बिल्कुल अशोभनीय नही है। प्रजा की रक्षा सुख सुविधा का सम्पूर्ण दायित्व आप पर है। उत्तरदायित्व गुरुतर हो तो समय और भी चाहिए। अत एक राजा के लिए उचित यही है कि आवश्यकतानुसार परामर्श के लिए किसी को भी बुला भेजे।

राजा का दायित्व गुरुतर होता है मैं समझ पाया। किन्तु गुरुदेव। आप जो चिरतन की खोज मे लगे हैं आध्यात्म की चेतना मे आकठ डूबे हुए उसी आध्यात्म की चेतना का सचार प्रत्येक मनुष्य मे भी हो आपकी यह आकाक्षा, मानव कल्याण की अभिलाषा राजा के कार्य से भी गुरुतर हुआ। अतीन्द्रिय सृष्टा के रूप मे आपकी खोज लेकिन क्रिया कलापो से कही श्रेष्ठ होती है।

'आध्यात्म के द्वारा मुक्ति की खोज की जा सकती है राजन्—किन्तु उसकी प्राप्ति के लिए भौतिक पदो की भी आवश्यकता है। उनकी उपलब्धि और उसके साधनो की खोज का दायित्व अन्तत राजा पर ही होता है। इसीलिए कर्म की महत्ता

है। राजधम वही है। कठिनाई यही ह कि कम मे भी आसक्ति का भाव रहता है। वही बाधा है। आसक्ति और मैं कता हूँ इस अहम की भावना न रहे तो काय और धम भिन्न नहीं हैं।

' मेरे सकल्प निष्काम हो यही आशीर्वाद दीजिए आचाय प्रवर कुम्भा ने विनीत होते हुए कहा।

आप सेवाव्रतधारी हैं यह मैं जानता हूँ। उदारमना और निश्चल। सकल्प निष्काम स्वय होगे।

राजा के लिए उदारता की बात समझ मे आती है गुरुदव, किन्तु निश्छल की व्याख्या दुश्वर है, राजकाय मे क्या सदा निश्छल रहा जा सकता है। राजनीति कहती है यदि कोई छल करे तुम भी छल करो। अ यथा राजाधिपति के पद के लिए अयोग्य सिद्ध हो सकत हो।

' छल अपने लिए नहीं, समष्टि के सुख के लिए, सभी की रक्षा के निमित्त। फिर अपने कत्तव्य के पालन के लिए वह भी अपने प्रति किये हुए छल के प्रत्युत्तर मे छल नहीं कौशल कहा जायेगा। किन्तु आचरण नीति विरुद्ध न हो। नीति विहीन राजनीति व्याप्त है।' कहते कहत तिल्हभट्ट कुछ गम्भीर हो गये।

नीति का अथ ?' महाराणा ने पूछा।

नीति का यहाँ अथ है आस्था।

आस्था का स्थान ?

हृदय आस्था का स्थान है। ओज है कथा म स्थित शरीर का गुण। दोनो के चेतना म प्रवेश कर जाने पर मनुष्य की ऊध्व-मात्र का आरम्भ होता है। वही ह मानवीय जीवन का लक्ष्य। समान रूप से सभी क लिए।

राजगुरु तिल्हभट्ट ने क्षणभर के लिए अपने नेत्र मूँद लिए। महाराणा सकेत समझकर उठकर जाने को उद्यत हुए।

आगे का प्रयोजन महाराज ? राजगुरु ने आखें खोलकर फिर पूछा।

वह पूरा हुआ गुरुदेव ? महाराज ने उत्तर म कहा।

महाराणा बाहर आये। पीछे पीछे गुरुदेव तिल्हभट्ट। सभा कक्ष की ओर चल दिए।

शीघ्र ही तुरही बजी।

सावधान। महाराजाधिराज सभा कक्ष म पधार रहे हैं। वद धारवा ने उच्च स्वर म पुकार कर कहा।

तेरह

उन्नत ललाट पर ऊँची पगडी तीक्ष्ण बधती आखें युवकोचित उत्साह और सदा मुख पर वीरता का भाव कटार और तलवार से सुसज्जित मडोवर का निर्वासित युवराज नवद राठौड और अब महाराणा का सामत ।

शिशिर का प्रभात । आकाश म धु ध सी छाई हुई । दूर अरावली के शिखरो के बीच उदित होते हुए सूय देवता किंचित ठिठके से । चित्तौड दुग क दक्षिण की प्राचीर पर टहल रहा है नवद राठौड । विचारो म डवा हुआ । अपने मे ही तल्लीन । समाचार ही ऐसा था जिसने उसे चिन्तित कर दिया था । चिन्तित और दु खी ।

आप राठौड हैं कुमार औरो की तरह कायर नही । फिर एक अबला का अप-मान और उस पर होने वाले अमानुषिक अत्याचार कोई वीर कैसे सह सकता है । जब वह अबला कोई अ य न हो आपकी वाग्दत्ता और मगेतर रही हो ।' कहते कहते दूत की वाणी कठोर होती चली गई थी । उसकी वृद्ध आखो मे अश्रु छलछला आए थे ।

यह सदेश लाया था जतारण के स्वामी नरसिंह सिधल का एक अनुचर देवदान । नरसिंह सिंधल के सुप्रियादवी पर किए जान वाल अत्याचारो का प्रत्यक्ष-दर्शी उसकी अपनी रानी कभी नवद राठौड की वरदत्ता ।

किसन भेजा है तुम्हे ? नवद ने प्रश्न किया था ।

रुण के साखला सीहड की पुत्री सुप्रियादेवी ने कुमार ।

कि तु उनका अपराध ?

अपराध यही है कि आपसे सगाई तोड देने पर सिधल की परिणीता बन जाने के उपरा त सिधल राज को उ होने मन और वचन से अपना पति माना ही नही । कम अवश्य पत्नी का करती रही कि तु आत्मा चित्तौड मे रही शरीर जैतारण म ।

कुमार नवद का मुख गम्भीर हो गया था । सहसा उसका हाथ कमर म खोसी हुई तलवार की मू ठ का स्पश कर चला था । मैं वह अपमान भूला नही हू देवदान जी । केवल इसलिए कि मैं मडोर के युवराज पद स हटा दिया गया निर्वासित हो गया जो राजसत्ता मुझे मिलने की आशा थी वह नही मिली रुण के साखला न हमारी सगाई तोडली और सिंधल स बलात् ब्याह दिया । मेदपाट म आकर महाराणा के सामत के रूप मे हम उस प्रसग का भुलात रहे । मैंने मन म कभी वितृष्णा उपजन ही नही दी । सोचा था रक्तपात क्यो किया जाए अन्यथा स्थिति कुछ और ही होती ।

मैंने चन्द्रा से विवाह कर परितोष पाना चाहा वह भी महाराज की आज्ञा से कदाचित् हमारे बीच शत्रुता का भाव विलीन हो सके। हम मित्र बन सकें। क्षमा और मानवी भक्त का परस्पर भाव उदय हो सके। और रुण के सांखला की प्रतिष्ठा बनी रहे। फिर यह कैसा अत्याचार है अनीति है। सिंघल की दासी के रूप मे भी चैन से न रहने देने की सुप्रिया की यह कैसी विवशता। फिर नारी पर हाथ उठाना कोई वीरोचित काय भी नही।

क्रोध और प्रतिहिंसा के वेश मे करणीय और अकरणीय का भान किसे रहता है कुमार? वह भी जब आक्रांत पुरुष हो जिसके हाथ मे सत्ता हो बाहुओ मे बल हो और उसका अहम हो। और प्रतिद्वन्द्वी एक स्त्री हो। वह भी अरक्षित प्रतोदित भले ही राजभवन मे रह या किसी दीन की कुटिया म। क्या अ तर पडता है कुमार?

कि तु जो कुछ आपने कहा उसका प्रमाण देवदान जी? और चद्रा को स्वीकारने के पश्चात् फिर यह कैसी दुगति और अकिशलता?

प्रमाण यह पत्र कुमार। मुझे सौगध दिलाई गई थी प्रमाण मागने पर ही यह पत्र आपको दू। वह भी तब जब आपकी रुचि अनुकूल दिखाई दे। अ यथा नही।

'अ यथा?

अ यथा जैतारण लौट जाऊँ। चित्तौड की ओर कभी मुख भी न करू। इसी ऊटनी पर अविलम्ब चल पड़ू।

'पत्र का उत्तर? कुमार ने प्रश्न किया।

कोई उत्तर नही। केवल आपके हाथो मे उसे सौप देन का आदेश मात्र स्वामिनी का। मेरी स्वामिनी क्षत्राणी है कुमार यह स्मरण रहे। ऐसे जघ य अत्याचारो के पश्चात् जीवित रहना क्षत्राणी की आन नही होती। मुझे विश्वास है स्वामिनी की आन जान नही पाएगी। मेरी स्वामिनी मेरी पुत्रीवत है कुमार। कैसी अद्भुत निष्ठा? आपको तो गव होना चाहिए। कहते कहत देवदान का स्वर अवरुद्ध हो चला।

गव तो आज भी मुझे है देवदान जी। गव उस समय भी हुआ था जब चन्द्रा के विवाह म तोरण के समय आपकी स्वामिनी ने अपने पीहर मे मेरी आरती उतारी थी। मेरा वह परिणय अवश्य था कि तु राजाज्ञा मात्र का निर्वाह था। भावी सम्ब धो की कटुता भुलाने की बलवती इच्छा मात्र थी। अ यथा मैं अविवाहित ही रहता।

वही तो सम्पूण पात्रता और उत्पीडन के मूल मे है कुमार। आपकी वर-यात्रा के तुर त बाद यह भावना और उत्पीडन का आरम्भ हुआ था जो आज भी

विद्यमान है । सदेह का पशु मनुष्य का मनुष्य रहने ही नही देता उसे राक्षस बनाकर ही छोडता है ।

मैं समझ गया देवदान जी । मैंने भी एक क्षत्राणी वीर माता की कोख से ज म लिया है । मैं निर्वासित ही सही कि तु राजवश का रक्त मेरी नसो म भी दौड रहा है । निरपराध पर अत्याचारो का मैं मूक साक्षी नही बनूँगा देवदान जी । इसका प्रतिकार करके रहूँगा । आपकी स्वामिनी की आन की रक्षा होगी । आप समय की प्रतीक्षा करें । मैंने आपको वचन दिया ।

देवदान उसी ऊटनी पर पिछली रात्रि को ही जैतारण लौट चुका था ।

कुहासा छँट चला था । सूय देवता ऊपर आकाश मे आ विराजे थे । गुनगुनी धूप बडी सुहावनी लग रही थी । वृक्षो पर पक्षियो का कलरव मुखर हो चला था । नवद राठौड का अश्व निरह ओस म नहाई हरी घास चरने म व्यस्त हो गया था । उसके नथुने बार-बार फडफडा रहे थे ।

दुग के बुज पर सैनिको की गश्त रुक गई थी । प्राचीरें धूप म नहाइ सी खडी थी । मौन और निस्पद । दुग के रक्षक मुक्त हो झपकी ले रहे थे । माग अब भी रिक्त था । निजन । शीघ्र ही नवद राठौड ने अश्व की लगाम थामी । एक छलाग लगाकर उस पर आरूढ हुआ और उस निजनता को भग करते हुए अपने भवन की ओर चल दिया ।

खिन्न और विपन्न स्थिति मे महाराणा एकटक देख रहे हैं नवद राठौड को । सभाकक्ष रिक्त हो चुका है । सभासद जा चुके हैं । महाराज सिंहासन पर पुन बैठ गए हैं ।

अत्य त दु खी और चिन्तित दिखाई दे रहे हैं मडोर के कुमार । क्या चित्तौड का जीवन अब नही सुहाता ? महाराज ने पूछा ।

नही महाराज ऐसी बात नही है । आपका पितातुल्य स्नेह मैंने पाया है । यथाशक्ति मेदपाट की सेवा म स्वय को अर्पित किया है । फिर यहाँ सुख के साधनो की न्यूनता भी नही । तथापि आज मन अत्य त विकल है । क्षमा करें स्वामी वर्षों का धधकता हुआ लावा अ तर म फूट जाना चाहता है । सुख के साधन केवल क्षोभ उत्पन्न करते हैं । क्षोभ और विषाद ।

इस क्षोभ और विषाद का कारण सविस्तार कहो कुमार । तुमने हमे पिता तुल्य कहा है । तुम्हारे कष्ट और दु ख को दूर करना हमारा दायित्व है राजा के नाते । कि तु एक और दायित्व तुमने सौंप दिया हमे पितातुल्य कहकर ।

अविलम्ब ही राठौड कुमार ने देवदान का स देश और सुप्रिया का सारा प्रसग

महाराज को सुनाया। उसके विशाल नत्र भावातिरेक से भीगते चले गए और उस भावातिरेक मे डूबते हुए महाराणा ने अपनी आखें मूद ली। कुछ क्षण वैसे ही मौन बैठे रहे।

हमे विचार करने का अवसर दो कुमार। कहकर महाराणा कुम्भा सभा-कक्ष से बाहर आए।

किंचित चिंतित दिखाई दे रहे है महाराज। उनके मस्तक पर चिन्ता की रेखायें सघन होती जा रही है। महारानी अपूवदेवी के कक्ष म शैया पर लेट हैं कुम्भा। नवद राठौड की सम्पूण व्यथा-कथा व रानी को सुना चुके है। हमारा कत्तव्य क्या है प्रिये अध लेटे पूछ रहे है महाराज।

न्याय करने वाले तो आप हैं स्वामी। आपने सदा नीति का पक्ष लिया ह। क्या करणीय है ? इसका निणय आप ही करेंगे।

'हम जानते हैं प्रिये किन्तु तुम केवल राजमहिषी नही हमारी सहृद हो मित्र भी हो। फिर एक नारी होकर सुप्रिया की पीडा का भी अनुमान होगा तुम्ह। तभी तुमसे हम परामश चाहत हैं। यदि तुम हमारे स्थान पर होती तो क्या करती ?

महाराज के प्रश्न पर क्षण भर के लिए स्तम्भित रह गई रानी। दूसर ही क्षण चेतना गतिशील हुई। गव से मस्तक ऊँचा हुआ। हम आपके स्थान पर होते तो आततार्इ को दण्ड देते। अत्याचार और उत्पीडन से सुप्रिया को तुरन्त मुक्त करते।

'अर्थात् अपहरण कराती प्रिये ?

' नही स्वामी। अपहरण नही। यह अपहरण की परिभाषा मे आता ही नही है। सुप्रिया जैतारण क सिंधल की परिणीता अवश्य है किन्तु तन और मन से उसकी पत्नी नही। वह राठौड कुमार की वागदत्ता थी। उसकी मगतर। उसके हृदय पर किसी और का अधिकार हो ही चुका था। स्वेच्छा से उसन अपने पति का वरण करना चाहा था। किन्तु जैतारण के वैभव को उसन स्वीकारा ही नही। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार जतारण के सिंधल को अगीकार नही कर पाई। मन के समस्त आवेगो को निर्यन्त्रित कर राठौड कुमार के प्रति अपन मूक प्रेम को जीवित बनाए रखा। विरह के अनल मे जलती हुई। उसे शीतलता प्रदान करना मैं अपना परम धम मानती स्वामी।

इसका अथ ?

इसका अथ स्पष्ट है महाराज। वह वसी वरवधु बनी ही नहीं जो अपन पति का स्वागत दे अपने जीवा का सम्पूण निमाल्य राजा कर समर्पिता होती है। नारी के भी मन होता है स्वामी।

किन्तु मन को बदला नहीं जा सकता प्रिय ?

नहीं महाराज । पुरुष कदाचित बदल सके किन्तु नारी मन नहीं बदलता । कदापि नहीं । यदि नारी का मन बदलता है वह किसी दानवी का ही मन होता है नारी का नहीं ।

और शरीर ?

अपमानित होकर नारी शरीर जड होता चला जाता है महाराज । वह जडता यान्त्रिकता से अधिक कुछ भी नहीं । उष्माविहीन । देवी अहिल्या इसी अपमान और आत्मप्रवचना से जड होती चली गई थी स्वामी । उस जडता को भगवान श्री राम ही तोड पाए । ऐसी उदारता उन्ही म हो सकती थी किसी ऋषि म भी नहीं । तथाकथित तपस्वी म भी नहीं ।

किन्तु हम श्री राम नहीं । उनके चरणो की धूल के तुल्य भी नहीं जो किसी अहिल्या का उद्धार कर पाए । महाराज ने किंचित हँसकर कहा ।

अपनी ही तुला पर स्वय का तोलन का यही अवसर है स्वामी । निर्णय के क्षण विचित्र होते है । '

ठीक है प्रिये । हम जैतारण के नरसिंह सिंधल को एक और अवसर देंगे । सुप्रिया को मुक्त कर राठौड कुवर को सौंप देने का । अन्यथा मेवाड के वीर सैनिक हमारे सकल्प को पूरा करेंगे । उसकी अमानुषिक निष्ठुरता का यही दण्ड होगा ।

और उसके पश्चात् ।

उसके पश्चात् नवद राठौड और सुप्रिया का विधिवत् विवाह होगा ।

चौदह

सभा कक्ष मे महाराणा विराज रहे है । एक दीर्घ मौन सवत्र विद्यमान है । महामात्य सहणपाल अपना कथन पूरा कर चुके हैं ।

मेदपाद की प्रजा हमे प्राणो से भी प्रिय है महामात्य । जिस पुण्य भूमि को हमारे पूर्वजो न अपने रक्त से अभिसिंचित किया है जिसकी मिट्टी म हम पलकर बडे हुए उससे अधिक महान कोई नहीं । आज वही धरती भयानक दुष्काल से प्रभावित है । दक्षिणी क्षेत्र म वर्षा की बूद नहीं पडी । वह धरती जो हरे भरे खेतो से लह लहाती थी उसका वक्ष दरक कर क्षत विक्षत हो गया पशुओ का पीने का जल नहीं

चारा नही। लागो को भरपेट भोजन नही। इससे अधिक और कौनसी पीडा हो सकती है हम ? महाराज दु खी हाकर बोले।

यह प्रकृति का प्रकोप है अन्नदाता। मेदपाट क इतिहास म कदाचित शताब्दियो बाद यह दुष्कालिका और विपदा आई है स्वामी। सहणपाल बोले।

नही महामात्य। प्रकृति का प्रकाप कहकर हम अपने दायित्व से मुक्ति नही पा सकत। युद्धो म हम पराजित नही हुए। यह भी एक युद्ध है महामात्य। हमे अपनी पूरी शक्ति से इसे भी जय करना है। हमारी प्रजा का कोई भी प्राणी भूख से प्राण न गवाए। यह हमारा आदश है। आप तुरत युद्ध स्तर पर काय आरम्भ करे। मन्त्रिपरिषद के सदस्य सम्बधित क्षेत्र मे स्वय प्रस्थान करेंगे। अनाज भण्डारो के द्वार खोल दिए जाएँ। मुक्त हस्त स नि शुल्क अनाज वितरण की व्यवस्था की जाए।

इस काय म श्रेष्ठी वग न अपना सहयोग दने की पहल की है महाराज। धन और जन अन्न आदि से वे प्रभावित ग्रामो म जाकर दुष्काल से विपन्न जन जन की सहायताथ पहुँचना चाहत हैं।

'यह उनकी मातृ भूमि के प्रति अनुराग और जन के प्रति सहानुभूति का प्रमाण है। अकाल के चगुल से कस मुक्ति मिल यह हमारी ही नही उनकी चिन्ता का भी विषय है यह जानकर हमे परिताप हाता है। उनका यह सकल्प हमारे अभिमान का विषय है महामात्य। महाराज न अपनी बात समाप्त की ही थी कि प्रतिहारी ने सूचना दी— सभा कक्ष मे गुरुदेव पधार रहे हैं अन्नदाता।

सभासद अपने आसनो स उठ खडे हुए। स्वय महाराज राजसिंहासन स कुछ नीचे उतरे। राजगुरु तिल्हभट्ट के प्रवेश होत ही प्रणाम किया। प्रणाम स्वीकारत हुए राजगुरु न कहा — कल्याण हो राजन्। वे अपने आसन पर बैठ गए।

दक्षिण मेदपाट के ग्रामो की प्रजा भयानक अकाल की चपेट मे है गुरुदेव। महाराज की यही चिन्ता है। महामात्य ने निवेदन किया।

यह केवल महाराज की ही चिन्ता नही मेरी भी चिन्ता है हम सब की चिन्ता है। सम्भवत भगवान शिव हमारी परीक्षा लना चाहत है हम कसे इस विभीषिका का सामना कर सकते है ? हम कितने समथ है ? राजगुरु न कहा।

किन्तु निर्दोष प्रजा की कैसी परीक्षा ? उ ह कसा दण्ड ? महाराणा कुम्भा न शका व्यक्त की।

वह केवल निमित्त मात्र है महाराज। जिस राजा के शासन मे प्रजा निश्चित होकर जीवन यापन करती है जिसकी भुजाओ और सै य बल के आधार पर सुरक्षा

का अनुभव करती है। उसके साथ दुष्काल जैसे प्रकृति के सकट म क्या घटित होता है ? उसकी वैसी ही सुरक्षा हो पाती है अथवा नही ? इसकी परीक्षा का यही अवसर है राजन् । युद्ध और शांति दोनो परिस्थितियो मे परीक्षाओ के क्षण उपस्थित होते हैं । अस्तु ।

और उस परीक्षा के लिए हम ही नही हमारा सम्पूर्ण शासन तन्त्र और उसकी शक्ति कटिबद्ध है गुरुदेव । अविलम्ब योजनाबद्ध होकर दुष्काल से प्रभावित जनो की सघनता और उसके दुःखो के निस्तार की हम व्यवस्था कर रहे हैं ।

इन उपायो के अतिरिक्त मेरा भी कुछ दायित्व होता है राजन् । राजा, प्रजा के लिए अपना सर्वस्व समर्पित करे यह तो उसकी निष्ठा है किन्तु राजन् पुरोहित के नाते राजगुरु के नाते मुझे भी अपना कर्म विस्मरण नहीं करना है । यदि आपकी स्वीकृति मिले तो प्रत्येक जनपद म वरुण देव के प्रसादार्थ यज्ञ आयोजित हो मन्दिरो मे विशेष प्रार्थनायें की जाये । वायु मण्डल शुद्ध होगा तथा पीडित दीन जन को बल मिलेगा । प्रार्थना म तो अपार शक्ति है । दुष्कर्मो का शमन प्रार्थना ही से सम्भव है । सर्वधर्मबहिर्भूत सर्व पापरत स्तथा । मुच्यते नात्र सदेहो विष्णोर्नामानु कीर्तनात । वैशम्पायन संहिता का वचन है महाराज ? फिर भगवान ने स्वय को सब प्राणियो का सुहृद कहा है—' सुहृद सर्वभूतानाम् ।

हमारे शासन मे प्रजाजन इन अनुष्ठानो के लिए स्वतन्त्र है गुरुदेव ? फिर इस आयोजन मे राज्य के अधिकारी सहायतार्थ प्रस्तुत रहेगे । महामात्य इस आशय का आदेश तुरन्त जारी करेंगे ।

इस अनुष्ठान म राज्य का प्रतिनिधि उपस्थित रहे यह अत्यन्त सुन्दर विचार है । मेरा हृदय म तुष्ट हुआ । गुरुदेव ने कहा ।

आपका सन्ताप हमारा सताप है गुरुदेव । हम वचनबद्ध है । प्रकृति के प्रकोप ने जो मेदपाट के क्षितिज पर कालिमा अकित करने का प्रयास किया है उसे हम पुन उज्ज्वल भविष्य से आलोकित करेंगे ।

अपने तन मन और धन शक्ति और सामर्थ्य आदि से राजाधिराज को त्याग कर जो अपनी प्रजा की सहायतार्थ तत्पर हो वह राज्य धन्य है । आप इसी प्रकार दीनो की सेवा म रत रहे आपका कल्याण हो यही हमारी कामना है । ' गुरुदेव चलने को उद्यत हुए ।

मैं कृतकृत्य हुआ गुरुदेव । कहते हुए महाराणा कुम्भा स्वय सभा-कक्ष के द्वार तक तिल्हभट्ट को विदा करने आये ।

राजप्रासाद का एकान्त कक्ष । समय मध्य रात्रि । जाग रहे हैं महाराणा

कुम्मा। दीपाधार पर प्रज्ज्वलित दीपक का आलोक क्रमश क्षीण होता हुआ। वर्तिका निरन्तर जलती हुई। तल नही होगा तब भी वर्तिका जलती रहेगी। फिर प्रकाश अधकार म परिवर्तित होगा। वर्तिका का प्रकाशित बने रहने के लिए आधार चाहिए। स्नेह का आधार। वह स्नेह तल ही ता है। फिर मानवीय जीवन का आधार भी ता स्नेह ह। स्नह जो हृदय का आलोकित करता रहे। उसका पथ प्रदशन करता रहे। प्रत्येक श्वास की गति चेतना की हृदयाकाश मे स्थिति सबका आधार वही स्नेह ह। राजपुरुष के लिए वह स्नह' कैस मिल ?

गुरुदेव कहत हैं— नीति का अथ आस्था ह और आस्था का स्थान हृदय है। ओज काया म स्थित है। शरीर का गुण। दोनो क चेतना म प्रवश कर जान पर मनुष्य की ऊध्वयात्रा का आरम्भ होता है। फिर राजधम। एक ओर शत्रुआ के लिए वह निष्ठुर है निमम और कठार दूसरी ओर प्रजा के लिए उदार सहिष्णु और करुणा से द्रवित होने वाला। राजसत्ता के लिए दोनो की अनिवार्यता है। कसा है यह दायित्व ? साच रह है कुम्मा।

"अब तक जाग रहे हैं स्वामी ? यह स्वर महारानी अपूवदेवी का है।

"हाँ प्रिये, नीद नही आइ। और तुम अब तक सोई नही ?

"नही स्वामी। मै भी जाग रही हूँ। मेदपाट की प्रजा अकाल स पीडित है यही चिन्ता है आपकी स्वामी। मेरी भी यही चिन्ता है।

"सो तो हागी ही किन्तु हमारी चिन्ता वृहत्तर चिन्ता ह। मन परिष्कृत नही हुआ। दुष्काल प्रकृति का कोप मात्र नही है। मात्र सयोग भी नही। इस दुखान्तिका का कारण अनीति हो सकती है हमारी ही कोई त्रुटि, हमारी ही कही कत्तव्य च्युत हो जाना ।

'नहीं स्वामी ? ऐसा सम्भव ही नहीं कि आपक हाथा किसी का अनथ हो। आप कभी कत्त व्य च्युत हो।

'तुम स्वस्तिमती हा प्रिय, अत ऐसा कह रही हो।

"मैं आपकी पत्नी हूँ स्वामी। अर्धांगिनी। मुझसे अधिक आपका कौन समझेगा भला। आज दिन भर आपने एकासन व्रत किया। निराहार रहे। आप जानते हैं स्वामी राजमाता न भी आपके साथ एकासन किया था। निराहार रही थी।

'माँ सा ने यह सब किया ? हमे सूचना तक नही ?

"क्षमा करें स्वामी, राजमाता की यही आना थी कि आपका इसका नान भी न हो।

'ता हमारी अचना द्विगुणित हो गई मा सा की प्राथना व्यथ नही जायेगी।

इस समाचार से हम अनुगृहीत हुए। अब हमे विश्वास हुआ। मेदपाट के पहाड और जगल पुन हरे-भरे होंगे। नदियां जल प्लावित होंगी—खेत फिर से लहलहायेंगे।" भावातिरेक से महाराज ने कहा।

' फिर आप शयन करें स्वामी।

नहीं रानी—हम निश्चिन्त अवश्य हुए किन्तु प्रत्यूष तक जागरण भी करेंगे। तुम चाहो तो शयन की चेष्टा करो। और हां, रगशाला से हमारी वीणा मगवाती जाओ प्रिये।

' वीणा वादन करेंगे महाराज और मैं शयन की चेष्टा करूँ ? यह सम्भव है क्या ? आप वीणा वादन करेंगे और मैं सुनूँगी।

ऐसा ही सही —महाराज किंचित हँसे। 'यह वीणा वादन विनोद के लिए नहीं होगा।'

जानती हू विनोद के लिए नहीं होगा। उसम गुजरित होंगे अर्चना के छद।

हां प्रिय। श्री एकलिंग भगवान के अनुग्रह के लिए। उनकी अनुकम्पा के लिए।

चित्तौड दुर्ग के राजप्रासाद का वह खण्ड वीणा के स्वरो की अनुगूँज से गुजायमान है। इसकी मधुरिमा अन्तरिक्ष म समाहित होती जा रही है। उद्वेलित हो रहे हैं समस्त तारागण, सप्तऋषि मण्डल और स्वय चन्द्रदेव। यह किसी सम्राट का वीणा-वादन मात्र नहीं है। किसी साधक की साधना के अगाये छद हैं। अस्तित्व की अनस्तित्व म विलीनीकरण की प्रक्रिया से। नित्य से अनित्य की ओर गतिमान। आकुल और व्याकुल। जहा शरीर का अणु अणु नृत्य कर उठता है। आखों से अश्रुओं की धारा सतत् प्रवाहित होने लगती है। अपने अस्तित्व का भी भान नहीं रहता। कैसे होते हैं वे वन्दना के स्वर ? कैसा होता है वह भावन्दातिरेक ?

प्रभात की अरुणिमा कब उदय हुई महाराज को पता ही नहीं चला।

पन्द्रह

बनास के उत्तरीय तट पर हरित बांसों का घना वन। रक्तग्याति एरज और शिरीष के वृक्षों के समूहों से यत्र-तत्र आच्छादित उपत्यिका। किंचित काला सघन अधेरा क्रमश छाता हुआ। अमावस्या की रात्रि का प्रथम प्रहर आरम्भ हुआ चाहता है।

दवी मण्डप। तन्त्र मन्त्र साधना का केन्द्र। गुह्य साधना। निजन एकात। रुद्रक शाक्त तन्त्र की चक्रानुष्ठान साधना प्रारम्भ करेगा। त्रिपुर सुन्दरी की पूजा का विधान आज की रात्रि म हागा। सुन्दर कुमारिया का विधिवत पूजन अचना। त्रिपुर सुन्दरी की भावना की उद्‌भावना। मां जगदम्बा की प्रतिष्ठा होगी। रुद्रक स्वय म शिव भाव आरोपित करेगा। शक्ति रूपिणी त्रिपुर सुन्दरी को ग्रहण करन के लिए। चक्रभेद करन कु डलिनी का जाग्रत करना होगा। अलौकिक शक्ति सम्पन्न होगा तभी रुद्रक।

शिवागी उपस्थित है। रेशमी परिधान पहने। उ मुक्त केश। सद्य स्नान से स्वच्छ सुन्दर गौरवर्णीय सुडौल देहयष्टि। गले मे रुद्राक्ष की माला नाभि का स्पश करती हुई। कलाइयो मे गेंदे की जीतवर्णीय पुष्प मालिकायें लिपटी हुईं। कानो म पीले कनेर के पुष्प गुच्छ खोसे हुए। मस्तक पर रक्त सिन्दूरी टीका। सुन्दर मुख पर किंचित तनाव और *गाम्भीर्य। त्रिपुर सुन्दरी बनेगी शिवागी।*

ॐ क्ली महाकाल नम स्वाहा। समवेत मन्त्रोच्चार। सुपारी गुड पीत कनेर, कुकुम-रजित चावल की आहुतिया चल रही हैं। मशाल प्रज्वलित है। यहा कुण्ड के चारा ओर चार पण्डित अग्निहोत्र मे व्यस्त हैं। रुद्रक म शिव भाव शनैं शनैं निसृत होगा। जटा मण्डित मस्तक पर त्रिपुण्ड भुज दण्डो पर रक्षा अनुलेपन गले मे रुद्राक्ष रेशमी अधावस्त्र बलिष्ठ शरीर। तरुण मुख पर कठोरता का भाव। नेत्र तनिक रक्तवर्णीय। काना म कुण्डल। शिवागी की ओर अपलक दृष्टि कुशासन पर आसीन। शिवागी के आसन पर अत्यन्त निकट उसका आसन है।

कुवलयानन्द महापूजा के अधिष्ठाता हैं। साधना गुरु। यज्ञ के होता भी। उनकी दृष्टि रुद्रक और शिवागी दोनो पर है। अनुष्ठान पूरा होने की चिन्ता का भाव उन्हे यदा कदा विचलित करता है। शिवागी किंचित व्याकुल हो रही है। उस अनुकूलता का आभास कुवलयानन्द को हो रहा है। कोई व्यवधान अवश्य है। कवलयानन्द साधना केन्द्र के एकछत्र स्वामी हैं।

पण्डितो के मन्त्रोच्चार का समवेत स्वर यज्ञ-वेदी से उठती अग्नि और धूप मे मिश्रित अजीब-सी गन्ध। निकटस्थ बैठे हुए रुद्रक के मुख से आती हुई एक और गन्ध। शिवागी इस गन्ध को पहचानती है। वह गन्ध उसके नासिका पुटो मे समाये जा रही है। मस्तिष्क मे विचारो का आलोडन तीव्र होता जा रहा है। आखो के सम्मुख अधेरा सा क्यो घिर आया है? कानो मे घण्टिया कसी बज उठी हैं? चरम सीमा आ पहुँची है। अपने आसन पर मूर्छित हो गई है शिवागी।

कुवलयानन्द के सकेत से यज्ञ स्थगित कर दिया गया है। मन्त्रोच्चार रुक गया है। रुद्रक के मुख पर क्रोध का भाव झलक आया है। कुवलयानन्द अधिक

चिंतित है। अन्ततः व्यवधान उपस्थित हो ही गया। कल्पना सत्य हो गई। भीतर तक काप गए है कुवलयानन्द। सारा श्रम व्यथ हुआ। अनुष्ठान के खण्डित होने का अथ है भावी दैवी प्रकोप। अनथ की सम्भावना। आहुतियां स्थगित कर पण्डित चिन्ताग्रस्त है। कुवलयानन्द जल के छींटे दे रहे हैं शिवागी के मुख पर। रुद्रक आसन से उठ खड़ा हुआ है। शिवागी को दो शिष्य कुवलयानन्द की कुटिया म ला रहे हैं। मूच्छा अभी हटी नहीं है। रुद्रक कुटिया म प्रवेश नहीं करेगा। गुरु का आदेश नहीं है। व उसे दण्डित करेंगे।

रात्रि का तीसरा प्रहर बीत चुका है। शिवागी का क्लान्त शरीर अब विश्राम कर रहा है। निद्रा म लीन है शिवागी। आश्वस्त कुवलयानन्द सामने कुशासन पर बैठे हैं। शिवागी का कोई अनिष्ट न हो। भगवती दया करें शिवागी को प्राण दान दें। अपराध क्षमा कर। कुवलयानन्द का जप चल रहा है। रुद्राक्ष पर अंगुलियां घूम रही हैं। प्रभात हुआ। प्रात कम से निवृत्त होकर कुवलयानन्द पुन कुटिया म आ गये। उनकी पदचाप सुनकर शिवागी की आंख खुल गई। फिर पिछली रात्रि की घटनायें किसी दु स्वप्न की तरह स्मरण हो आइ।

'कैसा स्वास्थ्य है पुत्री ?' कुवलयानन्द ने पूछा।

'पुत्री' सम्बोधन शिवागी के मम को छू गया। भय के स्थान पर आश्वासन का भाव उदय हुआ। कुवलयानन्द की ओर प्रशंसा भरी दृष्टि से वह देखने लगी थी फिर उसने विनम्र स्वर म कहा— मुझे क्षमा करें। श्रद्धा वत थी शिवागी।

प्रथम नित्य कम और शरीर शुद्धि करो पुत्री। रात्रि का प्रसंग और उस पर चर्चा बाद म होगी।' कुवलयानन्द ने उत्तर म कहा— क्षमा-दान तो माँ भगवती देती है।

शिवागी सचेतन हुई। खूँटी से धुले वस्त्र लिए। मृत्ति कुम्भ उठाया और कुटिया से बाहर चल दी। कुवलयानन्द प्रतीक्षा रत बैठे रहे। श्रद्धा और धैय की प्रतिमूर्ति है शिवागी। भक्ति भाव भी है। साधना के अनुकूल सामंजस्य। निर्विकार फिर व्रत भंग कैसे हुआ ? मूच्छना का कारण ? सोचत रहे कुवलयानन्द।

पूरी रात्रि जागरण म ही बीती है कुवलयानन्द की। कुटिया के बाहर दो बार पदचाप उन्होंने सुनी थी। वे बाहर आये थे। वह पुरुष दोनों बार अमावस्या के अंधकार म तिरोहित हो गया। चारों शिष्य महादेव के निकट निद्रा म अचेत थे। कुवलयानन्द पहचान गये थे उस आकृति से। वह पुरुष रुद्रक ही था। फिर उस रात्रि को महादेवी के निकट बैठे रुद्रक उसकी आंखों का कामुक भाव कुवलयानन्द ने पढ़ लिया था। शिवागी के प्रति रुद्रक मे दुर्भावना है। रात्रि म दो बार कुटिया के निकट आने का अथ क्या है ? शंकालु हो चले हैं कुवलयानन्द। अपने प्रति ग्लानि हुई। साधक के गुण नहीं हैं रुद्रक म। किसी शिष्य ने सूचना दी थी। अघोरी रह

चुका है रुद्रक कदाचित् वामाचारी। ललितापासना के लिए सवथा प्रतिकूल। शुद्धि करन पर भी उसका मन निमल नही हुआ है। कुवलयानन्द जान गये थे।

शिवागी स्नान कर लौट आई। जल पूरित घट यथा स्थान पर रख दिया। कुवलयानन्द क सम्मुख आ खडी हुई। कुवलयान द न बैठने का सकेत कर कहना आरम्भ किया— तुम श्रेष्ठ साधिका के गुणो का आगार हो शिवागी। नत्य और सगीत की प्रवीणता अजित कर तुमन अपने व्यक्तित्व की श्रीवृद्धि की ह। राजसी उपासना के अनुरूप तुम्हारे लक्षण दखकर ही त्रिपुर सुन्दरी के पद के लिए मैंन तुम्हारा चयन किया था किन्तु कुवलयानन्द सहसा रुक गय।

मैंन आपको निराश किया इसका दु ख है मुझे। किन्तु मेरे साथ छल हुआ है। रुद्रक के मद्यपी है। उसकी आखो मे वासना का भाव दिखाई देता है। वासना विवेक नही रहन दती और बिना विवक के न चित्त शुद्धि सम्भव है न साधना ही। मेरा मन उसके साथ एकात्म हो ही नही सकता।' कहते-कहते शिवागी के नेत्र छल-छला आय।

कुवलयानन्द गम्भीर हो गए। भीतर ही भीतर वे आहत से हुए। किंचित शिवागी का सुन्दर मुख-मलीन होता दिखाई दिया। उसकी सुकुमार देहयष्टि कपनीय पुष्पित लतिका-सी काप रही थी। जैसे वह अन्तर मे कही उत्तेजित हा रही थी। अधम है रुद्रक—कुवलयानन्द जान गय।

'क्या चाहती हो शिवागी ?

जीवन का रहस्य खोजना चाहती थी प्रभु—खोजना चाहती थी अपनी अस्मिता और अपना वास्तविक रूप। मेरा प्रयोजन था उस अलौकिक शक्ति का पा लेना। वह अलौकिक शक्ति जिसमे आल्हाद ज्ञान और परम ऐश्वय की त्रिधारा नि सृत होती है। जो परम आनन्दमयी स्थिति है—जहा लीला का प्रकाश आनन्द रूप मे प्रकट होता है—कि तु मेरे भाग्य मे कदाचित् वह है ही नही। साधना के योग्य मे हूँ ही नही।

'तुम्हारा मन बहुत अशान्त है शिवागी। पूव प्रशाति और निमल भाव के लिए तुम्हे कठिन व्रत करना होगा।

'किन्तु यहाँ नही। मन मे विकार ज म ले चुका है फिर त्रिपुर सुन्दरी के पद की अधिकारिणी मैं कहा रही प्रभु ?'

विकारग्रस्त तो रुद्रक हैं तुम नही तथापि तुम्हारी अनिच्छा निश्चय ही व्यथा रहेगी। मैं तुम्हे इस अनुष्ठान से मुक्त करता हूँ।

आपकी बहुत आभारी हूँ प्रभु।

अब कहा जाओगी ?

वहां जहां मन को शांति मिले। चित्त शुद्धि हो। पूर्व जमी निमग्नता पा सकूं। रुद्रक के मन में मेरे प्रति वासना जगी थी। वासना और कामुकता का भाव। अवश्य मुझमें भी वही विकार उत्पन्न हुआ था।'

साधना पथ त्यागोगी ?

नही प्रभु। साधना के लिए ही मेरा जन्म हुआ है यह प्रतीति है मुझे। नृत्य और संगीत मेरी साधना के अविलम्ब ही तो हैं। नर्तकी अवश्य हूं किन्तु अपने इष्ट-देव की। मेरा रोम रोम उन्ही को समर्पित है। उन्ही के प्रणय की भिक्षुणी हूं।

तुम्हारे शुभ्र वस्त्र और शुभ्र शरद-पुष्पों की वेणी में सजा पुष्प गुच्छ तुम्हारी निर्मल भावना का प्रतीक ही मैं समझता हूं। तुम्हारी चित्त शुद्धि अवश्य होगी—रूप नारी का सबसे बड़ा शत्रु होता है शिवागी। इस सौंदर्य को तप की अग्नि देनी होगी—तुम्हें दीर्घतपा बनना होगा। कुवलयानन्द तीक्ष्ण दृष्टि से शिवागी को देखते रहे।

दीर्घतपा बनूंगी प्रभु मेरा भविष्य निर्धारित कीजिए।

क्षण भर को कुवलयानन्द ने आंखें मींच ली—ध्यान मग्न से हुए। फिर आंखें खोलकर सुदूर दिशा में देखते हुए बोले—यहां से तीन योजन दूरी पर भगवान श्री एकलिंग का दिव्य धाम है—कैलाशपुरी। मठाधिपति कुशिक सिद्ध सोम प्रभु की शरण में जाओ। निसंकोच अपनी बाधा कहना। उनकी कृपा हुई तो भगवान लकुलीश अवश्य कल्याण करेंगे।

"जो आज्ञा प्रभु। शिवागी उपकृत सी हुई।

देवदत्त और अकटक दोनों तुम्हें कैलाशपुरी छोड़ आयेंगे। मार्ग में तुम्हारे रक्षक वही होंगे।' कुवलयानन्द उठ खड़े हुए।

जिसने अब तक मेरी रक्षा की है वे ही मार्ग में मेरे सहायक होंगे। वे हर समय मेरे साथ हैं। मेरे श्वास-प्रश्वास में हैं। तथापि मैं देवदत्त और अकटक दोनों को साथ लूंगी। मैं ठहरी उनकी बाछवी और वे मेरे मुंहबोले बन्धु। इस अनिश्चितता की घड़ी में भी शिवागी किंचित हँस पड़ी।

प्रसाद लेना न भूलना। कुछ पाथेय भी ले लेना। रात्रि के पूर्व कैलाशपुरी पहुंचना श्रेयस्कर रहेगा। फिर वन्य पशु विचरने लगते हैं कुवलयानन्द ने सावधान किया। वे खड़ाऊं पहन चलने को उद्यत हुए। शिवागी ने विनत हो प्रणाम किया। आशीष देकर वे घने अरण्य की ओर चल दिए। देवदत्त और अकटक को आवश्यक निर्देश देना वे न भूले।

शिवागी निश्चय नही कर पाई कुवलयानन्द का वह कैसे उपकार माने ?

अपूर्ण साधना का बोध वचन का अनुपालन न कर पाने की ग्लानि कहीं विचलित कर रही थी।

कुवलयानन्द की आज्ञानुसार शिवागी ने कुछ कन्द और बेरों का फलाहार किया। भाद्र शुक्ल प्रतिपदा है आकाश में मेघ घिर रहे हैं। अनुराधा नक्षत्र में वर्षा का योग है। किन्तु सूर्य की प्रखरता नहीं रहेगी। अनुमान लगा रहे हैं देवदत्त और अक्टक। कुवलयानन्द के आदेशानुसार शिवागी के साथ जाने में दोनों आनन्दित हैं। रुद्रक तड़के ही कहीं अदृश्य हो गया है। शिवागी के इस निर्णय से अनभिज्ञ है। फिर कहीं मद्य पीकर रात्रि को लौटेगा। शिवागी जानती है। इसी मद्य ने तो रुद्रक को पतन की इस सीमा तक पहुँचा दिया है। अन्यथा अलौकिक शक्ति प्राप्त करने को वह रहता। कुवलयानन्द का प्रतिद्वन्द्वी है रुद्रक। ढली आयु में साधना के लिए अशक्त हो चले हैं कुवलयानन्द। इस युद्ध साधना स्थली का अधिष्ठाता बनना चाहता है कुटिल रुद्रक। अपनी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए कुछ भी कर सकता है रुद्रक। ऐसे पुरुष के प्रति घृणा ही हो सकती है प्रेम नहीं सोचती है शिवागी।

तीन योजन की कैलाशपुरी की यात्रा। वन्य प्रवेश का अनजाना मार्ग। कुटीर से बाहर निकलते निकलते सोचती है शिवागी।

सोलह

जलाशय में पाद प्रक्षालन कर पश्चिमो मुखी हो कुशिक सिद्ध सोम प्रभु ने तीन बार अंजलि भर जल विसर्जन किया—ॐ नमः शिवाय का मौन जप करते हुए सन्ध्या के उस सन्धिकाल में कुछ क्षण मौन खड़े रहे। फिर धवल उत्तरीय ठीक करते हुए जलाशय की सीढ़ियों से नीचे उतर गए। मन्दिर के पृष्ठ भाग से परिक्रमा-सी करते हुए बढ़ ही रहे थे कि दूर से देवदत्त ने इंगित किया—वे ही मठाधिपति सिद्ध सोम प्रभु हैं। इधर ही आ रहे है। मन ही मन भगवान शिव फिर माँ पार्वती का ध्यान करते हुए शिवागी आगे बढ़ी। नमन की मुद्रा में कर बद्ध प्रणाम किया। शिवागी ने क्षण भर के लिए सिद्ध के मुख मंडल की ओर देखा। उस झुटपुटे में भी वह किसी अदृश्य आलोक से प्रकाशित सा भासमान हुआ। सिद्ध सोम प्रभु रुक गए—कल्याणम् अस्तु। उनके मुख से निकल पड़ा।

शिवागी स्थिर हुई। तभी मन्दिर के गर्भ मंडप से नगाड़े घड़ियाल एवं शंख-ध्वनि सुनाई दी। भगवान श्री एकलिंग की सान्ध्य आरती आरम्भ हो चुकी थी।

क्या चाहती हो भद्रे? सिद्ध सोम प्रभु ने पूछा।

आपकी कृपा और आश्रय भी ।

साधना करती हो ?

जी । उस दिशा म प्रयत्नशील थी किन्तु असफल रही ।

अभी कम शेष है । फिर इस वय म विरक्त होना कठिन होता है । उसके लिए सस्कार चाहिए ।' कहत कहत सिद्ध सोम प्रभु मद मद हँसे । शिवागी चौंकी। फिर विनीत स्वर म बोली कम स मुक्ति किस मिली है ? स्वय को सतुलित रखना कठिन हो चला है । मन अशात है ।

कम से मेरा तात्पय लौकिक कम स था । इस भव म रह रही हो तो कम से मुक्ति कैसे मिलेगी ? फिर पिछले जन्म का कमफल साथ-साथ चल रहा है ।

जानती हूँ किन्तु उसकी तीव्रता असह्य हो उठी है । परिमाजन का माग खोज रही हूँ प्रभु ।'

तुम विशिष्ट लगती हो । देव दशन कर आरती ग्रहण करो मन शात होगा। अतिथि शाला मे रात्रि विश्राम और भोजन की व्यवस्था है । प्रात तुम्हारा वास्तविक परिचय और तुम्हारी समस्या सुनेंगे । कुशिक सिद्ध सोम प्रभु पीछे आते हुए शिष्य को आदेश देकर आगे बढ गए ।

शिवागी के सतप्त हृदय को कुछ सात्वना सी मिली—सिद्ध सोम प्रभु के आदेशानुसार मन्दिर मे पहुँची । दशन कर आरती ली वृद्ध पुजारी से पूजा के फूल ग्रहण कर अपने नेत्रो से लगाये । मन आनन्दित होता सा लगा । अश्रुल नेत्रो से मूर्ति के दशन करती रही—फिर तीनो जने शिष्य के साथ अतिथि शाला की ओर चल दिये ।

मृदग की प्रतिध्वनि मन्दिर के गभ मडप मे अब भी व्याप्त थी । शिवाचन के छन्द मुखरित हो रहे थे । अतिथि कक्ष के द्वार बन्द कर शिवागी कम्बल बिछाकर लेट गई । देवदत्त और अकटक भोजन कर बाह्य प्रकोष्ठ मे न जाने कब सो गए । प्रात पौ फटने के पूव उन्हे लौट जाना है कुवलयानन्द का आदेश यही है । किन्तु शिवागी ने भोजन नही किया । नींद आने का प्रश्न ही नही था । जागती रही शिवागी अपने जीवन की अपने व्यतीत की अनेक स्मृतियो मे खोई हुई सी । पश्चाताप करती हुई । स्वय को धिक्कारती सी कितना विकट ? कितना हाहाकारमय जीवन हो सकता है ? सुदूर दक्षिण मे किसी वेद मन्दिर की देवदासी के गभ से जन्म पाकर देव छाया मे पली बडी हुई थी शिवागी—सगीत और नत्य की शिक्षा माँ से विरासत म मिली और मिली अकुलीनता । पिता के नाम के स्थान पर एक प्रश्न-चिन्ह जो पूण विराम बन चुका था । एक के बाद एक विलासी पुरुषो की भूख मिटाती रही माता । धर्मात्मा पुरुष भी घोर पातकी और निष्ठुर होते हैं जान गई

थी शिवागी। अपनी माता के उस जीवन से घृणा करने लगी थी शिवागी। उसका मन की कोमल शिशु भावना मर चुकी थी–किन्तु एक विकल्प और था। उसने अपने को संगीत की साधना में स्वयं को व्यस्त रखा। विस्मरण शेष सब क्रियाकलापों का। माँ अधेड़ हो चली थी—शरीर का सौष्ठव जाता रहा था। अनेक जोड़ी आँखें शिवागी पर टिक रही थीं। माता का स्थान लेगी शिवागी ? वह भी देवदासी बनेगी ? माता जैसा जीवन जीने को विवश ? देव प्रतिमा के सम्मुख नृत्य करने वाली किन्तु निजी जीवन में वीरांगना। मात्र विलासकर साधन किसी भी पुरुष के हाथ में कठ-पुतली की तरह नाचती हुई। घनिष्ठ सम्बन्ध जोड़ने को आतुर धनी पुरुषों की वे कामुक दृष्टियाँ। देखते ही शिवागी काँप जाती थी–घर छोड़कर चली जाएगी किशोरी होती हुई शिवागी। वह देवदासी का जीवन नहीं जिएगी वह नारकीय जीवन ? मंदिर के पुजारी के पुत्र चक्र की दृष्टि न जाने कब से शिवागी पर थी–उसने घृणित प्रस्ताव अवसर पाकर रख ही दिया। किन्तु किसी प्रकार शिवागी अपना घर छोड़ भाग खड़ी हुई। फिर उस नगर में कभी प्रवेश नहीं किया। उस अनिश्चितता की स्थिति में वह कई स्थानों पर भटकती रही। सर्वत्र उसका अपना रूप सौंदर्य ही शत्रु बन गया। स्वयं की सुरक्षा कठिन हो गई। मथुरा में एक उदारमना साध्वी ने अपने आश्रम में शिवागी को रखा। भजन कीर्तन में उसकी उपयोगिता दिखाई दी थी। तभी रुद्रक से भेंट हो गई थी शिवागी की–वह उसे छल कर अपने साथ ले आया था। हमारी धार्मिक संस्कृति अन्दर से कितनी खोखली हो चुकी है ? नारी शोषण का छल व्यापार करने में लीन हैं तथाकथित ऊँचा आध्यात्म बखान करते मन वे लोग। किन्तु ऊपर से समाज में कितने प्रतिष्ठित हैं ? संस्कृति से विमुख और धर्म विहीन ? किन्तु उसके व्याख्याता और उद्घोषक। कैसा अनय व्याप्त है। रसातल को जाकर रहेगी यह पावन भूमि। विचारती है शिवागी। अतिथि कक्ष में लेटी हुई।

प्रभात की पौ फटी। सारी मन से विदा लेने आ पहुँचे देवदत्त और अवटक। शिवागी शैया में उठी ही थी। कक्ष के वातायन से दिवस का लघु आलोक झाँक रहा था। उन दोनों को समझा-बुझाकर शिवागी ने विदा दी। फिर अपूर्णता का अनुभव हुआ। कुवलयानंद के आश्रम में भग हुई साधना उनकी करुणा फिर रुद्रक का निन्दनीय आचरण सब कुछ स्मरण आने लगा। अब एक नये जीवन का अध्याय आरम्भ होने को है।

कोई अतिथि कक्ष का द्वार खटखटा रहा है। द्वार खोलकर शिवांगी ने देखा गौर वर्ण वाला शिष्य खड़ा है– जलपान की व्यवस्था हो रही है देवी। समाप्त कर गुरु महाराज के कक्ष में पधारें। वे आपकी प्रतीक्षा में हैं। प्रणत है सिद्ध सोम प्रभु का युवा शिष्य। शिवागी जानती है जो उसे देखता है वही सम्मोहित होता है।

क्या नाम है तुम्हारा ? प्रश्न कर रही है शिवांगी। उत्साहाधिक्य से मन भरा जा रहा है। इस शरीर को अनुव्रत के नाम से पुकारते हैं देवी।

देवी नही तुम्हारी बडी बहन, तुम्हें अनु कहूँ स्वीकार है ?"

सुनकर प्रथम तो अनुव्रत घबराया। फिर साहस कर शिवागी की घनी केश राशि से आवृत्त सुन्दर मुख की ओर देखा। उन विशाल नत्रो मे स्नेह छलकता दिखाई दिया।

अवश्य म आपका अनुज हुआ। अनु सम्बोधीकरण उपयुक्त ही रहेगा।'

तभी एक पात्र मे गौ दुग्ध तश्तरी म दो मादक पाकशाला से लकर सवक ल आया।

आप जलपान कीजिए मैं चलता हूँ। प्रणाम कर अनुव्रत लौट गया। तुरन्त जलपान समाप्त कर शिवागी न दपण म स्वय को देखा। वस्त्र ठीक किए। कक्ष का द्वार ब द कर शीघ्रता से कुशिक सिद्ध श्री के कक्ष की ओर चल दी। उनक कक्ष का द्वार खुला था। काष्ठपीठ पर बैठे व दिखाई दिए—उन्नत ललाट अधमु द नेत्र। मुख मडल पर वही रात्रि वाला आलोक ॐ नम शिवाय। भगवान लकुली शाय नम की ध्वनि होठो से निकल रही थी। शिवागी को अत्यन्त तेजस्वी दिखाई दिए सोम प्रभु। अधमु दी आखे उन्होन खोल दी। शिवागी न शीश झुकाकर नमन किया। कल्याणम् अस्तु आशीर्वाद से वे ही शब्द पुन निकले।

अपन भविष्य को लेकर चिंतित हो। किसी न छल भी किया है ? भ्रष्ट होते होते बच गई। सिद्ध सोम प्रभु न कहा– खल पुरुषो से बच पाना कठिन होता है।' शिवागी को लगा तत्त्व ज्ञानी हैं सोम प्रभु। त्रिकालदर्शी।

साम प्रभु न सकेत मात्र किया था। शिवागी अपना परिचय ही नही सम्पूर्ण व्यतीत सुनान को विवश हो गई। सोम प्रभु सुनते रह। शिव शिव बीच बीच म शब्द उच्चारत हुए। शिवागी के मन का भार जैसे हल्का हो गया।

विगत का भूल जाओ शिवागी। वतमान मे ही मनुष्य जी सकता है। विगत म जीना अत्यन्त कठिन होता है।

प्रयत्न करूँगी गुरुदव। शिवागी ने अवरुद्ध कठ से उत्तर दिया। आखो से अश्रु झरन लगे।

यहा रहकर दखो। एक सप्ताह का उपवास और एकासन। उन दिनो म हस्त मे स्थापित पार्थिव शिव पूजन और विघ्न कम का विसजन। फिर निमल बन कर प्रभु की सवा और अतिथि सेवा म लगा। यह विधि तुरन्त आरम्भ होगी। भगवान श्री एकलिंग के सम्मुख पव त्योहारो पर विशष नत्य सगीतोपासना तुम्हार कतव्य का प्रमुख अग रहगा। वतमान म यही पयाप्त रहगा। आसक्ति और चष्टा से कदाचित बच सकागी ? आचार विचार और भोजन म सयम आवश्यक होगा।

शिवागी के मुख से रुदन फूट निकला ।

वदना का प्रतिकार होगा । धीरज रखो पुत्री ।' शात स्वर मे सिद्ध सोम प्रभु न कहा और फिर अविलम्ब उठकर अत कक्ष मे चले गय ।

शिवागी लौट चली । मन्दिर के विशाल प्रागण म अनेक शिल्पियो रजो और श्रमिको को कायरत देखा मन्दिर के नव निर्माण का काय चल रहा है । आगामी फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी महाशिवरात्रि तक निर्माण पूरा किया जाना है शेष है केवल 2 मास का समय । ध्वजदड स्थापना और नव निर्मित मडप मे प्राण प्रतिष्ठा के समय महाराजाधिराज मेवाडपति कुम्भा स्वय पधारेंगे । अनन्त व्रतोद्यापन और महायज्ञ उत्सव होगा । अनुव्रत न जान कब साथ हो लिया था । बिना प्रश्न किए सब कुछ कह जा रहा था । सचमुच ही बधु सा लगा शिवागी को अनुव्रत । छलछलाए नेत्रो से अनुव्रत की ओर चलते चलते देखती रही शिवागी—शिवागी को देखते रहे अनेक मन्दिर म प्रवेश करत विचरत स्त्री पुरुप । उसके तापस रूप से कही अधिक प्रभावित कर रहा था रूप का लावण्य सुडौल दह की सुकुमारता और कौमाय । सिद्ध श्री न पिछली रात्रि को कहा था– तुम विशिष्ट लगती हो ? पारखी हैं सिद्ध श्री । किन्तु इस वैशिष्टय का मूल्य क्या है ? नारी जीवन की साथकता किसमे है ? समपण क्यो वह करती है ? जिसके प्रति करती है ? आसक्ति और समपण म अत सम्ब ध क्या है ? सोच सोच कर बुद्धि कु ठित होने लगती है । तो क्या यह विशिष्टता पिछले जन्म की किसी साधना का फल ही तो नही ? कि तु यह ज म और इसकी पीडा । सिद्ध श्री कहत है–विगत को भूल जाओ—वतमान मे ही मनुष्य जी सकता है—विगत म जीना अत्य त कठिन होता है । क्या क्या भूलेगी शिवागी ? भूल भी पाएगी ?

अनुव्रत को लगा–कही खो गई है शिवागी । क्या उसके कथन मे उ हे काई रुचि नही अथवा अपने प्रति अनुव्रत का यह भाव उ ह अच्छा नही लग रहा है । गुरुदेव न क्या कुछ कह दिया है ? शिवागी के नेत्रो म यह कसी लालिमा है ? क्यो अश्रु बिन्दु छलक रहे हैं ?

'गुरुदेव बडे कृपालु है । जिस पर अनुग्रह करते है करते ही चले जाते हैं । हम सब को वे पुत्र तुल्य मानते हैं । आचाय विद्याचाय भी उन्ह परम आदर देत हैं ।' अनुव्रत न शिवागी का अज्ञान मनस्तम्भ दूर करना चाहा ।

कौन विद्याचार्य ? शिवागी ने प्रश्न किया हमारे गुरुकुल के प्रधानाचाय वेद वेदाग दशन मीमासा और ज्योतिप सभी विद्याओ की शिक्षा का हमारे गुरुकुल मे प्रबन्ध है ।

और सगीत ?

सगीत पाठशाला पृथक है । उसके बिना शिक्षण अपूण नही रहेगा । फिर

मेवाडाधिपति कुम्भा स्वय महान सगीतज्ञ हैं। सगीत, नृत्य और अभिनय कला सभी मे दक्ष।'

तुम्हे यह सब किसने बताया ?

सुनन्द गोस्वामी महाराज ने। सगीत पाठशाला के वे आचार्य है। शिवागी और अनुव्रत अतिथि कक्ष के द्वार पर आ पहुचे थे।

सत्रह

चित्तौड दुर्ग के सभागार मे मन्त्रि परिषद की विशेष बैठक आयोजित है। समाचार मिला था—गुजरात के बादशाह कुतुबुद्दीन ने अवसर पाकर कुम्भलगढ पर आक्रमण किया था किन्तु दुर्ग पर स्थित मेवाडी सेना की टुकडियो तथा दुर्गपाल ने आक्रमण निरस्त कर दिया। गुजरात के बादशाह की सेना पराजित होकर पलायन कर गई।

हमने तो कुम्भलगढ को अत्यन्त सुरक्षित समझा था महामात्य। सोचा था *शत्रु के लिए आक्रमण की बात सोचना इतना सहज न होगा। किसी को सन्देह ही* न होगा कि दुर्ग पर इतनी अधिक सख्या मे सैनिको का निवास सम्भव हो। किन्तु वह हमारा भ्रम निकला। महाराणा ने कहा।

वस्तुत गुजरात का सुलतान अपनी पिछली पराजय भूला नही था अन्नदाता। सुना है नागौर के शासक को उसने फिर भडकाया है और वहा गुजरात की सेना पुन जमा हो रही है। कुतुबुद्दीन ने शम्सखा के कहने पर अपने वजीर इमामुलमुल्क को नागौर की सुरक्षा और फिर चित्तौड पर आक्रमण के निर्देश दिये हैं। महामात्य सहणपाल बोले।

यदि महाराज सहमत हो नागौर पर प्रथम हम आक्रमण कर शम्सखा इमामुलमुल्क दोनो को शक्तिहीन कर दें। अबकी बार फिर युद्ध शत्रु की भूमि पर लडा जाय। सेनाधिपति कान्धल ने प्रस्ताव रख दिया।

यही ठीक रहेगा। कुवर चूण्डा आपकी सम्मति क्या है ?

इसमे विचार करने जैसी कोई बात नही है महाराज। बन्धु कान्धल का सुझाव अत्यन्त उपयुक्त है।

नागौर पर तुरन्त आक्रमण किया जावे। किन्तु हमारा ध्येय नागौर विजय नही शम्सखा को विश्वासघात के लिए पाठ सिखाना और सुलतान की सेना को

पराजित कर उसकी शक्ति क्षीण करना है। इससे इमामुलमुल्क को मेवाड की श्रेष्ठता का भी अनुभव होगा यह ध्यान रखें सेनाधिपति कान्धल।" कुम्भा बोले।

जी महाराज।

सभा समाप्त होने को थी। महाराणा सभा कक्ष से बाहर आने का उद्यत हुए कुवर चूडा साथ उठ खडे हुये। तभी दूत ने नमन कर स्मरण कराया।

राव जोधा ने अपनी कन्या शृगार देवी का कुवर रायमल के लिए पाणिग्रहण का प्रस्ताव भेजा है। सगाई का दस्तूर नारियल लेकर मण्डोर के राजपुरोहित अन्नदाता के सम्मुख प्रस्तुत होने की प्रतीक्षा म हैं।

हमे स्मरण ही नही रहा। उन्ह प्रस्तुत होने की आज्ञा है। कुवर उदयसिंह से एक वप ही तो छोटे हैं कुवर रायमल। उनके और बेटी रमा के विवाह भी तो हमन सम्पन्न कर दिय। यह उत्तरदायित्व भी पूण कर दें। क्यो कुवर जी ?

विचार उत्तम है महाराज। फिर मण्डार से यह नया सम्बन्ध पुराने सम्बन्धो को अधिक सुदृढ करेगा।

किन्तु दादी राजमाता के कहने पर हमन मण्डोर हस्तगत करने की बात सोची ही नही और राव जोधा को उस पर अधिकार करने दिया। क्या हमारा यह न्याय उनको सन्तुष्ट नही कर सका ?

यह बात नहीं है महाराज भावी पीढी के सम्बन्ध भी मधुर बने रह यह भी एक प्रयोजन है।

मण्डोर के राजपुरोहित दरबार मे उपस्थित हुए। राव जोधा का भेजा नारियल सादर स्वीकार कर लिया गया। राजकुल को इस निणय से परितोष हुआ।

नागौर मे शम्स खा और इमामुलमुल्क की पराजय और कुवर रायमल का राजकुमारी शृगार दवी से पाणिग्रहण साथ साथ सम्पन्न हुए। इमामुलमुल्क ने अहमदाबाद जाकर सुलतान से और सेना भेजकर चित्तौड पर पुन आक्रमण करने का अनुराध किया किन्तु वह ऐसा दुस्साहस करने को तत्पर ही नही हुआ। रोग न आ घेरा था। कुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई। पराजय से विष्पण होकर जीना कठिन होने लगता है। जीवन का विलास राज्य के विस्तार की महत्त्वाकाक्षा और क्षुद्र राजनीति अन्तत किस सीमा तक मनुष्य का पहुँचा देती हैं।

फिरोज खा की मृत्यु के पश्चात् नागौर का शासक बनन का नतिक अधिकार शम्सखा का था, किन्तु छोटे भाई मजाहिर खा न नागौर उसके हाथो से छीन लिया था। महाराणा ने नागौर हस्तगत करने के लिए शम्सखा की सहायता की थी किन्तु

शम्स सा वह उपकार भूल गया। कृतघ्न निकला। चैत्र शुक्ल अष्टमी। महाराणा कुम्भा का जन्म दिन। नगर में नवरात्रि उत्सव चल रहा है। राजप्रासाद में भी देवी माँ अम्बा की उपासना अर्चना हो रही है। घट स्थापित हैं। अखण्ड ज्योति प्रज्ज्वलित है। दैनिक अग्निहोत्र और दुर्गा स्तोत्र का पाठ प्रतिदिन हो रहा है। आज के उत्सव का उल्लास द्विगुणित है। तुलादान होगा। राजगुरु तिल्हभट्ट स्वयं यज्ञवेदी सजा रहे हैं। तुलादान के पश्चात् महायज्ञ स्वस्तिवाचन और शान्ति पाठ। महाराणा अनुजों सहित स्वयं यज्ञ में विराजेंगे। राजमाता राजमहिषियाँ सम्पूर्ण राजकुल उपस्थित रहेंगे। फिर मंगलाचार। प्रसन्नता ही प्रसन्नता। प्रसन्नता और हर्षोल्लास। राजमाता तिलक कर आशीर्वाद देंगी तथा परिचारिकाओं दास दासियों और सेवकों को नये वस्त्र वितरित करेंगी। ब्रह्म भोज होगा। दरबार में नजराना-न्यौछावर होगी।

किन्तु कुम्भा प्रातः से ही न जाने क्यों कुंठित है? एक अज्ञात तटस्थता का भाव हृदय में उदय हो रहा है। रानी अपूर्व देवी महाराज के भावों को ताड़ रही हैं। चिन्तित हैं। उत्सुक हैं स्वामी की इस अन्यमनस्कता का कारण जानने के हेतु।

कोई चिन्ता है महाराज? कुछ विचलित हो रहे हैं? रानी अपूर्व देवी ने प्रश्न किया।

चिन्ता विशेष नहीं। मन विचलित अवश्य है। कुम्भा बोले।

कारण?

जानकर क्या करोगी?'

कारण जानने की मुझे अधिकारिणी नहीं समझते महाराणा? मैं ज्येष्ठा नहीं महाराज की और रानी भी हूँ किन्तु आपके साथ बीतते दाम्पत्य सुख आनन्द और अनुराग की सहयोगिनी ही नहीं सहधर्मिणी हूँ पत्नी हूँ। सबसे अधिक नारी महाराज।

इन सबसे अधिक हमारी प्राण प्रिय। बहुपत्नी ग्रहण करने पर भी तुम हमारी प्रियतमा हो। युवराज की माता हो।

फिर मानसिक कष्ट का कारण कहें स्वामी।

हम सोचते थे—राज्यारोहण के पश्चात् इन लगभग 25 वर्ष आयु का आधा भाग युद्धों की व्यस्तता आक्रमण-प्रत्याक्रमण और राजनीति की गहन समस्याओं के समाधान खोजने में ही बीत गये। मेवाड़ाधिपति बन जाने का आत्म-सन्तोष उससे जुड़ी राज्याकांक्षा पूरी अवश्य हुई। साहित्य सृजन कला की उपासना मेवाड़ की सुरक्षा के लिए दुर्ग निर्माण आदि कार्यों से हमने स्वयं को संतुलित बनाये रखा। हमारे शासन में मेवाड़ की प्रजा सुखी व समृद्ध है यही हमारा अभीष्ट रहा। किन्तु

किन्तु क्या स्वामी ? राजा का गौरव प्रजा का आदर और स्नेह सतान-सुख यह सब प्राप्त होने पर आपके हृदय मे परितोष अवश्य हुआ होगा ।

हुआ था प्रिय किन्तु न जाने अब मन क्यो अशान्त है ? जैसे कही अपूर्णता है । अतृप्ति है । अधिक सुख मिल जाने मे भी एक प्रकार की वेदना होती है । विजेता का दप कही अहम् को भी जन्म देता है ।

वह वेदना और उसकी पीडा आपके हृदय का भाव पक्ष है स्वामी । भावना और भाव प्रवणता ही जीवन म सरसता लाती है । आपका साहित्य सृजन कला और सगीत की उपासना की ओर प्रेरित करती रही है । शास्त्रो के ज्ञाता होने के कारण आपने सदा धर्माचरण किया है । विजेता का दप आपकी कुशल राजनीति शौय और पौरुष का प्रतिफल हैं । दम्भ अथवा अहकार नही । आपकी क्षमाशीलता और उदारता इसके प्रमाण हैं ।

हम तो इसे अपने इष्टदेव भगवान श्री एकलिंग की कृपा का प्रसाद मानते हैं । शास्ता तो वे हैं हम उनके प्रतिनिधि मात्र । मन चाहता है कुम्भलगढ जाकर रहू । सदा उनके दशन का सुयोग मिलेगा । उस क्षेत्र की सुरक्षा मिलेगी चित्तौड पर अपना अरक्षित नही रहा ।

आपका विचार उचित ही है महाराज । फिर आप किसी निणय मे भूल कैसे कर सकते है ? आपका प्रत्येक काय उचित अनुचित के चिन्तन के पश्चात ही होता है । फिर आपकी उपस्थिति कुम्भलगढ को भी चित्तौड से भी अधिक सुरम्य बना देगी ।

क्षमा करें अन्नदाता । यज्ञ मण्डप म गुरुदेव प्रतीक्षा कर रहे है । तुलादान का मुहूत निकट है । मालिनी ने महाराणा को नमन करते हुए निवेदन किया ।

कुम्भा हल्के से मुस्कराये । फिर चलने को उद्यत हुए । तुम नही आ रही हो प्रिये ? प्रश्न किया ।

मै नूतन वस्त्र और अलकार पहनकर आती हू । राजमाता के साथ । आप तुलादान कर यज्ञ के लिए आरम्भिक पूजन कीजिए । रानी ने उत्तर दिया ।

कुम्भा प्रसन्न मन यज्ञ मण्डप की ओर चल दिये । ज मोत्सव आयोजन का वह दिन उल्लास सहित व्यतीत हुआ । चित्तौड दुग के राजप्रासाद मदिरा के दीप स्तम्भ आदि पर दीप प्रज्ज्वलित किए गये । चित्तौड के नगरवासियो ने अपने भवनो पर भी दीपमाला की । प्रजा की रक्षा दायित्व राजा का होता है । प्रजा उसी राजा को प्यार करती है जो अपने दायित्व का निर्वाह करे आदश रूप हो । अपने कत्तव्य के प्रति सदा सोचते रहे । कुम्भा का व्यक्तित्व है ही ऐसा । प्रजा उनके प्रेम पाश मे बधी है और वे उनके स्नेह के बन्दी ।

इधर एक पीडादायक समाचार प्राप्त हुआ है। महाराणा कुम्भा ही नहीं समस्त राजकुल दु खी और संतप्त है। मेवाडाधिपति की राजकन्या रमा का पाणि ग्रहण गिरनार के राजा माडलिक के साथ हुआ था। जूनागढ गुजरात राज्य की सीमा से लगा हुआ था। माडलिक सदा स्वय को असुरक्षित अनुभव करते रह। गुजरात के सुलतान के साथ मैत्री सम्बन्ध बनाये रखने के लिए सदा प्रयत्नशील रह यादव राजा। फतहखा न गुजरात का शासक बनते ही माडलिक से युद्ध छेड़ा। अनेक आक्रमण करता रहा फतह खाँ। अनेक मन्दिर ध्वस किये मोहम्मद बेगडा के नाम से ख्याति मिली—किन्तु प्रत्येक बार कुम्भा ने माडलिक की सहायता की और जूनागढ पर अधिकार करने की उसकी आकाक्षा पूरी नहीं हुई। राजा माडलिक का जीवन दीप अप्रत्याशित ही बुझ गया। रमा का जीवन विपन्न है। राजमाता कुवर चूण्डा और राजगुरु मे विचारविमर्श चल रहा है। इन परिस्थितियो मे वैधव्य का अनुताप असुरक्षित होने की भावना राजकुमारी रमा को अधिक अभिशप्त करती होगी—निर्णय हुआ है रमा मेवाड लौट आए। मेवाड की प्रतिष्ठा और कुल मर्यादा की रक्षा होगी। उचित व्यवस्था महाराणा ने तत्काल की है रमा को लिवा लाने की।

एक अन्य परामर्श चल रहा है। महामात्य सेनाधिपति कुवर चूण्डा और मन्त्रि परिषद से मन्त्रणा कर रहे हैं महाराणा। कुम्भलगढ का दुर्ग राजप्रासाद देवालय आदि का निर्माण कार्य समाप्त हो चुका है। जैन मंदिर का निर्माण कार्य चल रहा है। दूसरे द्वार पर नागौर विजय के समय अखण्डित हनुमान की मूर्ति की स्थापना कर दी गई है। वेदी यज्ञशाला मे निराश्रित यज्ञ पूजा होनी चाहिए। भगवान श्री एकलिंग के श्री चरणों के निकट रहने का मन है। महाराणा चाहते हैं वे अब कुम्भलगढ म निवास करें। मेदपाट की वह दूसरी राजधानी हो। चित्तौड की अपेक्षा अधिक सुरक्षित भी है यह दुर्ग। कुम्भलगढ और चित्तौड के बीच निरन्तर सम्पर्क रहेगा। स्थानीय शासन कुवर रायमल चलायेंगे। और सुरक्षा के समन्वय के लिए सेनानायक दुर्गपाल और सैनिको की चित्तौड दुर्ग पर पर्याप्त व्यवस्था की जायेगी। चुने हुए सामन्त यहीं निवास करेंगे। किसी ने प्रतिवाद नहीं किया। यथा समय राजकुल के लिए पाँच रथो की व्यवस्था की गई। साथ ही पर्याप्त सख्या मे अन्य वाहन गज सेना अश्वारोही और पदातिको का साथ जाने का प्रबन्ध किया गया। समस्त जन कुम्भलगढ की ओर अग्रसर हुए। कुम्भलगढ अब मेदपाट की दूसरी राजधानी की भूमिका सम्पन्न करेगा। कुम्भलगढ स्थित दुर्ग के राजप्रासाद देव मन्दिर आदि पूर्व स ही सजा दिए गये हैं। नय सभा गृह नाट्यशाला आदि की समारोहपूर्वक प्रतिष्ठा होगी। दुर्ग का निर्माण कौशल महाराणा के निवास स साफल्य प्राप्त करेगा और उसका सौन्दर्य जीवन्त हो उठेगा।

चित्तौड के नगरवासी विदा की मुद्रा म मार्ग के दोनो ओर खडे है आगे आगे गज पर मेवाड का सूर्यमुखी राज्य ध्वज है। अश्वो पर वादक नगाडे बजा रहे हैं।

तुरही का निनाद गूंज रहा है। महाराज की अनुपस्थिति की भावी कल्पना से समाज दुःखी है। राजा ईश्वर का रूप है। उसकी इच्छा सर्वोपरि है। किन्तु कुम्भा को लग रहा है एक इतिहास पीछे छूट रहा है।

अठारह

एक सप्ताह का उपवास। केवल दो लवंग डालकर ऊष्ण किया हुआ जल का पान। हस्त में पार्थिव शिव लिंग स्थापित कर शिवार्चन। कुशिक सिद्ध साम प्रभु का आदेश यही था। कुवलयानन्द ने भी कहा था— तुम्हें दीर्घतपा बनना होगा शिवांगी। आज सप्ताह भर का अनुष्ठान पूर्ण हुआ। माघ शुक्ल पूर्णिमा शुक्रास्त पूर्व जलाशय में स्नान कर यथा विधि पूजन कर शिवांगी ने पार्थिव शिव-लिंग विसर्जित किया। निश्चिंत होकर कक्ष में आई। अपने वस्त्र ठीक किए। मुक्त केश-राशि को एकत्रित कर एक वेणी में गूंथा। मस्तक पर केशर अनुलेप कर कुंकुम बिन्दु अंकित किया। एक सप्ताह के निराहार से देह किंचित कृश हो चली थी— किन्तु मन किसी अज्ञात स्फूर्ति से प्रसन्न था। श्वास-प्रश्वास में निर्मलता का आभास। कौमार्य आभा से प्रदीप्त मुख। अनुव्रत ने सिद्ध श्री का आदेश सुना दिया था। श्री एकलिंग भगवान की मंगला आरती में सम्मिलित होकर गुरुदेव के समक्ष उपस्थित होगी शिवांगी।

शिवांगी ने लोटे में दुग्ध मिश्रित जल भरा। थाल में बिल्व पत्र पुष्प आदि सजाये। अनुव्रत को कक्ष के बाहर प्रतीक्षारत पाकर आश्चर्य हुआ।

तुम? उसने विस्मय से पूछा।

हाँ जीजी? मैंने पर्याप्त शीघ्रता की थी किन्तु आप स्नान और पार्थिव शिव लिंग के विसर्जन के लिए कक्ष से जा चुकी थीं।'

तुम्हें शीघ्र उठने और आने की आवश्यकता कौनसी थी?

आवश्यकता मुझे थी जीजी। एक सप्ताह निराहार एकासना कर आपने अपना व्रत पूरा किया है। आप पहले से ही पवित्र थीं अब पवित्रता के साथ-साथ चित्त शुद्धि भी हो गई। प्रभात में प्रत्यूष के पूर्व आपके दर्शन से मैं भी पावन हुआ।

शिवांगी को सुनकर हँसी आ गई। चित्त शुद्धि मेरी हुई। मेरे दर्शन कर पावन यह हुआ।

तुम अध्ययन रत रहीं। आचार्यों की शिक्षा और शास्त्रों के अध्ययन में

अनुरक्त रहो। इसी से पावन होगा तुम्हारा हृदय। आवश्यकता होगी तब मैं तुम्हे स्वय बुला भेजू गी अथवा खोज लू गी।

जब स्मरण करोगी उपस्थित हो जाऊगा। अब मन्दिर तक साथ चलू ँ। अब स्नान कर आया ही हूँ तो मगला-आरती मे सम्मिलित हो लू ँ।

तुम बडे चतुर हो अनु। शिवागी पुन हँस पडी। मेरी चित्त शुद्धि हुई अथवा नही भगवान ही जान किन्तु तुमसे बातें करना अच्छा लगता है। अन्दर का दु ख भूल जाती हूँ। सहज होते हुए कहती है शिवागी।

मेरा अपना कोई नही है जीजी। मुझे अपने माता पिता का कोई स्मरण नही। चाचा चाची के पास उपेक्षित रहकर पला बडा हुआ। उनके चार पुत्र पुत्रियो के साथ मैं भार स्वरूप ही था। उस आर्थिक विपन्नता मे छात्र वृत्ति पाकर यहा विद्यालय मे शास्त्रो का अध्ययन और अतिथि सेवा का सुख मिला। आप आ गई तो उस सुख मे अधिक वृद्धि हुई। कदाचित आपका अनुज बनने के लिए मैं अनुपयुक्त ही हूँ।

नही अनु ऐसा कुछ नही। जिसका आचरण इतना स्नेहिल हो और जो अति विनम्र हो वह अनुपयुक्त हो ही नही सकता। फिर तुम्हारी जीजी बनना मैंने स्वय स्वीकार किया था। अस्तु मन्दिर मे चलने की शीघ्रता करो। आरती कदाचित आरम्भ हो चुकी है।

आप मेरी प्रशसा कर रही हैं। अनुज के मधुर सम्बन्ध के कारण ही ऐसा है। अन्यथा मैं उस प्रशसा का पात्र ही कहाँ हूँ ?

और मैं पहले से ही पवित्र थी यह तुमने कैसे जान लिया वत्स ?

'इसमे रहस्य की कोई बात नही है जीजी। यदि आपकी भावना पवित्र न होती तो गुरुदेव आपको यहा रहने की अनुमति ही नही देते और आपको विशिष्ट नही कहते।

अनुव्रत की बात सुनकर शिवागी मुग्ध हुए बिना नही रही। फिर वे शीघ्रता से मन्दिर की ओर चल दिये।

शिवागी ने सिद्ध श्री को उस दीर्घ प्रकोष्ठ मे पुन पीठासीन पाया। मु दे हुए नेत्र उत्तरीय विरत शरीर। कठ मे रुद्राक्ष। दीर्घ घने केश कधो पर छितराए हुए। प्रौढ़ता के निकट किन्तु पुष्ट देहयष्टि मुख पर सयम के तप की दीप्ति। भाल पर त्रिपु ड सहित रक्त तिलक। सिद्ध श्री को भली भाति वह आज देख पाई। एक गहन दृष्टि उन पर डाल वह खडी रही। फिर न जाने किस श्रद्धा भाव से उन्हे नमन करने लगी—तभी सिद्ध श्री ने आँखें खोल दी। श्रद्धावत शिवागी को देखा।

श्वेत वमना शिवागी उन्हें वीतराग तापस-कन्या सी प्रतीत हुई। सप्ताह के निराहारोपरांत भी कही व्यग्रता नही। पूर्ण सशक्त सा शरीर लगा शिवागी को। जस गुरुदेव के सम्मुख सारी आशक्ति तिरोहित हो गई थी।

बैठो। चित्त शुद्धि अनुष्ठान तुम्हारा पूर्ण हुआ, बेटी। व्यतीत भूलकर वर्तमान म जीना आरम्भ करो पूर्व आत्मग्लानि और धिक्कार का भाव अब न रहे। फिर इसकी आवश्यकता जब तुम सर्वप्रथम यहाँ आई थी तब भी न थी।'

आपके आशीर्वाद म ही यह सम्भव हुआ है तात। आपने मुझे बेटी सबोधन दिया है फिर तात श्री ही कहूँगी। मेरे तात कौन थ जिनस मेरी माता का शरीर सम्बन्ध हुआ ? मैं नही जानती। गुरुदेव कहूँ किन्तु आपन दीक्षित कहा किया ? शिक्षा मिली दीक्षा नही। शिवागी न सविनय कहा।

शरीर सम्बन्ध आवश्यक भी नही। आत्म सम्बन्ध आवश्यक है। फिर सारे सम्बन्ध भावना से ही जुडते है शिवागी। मुझे देखो मैं गृहस्थ नही हूँ। अल्पायु मे सन्यासी हो गया। आजीवन ब्रह्मचर्य व्रती। मुझे अपने माता पिता का भान ही न रहा। फिर गुरुकृपा मिली। भवानी शकर को ही मैंने अपने माता पिता स्वरूप जाना। चन्द्रमोलिश्वर की अखड आराधना करता रहा। पशुपति नाथ की। पशुरूपी जीव के प्रति अर्थात् स्वामी शिव की। कर्म के पाश मे आबद्ध जीव शुद्ध चैतन्य स्वर आत्मन् ही तो हैं। किन्तु सस्कार वश अपनी यथार्थ सत्ता नही पहचानता। उसी सत्ता को पहचानना साधना का लक्ष्य है। सिद्ध श्री ने पुन आखें मीच ली। वे आत्मलीन हुए। अन्तर्मुखी यात्रा मे सलग्न से।

शिवागी मौन निकट बैठी रही। न जाने कब उसकी आखें मुदन लगी। भीतर का मौन कही मुखर हो उठा। प्रथम घण्टो की ध्वनि सुनाई देने लगी। फिर हल्के नीले प्रकाश का वलय सम्मुख प्रकट हुआ। वह वलय विस्तारित होता गया। सुनील आकाश मे समा गया। ॐ नम शिवाय। श्री लकुलीश देवाय नम ॥ ध्वनि सुनते ही शिवागी ने अपनी आखें खोलदी। सिद्ध श्री अपन नेत्र खोले हुए शिवागी की ओर दृष्टिपात कर रहे थे। मुख से जय करते हुए।

कैसा अनुभव कर रही हो बेटी ?' गुरुदेव ने पूछा भाग्यशाली हूँ कि आपके सम्मुख बैठी हूँ।

उसकी तुम पात्र ही हो। अन्त पुर मे सुरक्षित कोई स्त्री साध्वी बनी रहे उसका शारीरिक स्खलन न हो नितान्त स्वाभाविक है। सम्भव भी है। किन्तु अनेक पुरुषो के नित्य सम्पर्क के उपरान्त भी अपने सतीत्व की रक्षा कर पाना कठिन कम है। तुम मे वह आत्मबल है। भगवान शिव म श्रद्धा रखना। उस शक्ति का ऊर्ध्वीकरण होगा। अपने परम नित्य स्वरूप को पहचान सकोगी।'

किन्तु एक सन्ताप मन को सन्तप्त रखता है। जिस माता के गर्भ से मैंने जन्म लिया उसका जीवन तो साध्वी का जीवन रहा नहीं। वह संस्कार मुझे मिला है गुरुदेव। गुरुदेव ही कहूँगी। मेरा मन होता है। किसी अबोध बालिका के सदृश्य शिवांगी ने कहा।

वह तुम्हारा निरा भ्रम है बेटी। नारी धरणी है। पाप-पुण्य धर्माचार अत्याचार सभी का भार वहन करती है। सब सहती है। अत पवित्र है। तुम्हारी जननी भी पवित्र थी। सामाजिक विधान पूर्ण किए बिना कौमार्य में किसी पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध बहुत बड़ी विवशता अस्तित्व का संकट पुरुष का मिथ्याचार के कारण रहा होगा। उस किए का पश्चाताप आजीवन रहा होगा उन्हें। बरबस किया हुआ आचरण। भयभीत होकर। यदि वे उसमें काया से ही नहीं मन से भी लिप्त होतीं यदि आत्मग्लानि प्रबल न होती तो तुम्हें इस प्रकार घर छोड़कर अपना मार्ग खोजने को प्रेरित न करतीं। चक्र से तुम्हारी रक्षा न होती जो मन्दिर का सर्वस्व था। अत हृदय की मलीनता त्याग दो शिवांगी।

प्रयत्न करूँगी। आपकी बात कभी नहीं भूलूँगी।

भगवान श्री एकलिंग कृपा करेंगे। प्रतिथि सदा यदा कदा उनकी नृत्य-संगीतोपासना यही तुम्हारा दायित्व होगा। महाशिवरात्रि का पर्व निकट है। नव-निर्मित निज मण्डप नवीन ध्वजदण्ड और प्राण प्रतिष्ठा के कार्य मेवाड़ाधिपति कुम्भा के सानिध्य में सम्पन्न होंगे। मेरी इच्छा है इस उत्सव में क्षेत्र की गरिमा के अनुकूल तुम्हारा विशेष नृत्य इस आयोजन को समापन करे। तुम्हारी कला का महाराज को परिचय मिले। वे स्वयं संगीत-मर्मज्ञ और कला अनुरागी हैं। ध्यान रहे वे स्वयं नृत्य कला विशारद और श्रेष्ठ वीणा वादक हैं। प्रदर्शन में कोई त्रुटि न रहे। अत अभ्यास आरम्भ करो। अभी पन्द्रह दिन उत्सव में शेष हैं।

जो आज्ञा गुरुदेव। कहकर शिवांगी आसन से उठ खड़ी हुई। सिद्ध श्री को नमन किया।

कल्याणम् अस्तु। स्वस्ति भव। सिद्ध श्री ने आशीर्वचन उच्चारित किए।

शिवांगी मन ही मन कृतकृत्य हुई।

महाराणा के आगमन से कुम्भलगढ़ दुर्ग में नये जीवन का संचार हो रहा है। राजगुरु तिलहभट्ट स्वयं आए हैं। उनके साथ अनेक विद्वान आचार्य। वेदी यज्ञशाला में उनके मार्गदर्शन में महायज्ञ चल रहा है। देवी मन्दिर में चन्द्रिका देवी नवग्रह मातृकाओं का पूजन एवं नीलकण्ठ महादेव मन्दिर में शिवार्चन महाभिषेक के आयोजन में कुम्भा स्वयं उपस्थित रहे हैं। राजप्रासाद और सभागार आदि का विधि-विधान से वास्तु पूजन होगा ग्रहशान्ति आदि सम्पन्न किए गए हैं। कुम्भलगढ़ जनपद की प्रजा उत्सव में सम्मिलित हुई है। महाराज के दर्शन का उल्लास हृदयों में

सजोए हुए। ब्रह्म भोज अतिथि भाज और आर्थिक रूप से विपन्न और निधनो को वस्त्र आदि वितरित किए जा रहे है। दान कम का क्रम कई दिनो से चल रहा है। राजमाता रानिया युवराज उदयसिंह और कुवर रायमल पुत्र-वधुएँ-प्रीतदेवी और शृगार देवी सभी पूर्ण आहुति हेतु महाराणा के साथ यज्ञशाला म उपस्थित है। यज्ञोपरान्त महाराणा स्वय राजगुरु आचाय पण्डितो की पाद-पूजा कर दक्षिणा देंगे। सूत्रधार मण्डन को पुरस्कृत करेंगे महाराज।

राजप्रासाद के कक्षो की भित्तियो पर दालानो म नाटशाला म चित्रकारो ने भित्ति चित्रो की रचना की है। चित्राकन अब भी चल रहा है। चित्रण के साथ-साथ मन्दिरा स्तम्भो मडपो की छतो पर अनेक शिल्पी देवी देवताओ की मूर्तियो तोरण पूर्ण एव अर्द्ध कमल गज तथा जन-जीवन से सम्बधित आकृतियो का तक्षण काय करन मे सलग्न हैं इन कृतियो मे अपनी सौदर्यानुभूति की अभिव्यक्ति कर रहे हैं।

दिवसकर की व्यस्तता के पश्चात् रात्रि को महाराणा को समय मिला है। नए राजप्रासाद के कक्षो का निरीक्षण वे स्वय करेंगे। उनके आगमन के पूव राजमाता रानियो राजकुमारो पुत्र-वधुओ के कक्षो म दीपाधारो पर दीपमाला का आयोजन किया गया है। इस निरीक्षण और रात्रि-भोजन के उपरान्त नव निर्मित नाटयशाला मे नृत्य सगीत का आयोजन है। राजकुल आमात्य सेनापति सामत-सरदार तथा प्रजाजन सभी आमन्त्रित हैं। दशको के बीच महाराणा कुम्भा स्वय आसन ग्रहण करेंगे। कुम्भलगढ आन के पश्चात् यह प्रथम आनन्दोत्सव होगा। आमोद प्रमोद की प्रथम रात्रि।

अतत महाराणा की कुम्भलगढ मे निवास करन की कामना पूरी हुई। राजकीय वैभव ऐश्वय धन यश, कीर्ति रानियाँ पुत्र पुत्र-वधुएँ आत्मीय और स्वजन सभी कुछ प्राप्त हुआ। भगवान श्री एकलिंग कृपावान हुए। ब्रह्म मुहूत मे जाग चुके है महाराणा ऊपर कक्ष से बाहर खुले मे पूव की ओर नमन कर रहे हैं श्रद्धावत।

आकाश मे तारों का प्रकाश मलीन हो चला है सप्तऋषि अब भी प्रकाशित है। शुक्र तारा अस्त होने को है।

उन्नीस

पन्द्रह दिवस कैसे बीत गए? पता ही नही चला। फाल्गुन कृष्णा त्रयोदशी का मगल प्रभात। कलाशपुरी मे महाराणा पधार चुके हैं। महाशिवरात्रि का

शिवाचन महाभिषक तथा यज्ञ आदि अनुष्ठान आरम्भ हो चुके हैं। निकट जनपद से श्रद्धालुओं के यूथ प्रात स ही एकत्रित हो रहे हैं। आकर्षण दुगना है। देव दर्शन, राजा के दर्शन। विद्वानो पण्डितो को सादर आमन्त्रित किया गया है। वेदमंत्र सिंचित तथा पूजित नया ध्वज दंड और भगवी पताका शिखर पर स्थापित हो चुके हैं। गर्भमण्डप म प्राण प्रतिष्ठा का समारोह चल रहा है। अग्निकुण्डो म सतत् आहूतियां और मन्त्रो के समवेत स्वर से सारा वातावरण पावन हो रहा है। बिल्व पत्रा पुष्पो फलो आदि के ढेर पुजारी बार बार हटा रहे हैं। नव निर्मित गर्भ मंडप म घृत दीपक प्रज्ज्वलित हैं। बिल्व पत्र एव पुष्पा से आच्छादित चतुर्मुखी श्यामवर्णीय देव प्रतिमा की छटा निराली हो रही है ज्यो ज्यो सूर्य प्रखर हो रहा है प्रवेश द्वार पर भीड बढती जा रही है। मार्ग मिलना कठिन हो रहा है। कुशिक सिद्ध श्री साम प्रभु सहित कैलाशपुरी के पुजारीगण विद्यालय के शिक्षक प्राध्यापक सेवक आदि व्यवस्था म अति व्यस्त हैं। मंदिर क बाह्य मडप मे स्थान स्थान पर पंडित और भद्रजन शिवाष्टक स्तोत्र का सारस्वत पाठ करन म लीन हैं। दीपाधारो पर दीप प्रज्ज्वलित हैं। पच यज्ञ कुडो की पचाग्नि से घिरी मध्य म स्थित मुख्य यज्ञवेदी पर पंडितो के साथ कुम्भा स्वय बठे हैं। यज्ञ आहुतियाँ समाप्त हुइ। गायत्री तथा महा-मृत्युजय मत्रो की आहुतियाँ आरम्भ हुइ। तदनन्तर स्वस्तिवाचन पूर्णाहुति और शाति पाठ सम्पन्न हुआ। मठाधीश सिद्ध श्री के साथ महाराणा अलग मार्ग से गर्भद्वार पर पहुँचे। शीश नवाकर श्री एकलिंग भगवान को प्रणाम कर देव पूजन किया। तुरन्त ही शिवपूजा की आरती आरम्भ हुई। आरती के छदो के स्वर अनेक घटो और नगाडो के निनाद म स्पष्ट सुनाइ नही दे रहे थे। ॐ नम शिवाय। लकुलीश देवाय नम जयघोष अनेक बार गूँजा। आरती समाप्त हुई। प्रमुख पुजारी ने शख मे जल भर प्रथम महाराणा तदनन्तर उपस्थित जन समुदाय को अभिसिंचित किया। सभी न आरती ली। प्रसाद वितरित हुआ। महाराणा ने भेंट अर्पित की—उनकी ओर से आमात्य ने श्री एकलिंग भगवान के मंदिर के व्यय तथा अतिथि पोषण विद्यालय हेतु नागहृद कठवावद मलक खेटक तथा भीमाणा नामक चार ग्राम प्रदान करने की घोषणा की। महाराणा कुम्भा की जय जयघोष अनेक बार सुनाई दिया। घोषणा क तुरन्त बाद सिद्ध श्री ने महाराणा के मस्तक पर स्वस्ति तिलक अंकित कर पुष्पमाला पहनाई। आशीर्वाद के पश्चात् ब्रह्म भोज आरम्भ हुआ। भोजन परोसन के साथ साथ गुरुस्त्रोत के सामूहिक पाठ स सिद्ध श्री की अचना की गई। ब्रह्मभोज और अतिथि पण्डितो विद्वानो के भोजन के पश्चात् महाराणा ने भोजन ग्रहण किया। विश्राम हेतु सिद्ध श्री के साथ विशेष सज्जित अतिथि भवन की ओर महाराणा चले गए। देर सायकाल तक श्रद्धालुओं के लिए भण्डारा चलता रहा। श्रद्धा भक्तिमय शिवाचना के आनन्द की सहिता सतत् प्रवाहित होती रही। देव दर्शन की विशेष व्यवस्था आयोजित थी। लोग अब भी मंदिर की प्रदक्षिणा कर रहे थे।

मध्या प्रगाढ हुई। पूर्ण देवालय स्तम्भो और निकटस्थ भवनो पर दीपमाला जगमगा उठी। शुक्रोदय के साथ साथ सुनील आकाश म तारे प्रकाशमान हो गए। त्रयोदशी का चन्द्रमा अरावली के पीछे स उदय हुआ। उसकी धु धली चादनी सवत्र बिखरने लगी।

महाशिवरात्रि के इस पावन पव पर शिवागी का प्रथम नत्य-आयोजन है। गभ मण्डप को सभा मण्डप से भाग बनाकर जोडा गया था। सभा मडप आम्र पत्रो की वदनवारो पुष्पमालाओ से सुसज्जित दीपाधारो से प्रकाशित हो रहा था। देव-प्रतिमाभिमुख मच पर महाराणा मठाधिपति आमात्य आदि के बैठने की समुचित व्यवस्था थी। मध्य म महाराज का विशेष आसन था। प्रेक्षको का समूह चतुष्कोण पक्तियो म आसीन हो चुका था। सभा मडप म महाराज के आगमन की प्रतीक्षा थी। सर्वाधिक उनकी प्रतीक्षा थी शिवागी को। सगीत-ममज्ञ और नत्य कला पारखी हैं महाराज। स्वय कुशल वीणावादक। शिवागी की कला की परीक्षा की घडी निकट आती जा रही है। शिवागी के हृदय की गति प्रतिक्षण तीव्रतर हो चली है। सिद्ध श्री कह चुके हैं प्रदशन म त्रुटि न हो।

महाराणा कुम्भा ने सिद्ध श्री तथा अन्य विशिष्ट अतिथियो के साथ सभा-मण्डप मे प्रवेश किया। प्रेक्षक एक साथ नमन की मुद्रा बनाए उठ खडे हुए। उनके कण्ठों से स्वत जय घोष उच्चारित होने लगा। प्रजा ने अपने राजा के प्रमुदित मन से दशन किए—उन्नत ललाट दिव्य पुरुष सी सुन्दर आकृति पौरुष दर्शाती दीघ मूछें कपोलो को छूते केश और जुल्फें आजानु-बाहु, लम्बा कद स्वण खचित श्वेत रेशमी अगरखा कानो मे मोती शीश पर स्वण रेख मण्डित पगडी और कलगी, केशरिया पटके से कसी कमर। कटार खोसी हुई। गले म कुकुमा से चमकत रत्न मुक्ता हार। मुख पर माधुय ओज समन्वित विनयान्वत अनुग्रह का भाव। अभिवादन स्वीकारते युगल हस्त। शिवागी न भी देखा। अपलक देखती रही।

महाराणा के सिंहासनारूढ होते ही अतिथि और प्रेक्षक बैठ गए। मृदग की थाप के साथ झल्लरी, वीणा और सितार के तार झकृत हो उठे। प्रथम गायकों न गणपति वदना की। फिर शिव स्तुति गीति-प्राथना। प्रभु का यशगान। गीत-माधुय का स्त्रोत प्रवाहित हो चला। अनेक राग-रागनियो मे बद्ध सगीत समाप्त होत ही गायन नमन कर चलने को उद्यत हुए। महाराज ने किंचित स्मित से अपना शीश हिलाकर प्रशसा का भाव दर्शाया। लघु अन्तराल के पश्चात् शिवागी मच मे सम्मुख प्रस्तुत हुई। सुन्दर तन्वागी देह मस्तक पर रक्त कुकुम तिलक रेशमी स्नाक कचुकी उरोजो पर कसी हुई वक्ष पर एकावली हर और सुकुमार चमकते चपा केतकी पुष्प माल्लिका कृष्णकटि मे मेखला। आलता रजित आरक्त चरण और पैरो मे नूपुर झूलती पुष्प माल्लिका मण्डित एक वेणी बधी केशराशि धनुषाकार भकुटियां कानो को स्पश करती हुईं विशाल नेत्रो म सभ्रम लज्जा का भाव। क्षण

भर को प्रेक्षको म शांति छा गई। फिर फुसफुसाहट व प्रश्न उठन। कौन है? कौन है नई नर्तकी? किसी देव बाला सी। अप्सरा सी।

शिवागी ने प्रथम गभ मण्डप स्थित देवाभिमुख होकर प्रतिमा को करबद्ध नमन किया फिर सिद्ध श्री तथा महाराज की ओर प्रणाम की मुद्रा म झुकी। प्रेक्षक सास रोके प्रतीक्षा करत रहे।

दूसरे ही क्षण मृदग पर थाप पडी। सितार और सारगी क तार झङ्कृत हुए। परो मे बधे नूपुर बज उठे। एकाग्रचित्त शिवागी न पूजा नत्य आरम्भ किया। नत्य रत शिवागी गभ मण्डप तक पहुँची। अभिवादन की मुद्रा म झुकी। पुष्पाजलि अर्पित कर पुन सभा गृह के मध्य मच पर आ गई। फिर नवीन चेतना अपने परो म भर नृत्य कर उठी दूसरी नृत्य रचना। सम्पूण वाद्य तीव्रता से बजे। प्रथम अभिनय द्वारा कैलाश पवत पर आसीन समाधि म लीन शिव का रूप धारण किया। नेपथ्य मे शिव स्तोत्र का सस्वर गायन आरम्भ हुआ। शिव रूप धारण करते-करत शिवागी उमा रूप का अभिनय कर उठी। तपश्चर्या लीन पावती। सुकुमारता और लालित्य अगो मे करे हुए। प्रभु माहेश्वर के प्रणय मे विह्वल। परम-तत्त्व के वियोग म भटकती आत्मतत्व सी। नत्यरत। नेत्र मूद। आत्मलीन होती हुई। पुन उल्लास की अनुभूति दर्शाती सी चरणो मे आवेग भरे आनन्द की चरम सीमा का स्पश सा करती हुई तीव्रता से नत्य कर उठी। आरोही स्वर लगाते हुए वीणा द्रुतगति से बजी। मृदग का ठेका अधिक तीव्र हुआ। भावावेग म शिवागी भूल गई कि वह केवल नत्याभिनय कर रही है। वह भूल गई कि उसका नत्य प्रदशन मेवाडाधिपति और मठाधिपति के सम्मुख हो रहा है। किसी अनात वदना का भाव जगा। भावावेश मे नेत्रो मे अश्रु बिन्दु झलक आए। गभ मण्डप के द्वार तक नत्य करते करते वह पृथ्वी पर गिर पडी। उसे मूछना सी आ गई। बजते वाद्य यकायक रुक गए। सिद्ध श्री सोमप्रभु जैसे किसी समाधि से जागे। 'शिव शिव उच्चारण करते हुए आसन से उठे। पृथ्वी पर पडी शिवागी के निकट गए। जल मगाया। शीतल जल के छीटो से जैसे शिवागी की चेतना लौट आई। क्षमा करें गुरुदेव कहते हुए वह उठी। वस्त्र ठीक किए। फिर महाराज को और प्रेक्षकों को नमन किया। प्रथम तो वे सब दग से रह गए। फिर दीघ करतल ध्वनि से सभा मण्डप गूज उठा। साधु साधु' के शब्द सुनाई दिए। महाराणा को शिवागी दिव्य नत्यागना सी लगी। कला की अप्रतिम प्रतिमा सी। सभा समाप्त हुई। सुप्रभात मे श्री एकलिंग के दशन कर महाराणा कैलाशपुरी से विदा ले रहे हैं। कुम्भलगढ की ओर प्रस्थान करने की वेला आ पहुँची है। मन्दिर के मुख्य प्रवेश द्वार के बाहर रथ अश्वारोही सैनिक और पदातिक प्रतीक्षा मे हैं।

शिवागी ने शीघ्रता से दशन किए। फिर महाराज को विदा दने वालो मे जा खडी हुई। महाराणा कुम्भा कुशिक सिद्ध श्री सोम प्रभु के साथ अतिथि भवन

से बाहर निकले। अमात्य सामत पीछे पीछे चलने लगे। प्रतीक्षारत [illegible] सभी को वे प्रति नमन कर रहे थे। सहसा श्वेत वसना शिवागी पर दृष्टि [illegible] महाराज रुक गए। सिद्ध श्री आगे आए। यह शिवागी है महाराज। नर भगवान चन्द्रमोलि का समर्पित श्रेष्ठ कलावत।' सिद्ध श्री ने कहा। शिवागी ने सविनय नमन किया। महाराज किंचित मुस्कराए, 'हम इन्हें पहचानते हैं सिद्ध श्री। आपने सत्य ही कहा। इनकी कला हम देख चुके हैं। वह हमारा एक अविस्मरणीय अनुभव था।

अपनी प्रशसा सुन शिवागी का मुख लज्जा से आरक्त हो उठा। यह आपकी कृपा है गुरुदेव और महाराज की प्रशसा मे भावातिरेक। आपकी प्रशसा पाकर मैं कृतकृत्य हुई।' शिवागी पुन विनीत हुई।

एक अनुरोध है सिद्ध श्री—' महाराणा ने कहा

कहिए महाराज—

शिवागी को हम राजनर्तकी का पद देना चाहते हैं। नृत्योपासना का दायित्व मात्र इनका होगा हमे स्मरण रहेगा यह शिवार्पिता हैं। आपकी आज्ञा चाहिए।'

सिद्ध श्री एक क्षण चुप रहे। शिवागी तटस्थ खडी रही।

यदि शिवागी को आपका आश्रय मिले तो मुझे क्या आपत्ति होगी? तथापि शिवागी क्या चाहती है यह जान लूँ?' सिद्ध श्री बोले।

मेरी इच्छा गुरुदेव न जान पाएँ सभव ही नही है। शिवागी ने कहा।

"कुम्भलगढ म हम कोई कष्ट नही होने देंगे। महाराणा ने कहा।

यह भी भगवान शिव की इच्छा है। उन्ही की प्रेरणा।' कहा सिद्ध श्री सोम प्रभु ने।

तो हम आपकी स्वीकृति समझें? महाराज ने प्रश्न किया।

आपकी आज्ञा का पालन होगा। वहा भी भगवान शिव की सेवा मे रहेगी शिवागी। तुम्हारे मन मे कोई दुविधा तो नही बेटी? उन्होंने शिवागी की ओर देखकर पूछा।

नही गुरुदेव। आपके वचनो मे सदेह कसा? फिर गुरुजनो के आदेश की पालना म कल्याण ही होता है। शिवागी ने नम्रता से कहा। मैं महाराज की अनुगृहीत हूँ।

ऐसा ही होगा। गुरुदेव बोले।

मदिर के मुख्य द्वार पर विदा देकर सिद्ध श्री अपने कक्ष की ओर लौटे। प्रथम बार सम्पूर्ण लज्जा और सकोच त्यागकर गुरुदेव के सामने शिवागी ने अपनी

बात कही थी। प्रथम बार अपनी कला साधना की सफलता का अनुभव उसे हो रहा था। महाराज से वार्तालाप का भी प्रथम अवसर था।

उस रात्रि शिवागी सो नहीं पाई। सम्पूर्ण रात्रि विचारों के भवर में उलझी रही। अपने व्यतीत पर सोचती रही। उसके कर्मफल अभी शेष हैं। इस आयु में विराग कठिन होता है। गुरुदेव ही ने कहा था। गुरुदेव ने यह भी तो कहा था— व्यतीत को भूलकर वर्तमान में जीना प्रारम्भ करो।

यह कैसा वर्तमान है? उसका भविष्य क्या है? मथुरा के "उदयाचल" आश्रम से रुद्रक के साथ कुवलयानन्द के साधना केन्द्र में बिताए कुछ दिन फिर कैलाशपुरी का यह प्रवास। और अब मेवाड़ाधिपति की इच्छानुसार उस कैलाशपुरी को छोड़कर कुम्भलगढ़ में निवास करना होगा।

भगवान शिव क्या चाहते हैं? उसके लिए भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है। प्रभु अनुग्रह करें। शिवागी का हृदय अनायास किसी अहोभाव के पुलक से भर गया।

बीस

कुम्भलगढ़। श्री एकलिंग मन्दिर के महाशिवरात्रि उत्सव से महाराणा लौट आए हैं। महारानी अपूर्वदेवी के कक्ष में विराज रहे हैं महाराज, इस बार वे पर्याप्त प्रसन्न हैं। शिवागी के नृत्यांजलि के रूप में एक अलौकिक अनुभव हुआ है। सारा वृत्तान्त उन्होंने महारानी अपूर्वदेवी को सुनाया।

सचमुच सुनकर विस्मय हो रहा है स्वामी। योगियों को तो साधना करते करते अन्तर्जगत में जाते भावहीन होते सुना है जहां सब कुछ निस्पन्द हो जाता है, गतिहीन। वे ऊर्ध्वारोहण करते हैं परम सत्ता की, उन्हें साक्षात्कार होता है किन्तु एक नर्तकी नृत्य करते-करते भावलीन हो मूर्छित हो जाए अद्भुत लगता है। रानी ने कहा।

इसमें अद्भुत कुछ भी नहीं प्रिये? कलाकार के लिए कला स्वयं में एक महती साधना है। अपने सृजन और उसकी परिणति में वह एकाग्र होता चला जाता है। एकाग्रता का चरम बिन्दु वहां ऊर्ध्वारोहण का क्षण है। वह भी एक अन्य प्रकार के सत्य की ही खोज है। महाराज ने कहा।

मैं उत्सुक हूं उस प्रदर्शन को देखने के लिए। रानी बोलीं।

शिवानी का हमने राजनर्तकी का पद दिया है किन्तु वह देवालयों विशिष्ट पर्वों पर ही नृत्य करेगी। उस कला का दर्शन के तुम्हें अनेक अवसर मिलेंगे।

'शिवानी बहुत रूपवती है देव ?

हा रानी सचमुच रूपवती किन्तु गुणवती भी। पहली भेंट में ही हम मुग्ध हुए बिना न रह सके। उसके व्यक्तित्व और कृतित्व दानो पर।

स्वामी आनन्दित हैं यह उसी का द्योतक है।

इधर युवराज उदय से हमारी भेंट नहीं हुई। महाशिवरात्रि उत्सव से लौटे हुए भी दो दिवस व्यतीत हो गए उदय हमसे मिले नहीं। इस उपेक्षा का कारण हम जानना चाहते हैं प्रिये।"

स्वामी ? अन्यथा न हो। युवा सुलभ चंचलता और "

चंचलता नहीं उद्दंडता है रानी। हमारा तिरस्कार। हमने और भी कुछ सुना है। महाराज उत्तेजित हो उठे।

महारानी के हृदय में पुत्र प्रेम जागृत हुआ युवराज का कहीं अनिष्ट न हो जाए ? वे जानती हैं सचमुच ही उदय अब महाराज के प्रति विनीत भाव नहीं रखता। वह जैसे उनके अनुशासन में नहीं है। उसका मन पर्याप्त उद्विग्न है।

हमारी बात का उत्तर नहीं मिला प्रिये ? महाराज ने दोहराया।

कारण मुझे भी ज्ञात नहीं है महाराज। ठीक ठीक कुछ बता नहीं सकती। केवल इतना ही सुना है वत्स उदय अनुभव करते हैं राजकोष का अपव्यय हो रहा है। दान दक्षिणा विद्वान-सत्कार कला संरक्षण और देव मन्दिरों के व्यय हेतु विशाल धनराशि का निरन्तर निकल जाना राज्य के लिए राजकुल के लिए भविष्य में संकट उपस्थित कर सकता है।

यह हम पर प्रहार है रानी। हमारी भावनाओं हमारी नीतियों का अपमान है। महाराणा उठ खड़े हुए।

क्षमा करें महाराज मेरा कथन अनुचित लगा हो। उदय कुछ भी सोचे मेरे हृदय में आपके लिए जो निष्ठा आदर और प्रेम है वह अक्षुण्ण है। कदाचित उदय का कोई भ्रम है।

उस निष्ठा आदर और प्रेम को हम जानते हैं प्रिय। तुमने छोटी रानी होकर भी हमें युवराज दिया प्रथम पुत्र। हमारा तुम पर विशेष अनुराग है। इतने मुक्त मन से हम कभी गौडी रानी से भी नहीं मिले। महाराज पुनः आसन पर बैठ गए।

मैं जानती हूँ स्वामी। ज्येष्ठी इसीलिए मुझसे अपने हृदय ही हृदय में रुष्ट हैं। मुझमें ईर्ष्या है।

हानी नहीं चाहिए। फिर हमने आप सभी को समान समझा है। उन्हें कोई कष्ट न हो सदैव हमे ध्यान रहा है। हमने उनके इस अनुमान को कम करने के लिए कि उत्तराधिकार उदय को मिलेगा कुमार रायमल को नहीं। हमने चित्तौड़ का स्थानीय शासन का प्रमुख पद उन्हें दिया है। यह उत्तरदायित्व हमने सोच विचार कर ही उन्हें सौंपा है।'

किन्तु इस व्यवस्था में भी उन्हें किसी षड़यन्त्र की गंध आती है देव? वे कदाचित समझती हैं रायमल को राजसत्ता से दूर रखने की यह एक चाल है जो मेरे मस्तिष्क की उपज है।' महाराज से रानी अपूर्वदेवी के मन की भावना छिपी न रह सकी। आपको दुःखी करने की बात मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकती स्वामी। किन्तु महाराणा को एक आघात सा लगा। प्रथम बार वे अन्दर कहीं आहत से हुए। न्याय करना भी कभी कभी अभिशाप बन जाता है। उन्होंने तो वही करना चाहा जो करणीय था। युवराज उदयसिंह की धारणा से वे अधिक दुःखी हुए। जो कुछ वे आजीवन करते रहे वह प्रजा के हित में ही करते रहे। मेवाड़ राज्य को खोई हुई गरिमा प्राप्त हुई युद्धों में विजय मिली—प्रजा ने उन्हें भरसक प्रेम दिया। उन्होंने सदा प्रजा के हित की ही कामना की। किलों का निर्माण सुरक्षा के लिए आवश्यक था। कला की, साहित्य की उपासना और उसका संवर्धन उनके स्वभाव की एक विवशता। सांस्कृतिक आग्रहों के कारण वे स्वयं रचनाएँ कर पाए। फिर यह कैसा विभ्रम है? राष्ट्र के प्रति निष्ठा मातृभूमि की रक्षा और प्रजा के कल्याण के लिए शक्ति भर वे कर्म करते रहे। सुख साम्राज्य सम्मान और आनन्द यश और कीर्ति सभी कुछ बदले में मिला। किन्तु ऐसा कौनसा अपराध हो गया कि अपना ही पुत्र विमुख हो रहा है वही पुत्र जिस पर उन्हें विशेष ममत्व रहा है। यह कैसी वेदना है? किसी कटु सत्य को समझ लेना चाहते हैं महाराज। फिर उदय को कौन उनके विरुद्ध भड़का रहा है? महाराज और युवराज के मध्य विग्रह के बीज कौन बो रहा है? इसका पता अब लगाना ही होगा। यह जानकर ही रहेंगे महाराज। अन्तःपुर की राजनीति का कौनसा कुचक्र? कैसा है यह षड़यन्त्र?

उस रात्रि ठीक से सो नहीं पाए महाराणा। रह रह कर महारानी अपूर्वदेवी का कथन स्मरण हो रहा था। उदयसिंह की उनके प्रति अवमानना का कारण विदित हो ही गया।

उधर गौड़ी रानी को दासी गंगा ने सूचना दी है, महाराज रानी अपूर्वदेवी के भवन में हैं। रात्रि वहीं शयन करेंगे। गौड़ी रानी दुःखी हुई। ज्येष्ठी होने पर भी कितनी उपेक्षा? उपेक्षा ज्येष्ठी होने की ही नहीं। उनके अप्रतिम सौंदर्य की भी। सौंदर्य जो पुरुष को पागल बनाता है अपूर्वदेवी से कहीं अधिक सुन्दर है वे। अपूर्वदेवी कम सुन्दर हैं तो क्या हुआ। आयु में काफी छोटी किन्तु कमनीय। कदाचित

बुद्धिमान। मगीन कला और साहित्य की चर्चा स्वामी उसी से करते हैं। वे उन्हे इसका पात्र नही समझते।

गगा ने आकर पूछा— स्वामिनी प्रसाधन नही करेंगी ? कदाचित महाराज कक्ष म पधारें ?"

नही गगा प्रसाधन रहने दे उसका क्या होगा। फिर प्रसाधन कर स्वामी की प्रतीक्षा करते रहना कितना आहत करता है ? गौडी रानी ने वेदना से कहा।

मैं जानती हूँ स्वामिनी। परिचारिका सही किन्तु एक नारी भी हूँ मैं।'

तू जो सोचती है वैसा कुछ नही है गगा। महाराज की मुझ पर उतनी प्रीति नही जितनी छोटी रानी पर है। मैं ज्येष्ठी अवश्य हूँ किन्तु युवराज उदय की वे माता हैं यह क्यो भूलती है वे ? मुझे कुवर प्राप्त हुआ। मैं पुत्रवती बनी। गौरवान्वित हुई हूँ मैं।'

गगा ने कहा— क्षमा करें स्वामिनी। रात्रि का प्रथम प्रहर समाप्त होने को है। अब विश्राम करें। मुझे भी सोने की आज्ञा दें।

हाँ, तू अब जाकर सो। मुझे इसका स्मरण ही नही रहा। गौडी रानी ने अपने क्षोभ को दबाकर कहा। पति ही नही प्रेमी के स्वरूप मे पाने का सौभाग्य अपूर्वदेवी को ही मिला ह—सोचा गौडी रानी ने।

'नही प्रीत। हम क्षमा नही मागेंगे। न बापू सा से न मा सा से। हम मेदपाट के युवराज है। वह सम्मान हम मिलना ही चाहिए। हमे उद्दण्ड अनुशासन-हीनता और न जाने क्या क्या समझते रहे हैं बापूसा। चित्तौड की शासन व्यवस्था रायमल को सौंपी गई है। जैसे हम सवथा अयोग्य हैं। यह हमारा अपमान है।' युवराज ने अपनी पत्नी प्रीतकुवर से कहा।

बापूसा जो विचार करते हैं वह ठीक है स्वामी आपके हित मे ही है। अनुशासन से जीवन सवरता है। आप मेदपाट के भावी अधिपति है। आपका सयम सब का दिशा निर्देश करेगा। —प्रीतकुवर बोली।

'तो आप भी हमे असयमित और आचरणहीन मानती हैं। हम अब बडे हो गये। जो चाहे करने के लिए स्वतत्र हैं। फिर यह अकुश क्यो ? उदयसिंह उत्तेजित हो उठा।

'युवराज के सम्मुख सत्य कहन पर भी प्रतिबन्ध है क्या ? प्रीतकुवर ने पूछा।

कैसा सत्य ? और प्रतिबन्ध तुम पर क्यो ? वह तो मुझ पर ही है। इधर माँ सा कहती हैं मुझमे अभी समझ नही। किन्तु हम सब समझते हैं। हम जानते

हैं राजकोष का दुरुपयोग हो रहा है। हम यह भी जानत है दान-धम के नाम पर धन उदारता से दिया जा रहा है। बापू-सा अपना जीवन भोग चुके। वे अब वृद्ध हो चुके। मेवाड को कोई युवा शासक चाहिए। काका खेमा कहते हैं बापू सा को राज्य लिप्सा है वे सिंहासन सरलता से नही छोडेंग। अ य कई साम त हमारे साथ ह। हमे कुछ करना ही होगा।

काका खेमा सा न मेवाड के शत्रुओ का साथ दकर मातृ भूमि के प्रति बापू सा के प्रति अपराध किया है। उनके अपन मन म मेवाड का सिंहासन पाने की लालसा रही ह। जबकि उसके यायसगत अधिकारी बापू सा ही थे। मैं सावधान करना चाहती हूँ स्वामी आप उनके बहकावे मे न आए। वे आप और बापू-सा मे शत्रुता का भाव जगा रहे हैं जिससे मेवाड दुबल हो जाए। शत्रु उस पर अधिकार कर सके—भगवान श्री एकलिंग क्षमा करे। कुछ अशुभ न हो।

हम शुभ अशुभ की कोई चि ता नही। यह राजनीति है तुम नही समझ सकोगी प्रीत कु वर। राजसत्ता पान के निमित्त सब कुछ जायज है। यह हमारे अपने अस्तित्व का प्रश्न ह। हमारी प्रतिष्ठा का। मेवाड के युवराज की प्रतिष्ठा का। हम कुछ करना ही होगा। अवश्य कुछ करना होगा।' उदयसिंह उत्तेजित हो उठा।

युवराज को व्यथ की उत्तेजना शोभा नही देती। सहिष्णु बने रहन मे ही हित है।'

'यह यथ की उत्तेजना नही है प्रात ? उस दिन सभा कक्ष मे एक छोटी सी भूल पर समस्त सभासदो साम तो और आग तुको के सामने बापूसा ने हम से स्पष्टीकरण मागा। हम अपमानित किया। और फिर हम उद्दण्ड और अनुशासनहीन करार दिया। वह अपमान हम भूले नही हैं। फिर हमारे मेवाडाधिपति बनन पर तुम भी तो महारानी का पद पाओगी। सम्पूण ऐश्वय और वभव भागोगी। वास्तविक जीवन ता वही होगा अभी हम प्रतिबंधित हैं।

वह समय स्वय आएगा। धय रखे स्वामी। काई अविचार मन म न आन दें। प्रीतकु वर न विनम्र हात हुए कहा।

वह समय कब आयगा ? धय की भी सीमा होती ह प्रीत। फिर बापू सा की सगीत नत्य म आसक्ति राजा के प्रति बढती हुई अदूरर्दाशता—है किसी मे साहस कि कोई उनकी भत्सना कर सके। मैंने ता सुना ह किसी शिवागी को राज नतकी क पद पर नियुक्त कर रह हैं बापू सा। मेरा मन शकालु हो रहा है।

इसम शका कैसी ? कला को सदा प्रश्रय दत रह है बापू सा। व निष्कपट हैं। फिर मेवाडाधिपति हान क नाते उ ह किसी भी निणय लन का पूण अधिकार है उस चुनौती नहीं दी जा सकती। भ त्सना शब्द आपक मुख स शाभा नही देता।

क्या शोभा देता है क्या नहीं इसका निर्णय करने का अधिकार तुम्हे किसने दिया है। आक्रोश मे कहकर उदयसिंह बाहर चला गया।

इक्कीस

सभा कक्ष म मंत्रि परिषद की सभा आयोजित है। महाराणा अपने सिंहासन पर आसीन है।

महामात्य और गुरुदव से हमने मत्रणा की है। जैसाकि आपको विदित ही है राजकुमारी रमा सारठ नरेश माडलिक के कैलाशवासी होने के पश्चात् कुम्भलगढ म निवास कर रही है। हमने निर्णय किया ह जावर का प्रदेश उन्हे सौप दें जिससे वे उसके शासन प्रब ध और विकास म स्वय को लगा सकें। इससे न केवल अपने विषाद को भूले रहगी उनकी प्रतिभा का लाभ भी मेदपाट को प्राप्त हागा। दूसरा हमारा निर्णय शिवागी के सम्ब ध म है। वे शिवापिता अद्भुत नर्तकी और सगीतज्ञा हैं। श्री एकलिंग भगवान के मठाधिपति सिद्ध श्री सोम प्रभु की अनुमति स व अब कुम्भलगढ म रहगी। हमने राज नर्तकी पद पर उनकी नियुक्ति की है। देव मंदिरो म नत्य पूजा विशेष पर्वो अनुष्ठाना के अवसर पर नत्य सगीत प्रदशन उनका काय रहेगा। इसस मेदपाट की शोभा म अभिवृद्धि होगी मुझे विश्वास है आप सब हमारे इन निर्णया से सहमत हागे। कुम्भा न विवरण दिया।

सभी ने एक स्वर से कहा— हम सहमत है महाराज। 'शिवागी क निवास की समुचित व्यवस्था महामात्य स्वय करेंगे। कुम्भा स्वामी के मंदिर मे सभा मण्डल मे अगली पूर्णिमा को व प्रथम नत्य प्रस्तुत करेंगी। आप सब आमन्त्रित ह। महाराज ने अपनी बात पूरी की।

जो आज्ञा अन्नदाता ? महामात्य ने शीश झुकाकर निवदन किया।

एक व्यवस्था और भी करनी है —महाराणा न कहा— हमन सूत्रधार मण्डन को अजेय दुग के निर्माण की योजना की क्रियान्विति मन्दिरो के निर्माण सुन्दर मूर्तियो और राजप्रासाद के कक्ष का चित्रित करन की कायकुशलता क लिए पुरस्कृत करन की घोषणा की थी। वे शिल्प मूर्तिकला और चित्रकला क उद्भट विद्वान और तत्सम्ब धा अनेक ग्रन्थों के रचयिता हैं। इस सम्मान समाराह की व्यवस्था तत्काल की जाए महामात्य। मण्डन के अतिरिक्त उनके प्रमुख शिल्पी मूर्तिकार और चित्रकार भी समारोह मे आमन्त्रित है।

जी प्रभु। महामात्य ने पुन कहा।

सिद्ध श्री सोम प्रभु से विदा ले रही है शिवागी। राजकीय रथ और सैनिकों का एक यूथ उसे कुम्भनगढ़ ले जाने के लिए आया है। अनुव्रत उसे छोड़ने जायेगा। गुरुदेव का आदेश है। कल सायंकाल अनुव्रत ने ही शिवागी को बताया था। देवदत्त और अक्टक मिले थे। उन्होंने दुःखद समाचार दिया था—कुण्ठित रुद्रक ने त्रिपुर सुन्दरी मन्दिर और साधना केन्द्र के अधिष्ठाता कुवलयानन्द की छल से हत्या कर दी है और राज दण्ड के भय से अज्ञात स्थान को पलायन कर गया है। सैनिक उसकी खोज में हैं।

दुरात्मा रुद्रक को उसके कुकृत्य का अवश्य दण्ड मिलेगा। उत्तर में कहा था शिवागी ने। कुवलयानन्द की हत्या के समाचार से दुःखी हुई थी शिवागी। कुवलयानन्द उसके गुरजन और सुपुरुष ही थे।

अशान्त शिवागी सिद्ध श्री के निकट गई। प्रणाम किया। फिर कुवलयानन्द की हत्या का दुःखद समाचार उन्हें सुनाया। सुनकर सिद्ध श्री ने शिव शिव शब्द कहे। वे मौन हो गये। आंखें कुछ क्षणों के लिए मूंद ली।

वे जानते थे—रुद्रक अपनी वासना और नीच वृत्ति के कारण ही साधना-च्युत हुआ था। उसकी वासना की अपूर्ति तथा तद् जनित क्रोध एवं उत्तेजना का यह प्रतिफल है। कुवलयानन्द की हत्या का कारण है। आंखें बन्द कर वे भीतर की गहराइयों को देख रहे थे। शिवागी व्याकुल सी बैठी रही।

तुम्हें तुम्हारा व्यतीत दुःखी कर रहा है बेटी वह व्यतीत जो तुम पीछे छोड़ आई हो। मुझे सूचित कर तुमने अपनी उस भावना को मुक्त किया है। किन्तु स्मरण रहे तुम अपने सारे द्वन्द्व विसर्जित कर चुकी हो। पुनः कोई द्वन्द्व तुम्हारी चेतना में प्रविष्ट न हो इसकी चेष्टा करो। निर्द्वन्द्व चेतना से ही तुम्हारा कल्याण सम्भव है।' सिद्ध श्री ने परामर्श दिया।

क्षमा करें गुरुदेव। भविष्य में भी आपका यह परामर्श स्मरण रखूंगी।'

विदा गुरुदेव?' शिवागी ने नमन किया। कल्याणम् भवतु कहकर सिद्ध श्री प्रतीक्षा रत रथ तक उसे पहुंचाने गये।

कैलाशपुरी छूटी जा रही है। छूटा जा रहा है देवालय। सिद्ध श्री पीछे रह गए। रथ के पार्श्व में अब भी एकलिंग मन्दिर का शिखर और ध्वज दंड पर लहराती पताका दृष्टिगोचर हो रही हैं। इनके साथ ही पीछे छूटा जा रहा है पूरा जनपद। किन्तु स्मृतियाँ पीछा ही नहीं छोड़तीं। मनुष्य अपना व्यतीत क्यों सोचता है? क्यों अतीतजीवी है? बीता हुआ क्यों बार बार याद आता है? चाहे वे प्रसंग दुःख ही के प्रसंग क्यों न हों। विचारती है शिवागी।

आसन्न अनुव्रत शिवागी की मनःस्थिति समझ पा रहा है। वह भविष्य के

सम्भावी सुख और आनन्द की प्राप्ति की चिन्ता है अथवा विगत का भावातिरेक। आशा प्रत्याशा का यह कैसा भरवी-चक्र है ? भावनाओ को वश मे रखना क्या जीजी के लिए भी सम्भव नही। और गुरुदेव शिवागी को विदा करत समय आशीर्वाद देकर तुरत अदृश्य हो गए। जैसे कुछ हुआ ही नही। यही गुरुदेव शिवागी के आगमन पर उसके लिए चिन्तित थे। प्राय उसकी कुशल पूछते थे। और आज चलते समय एक शब्द भी नही कहा ?

क्या बात है जीजी किस चिन्ता मे मग्न हो अथवा राजनतकी का पद और उसका सम्मान पाने की युगो की साध पूरी होने मे अति प्रसन्न हो ? अनुव्रत न पूछ ही लिया।

ऐसी कोई बात नही वत्स। यदि मैं चाहती सारे भौतिक सुख दवदासी बनकर भोग सकती थी—किन्तु उस वृत्ति से अनजान नही थी। अत उस जीवन को स्वीकार न कर यही गुरु कुवलयानन्द ने त्रिपुर सुन्दरी मन्दिर म मुझे त्रिपुर सुन्दरी का पद दिया। किन्तु मैं साधना स विरत हुई। त्रिपुर सुन्दरी मुझ अभागी में उतरी ही नही। और अब भगवान शिव की नत्याराधना का कलाशपुरी म अवसर मिला वह भी दुर्भाग्यवश हाथ स चला गया।

किन्तु मेवाडाधिपति महाराणा द्वारा राजनतकी के रूप म आपका चयन कोई शुभ सकेत है। हाँ जीजी महाराज का व्यक्तित्व दुलभ है। वे कलामम‍ज्ञ हैं। उन्होंने आपकी कला की सच्ची परख की है फिर वे अपने मनोरजन के लिए आपको नही बुला रहे है। मनोरजन के लिए मवाडाधिपति के लिए सुन्दरियो की कमी नही है किन्तु उनकी प्रतिष्ठा अन्य प्रकार की है।'

पता नही महाराज को मेरा नत्य उस महाशिवरात्रि उत्सव मे इतना क्यो भा गया कि वे गुरुदेव से मुझे माग बैठे ? मैं सकोच और लज्जावश ठीक से उनकी ओर दृष्टि भी नही उठा सकी। किन्तु उस रात्रि को नत्य प्रदशन करते समय मुझे उनमे एक दिव्यता का आभास अवश्य हुआ। जिसने अनेक युद्धो मे जय को वरण किया हो जो सदा प्रजा का मगल सोचता रहे और उसकी सेवा मे लगा रहे। जो निरन्तर अपनी सम्पत्ति दीन-दुखियो को दान कर उनका दारिद्रय दूर करन मे रत हो। विद्वानो का आदर करे और स्वय कला की साधना भी। वह राजपुरुष किसी राजयोगी से कम नही हो सकता अनु।'

लगता है महाराज आपके प्रति आकृष्ट हुए थे जीजी—नही तो गुरुदेव से यह प्रस्ताव ही क्यो करते ?

किन्तु मैं किसी को आकृष्ट नही करना चाहती थी। मैं महाराज के प्रति आकृष्ट हुई—यह कहना भी अनुचित है। कहाँ मेवाडाधिपति राजा और कहा मैं

मंदिर की देव नर्तकी और गायिका-उपासिका। इतना अवश्य करना चाहूँगी कि अपनी कला द्वारा कहीं उनकी राजकाज की दुश्चिंताएँ मानसिक थकान और श्रम का परिहार कर उनके मन को शांति देने में सक्षम बन सकूं। अन्यथा मेरा कोई क्षुद्र स्वार्थ नहीं है। भगवान शिव मुझे अपने कार्य में सफलता दें उनके प्रति मेरी अनन्य भक्ति और श्रद्धा हो यही मेरी प्रार्थना है। महाराज का मंगल हो यही मेरी कामना है।

आपको सांसारिक आकर्षण स्पर्श भी नहीं कर सकते। फिर इसके अतिरिक्त आप सोचें भी क्या? एक स्त्री होकर ऐसा निष्कलंक जीवन जी लेना साधारण बात नहीं है जीजी। अनुव्रत शिवांगी के मुख की ओर श्रद्धा से देखने लगा।

महामात्य ने महाराणा की आज्ञानुसार शिवांगी के निवास की समुचित व्यवस्था कर दी है। उसे कष्ट न हो इसलिए एक सेवक को नियुक्त कर दिया गया है जो सदा उसका ध्यान रखे। महाराज उस व्यवस्था के प्रति आश्वस्त हैं।

राजकुमारी रमा जावर में राज स्वामी के मंदिर एवं रामकुण्ड का निर्माण कार्य करा रही हैं। कुम्भलगढ़ में कुडेश्वर के निकट उनकी प्रेरणा से ही दामोदर मंदिर का भी निर्माण हो रहा है। धार्मिक अनुष्ठानों अध्यात्म चर्चा तथा काव्य रचना में वे अपने शेष जीवन का अर्थ खोजने में लीन हैं। महाराणा के कारण ही यह सुयोग उन्हें प्राप्त हुआ है। वे उनकी मंगल कामना करती रहती हैं। इस बात का ध्यान रखती हैं कि वे उनकी ओर से कभी दुःखी अनुभव न करें। कोई उत्सव अनुष्ठान अथवा विशिष्ट आयोजन बिना उनकी उपस्थिति में पूर्ण नहीं होता। अपने असामयिक वैधव्य का दुःख भूलने के लिए प्रयत्नशील हैं राजकुमारी रमा। जब मन में निर्मलता आ जाती है शांति और आनन्द की प्राप्ति का सुयोग भी तभी उपस्थित होता है। अपने अपने ढंग से मन की निर्मलता और शान्ति की प्राप्ति में ही साधक लगा रहता है। ऐसे साधक को कुण्ठा का कभी अनुभव नहीं होता।

आज महाराज स्वयं गुरुदेव तिल्हभट्ट के निवास पर आए हैं। बहुत समय बाद ऐसा हुआ है। वे गुरुदेव के सम्मुख बैठे हैं। मुख पर चिंता का भाव स्पष्ट है।

आपको स्मरण होगा गुरुदेव, अपने संकल्प निष्काम बने रहने का मैंने आपसे आशीर्वाद चाहा था। मैंने आजीवन इस ओर ध्यान दिया है। सावधान रहा हूँ कि अहम् न जाये किन्तु आसक्ति का त्याग करना कठिन ही लगता है। बिना आसक्ति के कर्म की सफलता संदिग्ध नहीं बनी रहेगी? महाराज ने जिज्ञासा की।

राजगुरु ने कहा— आसक्ति के भी अनेक प्रकार हैं राजन्। एक आसक्ति भटकाव उत्पन्न करती है। मन को अत्यन्त गतिशील बनाए रखती है। तीव्रता से

हम उन प्रवृत्तियो की ओर उन्मुख होते हैं। हमारा नियन्त्रण हमारे मन पर नहीं रहता। फलस्वरूप विवेक छूट जाता है। दूसरे प्रकार की आसक्ति है—अपना आत्म-विश्वास बनाए रखकर सद्कर्मों म प्रवृत्त रहना। कठिन से कठिन परिस्थिति मे अपना विवेक न खोना। सफलता प्राप्त करने के लिए यह सूत्र समझ लेना आवश्यक है। जहा सारे कर्म प्रभु के निमित्त हो प्रभु को समर्पित हो वहा मैं कर्ता हू वाला अहम् भी पराभूत होगा। पुरुषार्थ का इस अहम् से कोई सम्बन्ध नही रहेगा। पुरुषार्थी असफल कभी नही होता। सारे प्रयत्नो के पश्चात् भी यदि पुरुषार्थ काम न आए सफलता न मिले तो वह प्रभु की इच्छा अथवा भावी का सकेत ही समझना चाहिए पुरुषार्थ की पराजय नही।

भावी का सकेत क्या भाग्यवादी हो जाने की दिशा नही है। महाराज ने पूछा।

नही। भाग्यवादी पुरुषार्थ करेगा ही नही। भावी का अर्थ है समय की सत्ता। काल की अनिवार्यता। काल अथवा समय अपना कार्य करेगा ही। उसकी चिन्ता पुरुषार्थी को नही रहती।' गुरुदेव बोले।

फिर जीवन का नियामक कौन है पुरुषार्थ अथवा समय—जिसे आप काल कह रहे हैं गुरुदेव ?

वास्तविक नियामक तो हमारी आत्मा है हमारा सूक्ष्म शरीर। हमारे कर्मों का नियमन वही करता है। आत्मा की पवित्रता समय की तीव्रता को कम कर देती है। भावी को बदलने की सामर्थ्य उसी मे है। स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाना यही अध्यात्म की साधना है। वही अन्तर्यात्रा है।

बाईस

तुमसे पुन भूल हो गई वत्स। तुम्हे जाकर महाराज के दर्शन कर आने चाहिए थे। महाराज के प्रति यह अवज्ञा का भाव अपमानजनक है। महारानी अपूर्वदेवी ने युवराज उदय से कहा।

उधर युवराज के रूप मे सदा मेरा अपमान होता रहे। मुझे उद्दंड और अनुशासन हीन समझा जाए। राजकाज मे मेरी सम्मति अनावश्यक समझी जाए। इधर आप महाराज के दर्शन करने की बात करती हैं माँ सा ?

आपने बापू सा के आदेश का पालन करना उन्हे सम्मान देना तो तुम्हारा

परम लक्ष्य होना चाहिए। वे तुम्हारे जनक ही नही महाराज भी हैं। मेवाडाधिपति है।

वे मेरे बापू मा हैं। महाराज और मेवाडाधिपति भी हैं यही तो मरे जीवन की सबसे बडी त्रासदी है। रह-रहकर यह विचार मुझे मथता है कि जानबूझ कर मेरी उपेक्षा की जा रही है। मुझे राजसत्ता से पृथक रखने के इस प्रयास म इस षडयन्त्र मे बडी मा सा का भी हाथ है। आप जानती हैं मा सा? अनुज रायमल को कुम्भलगढ से दूर रखने मे उन्ही की मन्त्रणा थी जिससे वे सुरक्षित रह और उचित अवसर पर सिंहासन पर उन्ह आरूढ किया जा सके।

यह तुम्हारा भ्रम है युवराज? शासन का अनुभव प्राप्त कर वत्स रायमल तुम्हारे सिंहासन प्राप्त करने पर तुम्हारे सहायक और विश्वस्त होगे। उसका उचित अवसर आएगा।

वह अवसर कब आएगा माँ सा? कब तक हम उसकी प्रतीक्षा करनी होगी? कब तक हम बापू सा को सहते रह? राजकोष लुटने दे? फिर हमारे लिए आपके लिए राजकुल के लिए शेष क्या रहेगा? राज्य अर्थहीन हुआ तो सेना भी शक्तिहीन होगी फिर वह सुरक्षित कहाँ रह पाएगा?

इस सब का अवसर ईश्वर करे आएगा ही नही कि मेवाड पराधीन हो। फिर जिसे तुम राजकोष लुटाना समझ रहे हो वह वास्तव मे अर्थ का कोई दुरुपयोग नही है। इस सबसे प्रजा मे धर्माचरण की वृद्धि होती है। कला और साहित्य को प्रश्रय और कलाकारो को सरक्षण प्रदान करने से राज्य मे सद् वृत्तिया पनपती हैं। उसकी बौद्धिक प्रगति होती है।

मुझे क्षमा करें माँ सा। एक अनात अकुलीन नर्तकी को लाकर राजकीय आवास मे रखना उसके लिए सेवक की व्यवस्था और महाराज की जब इच्छा हो मिलन की छूट कौनसा धर्माचार है? यह कैसा कला सरक्षण ह? फिर बापू सा का तो वानप्रस्थ म जाने का समय ह। शिवांगी युवा है सुन्दर है उसमे रुचि लेने का अर्थ?'

मैं तुमसे सहमत नही युवराज! महाराज स्वभाव से उदार भावुक तथा सब हितैषी हैं। नारी मात्र के शोषण प्रताडना को वे सह नही पाते। उनके मन मे ऐसी नारी के प्रति सहानुभूति उत्पन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक है। फिर चाहे वह सुप्रिया हो शिवांगी हो अथवा उनकी अपनी पुत्री राजकुमारी रमा हो। शिवांगी शिवार्पिता है। महाराज ने कैलाशपुरी मे अपने प्रथम परिचय मे ही उसके व्यक्तित्व म वैशिष्ट्य देखा है। उसकी कला साधना पर वे मुग्ध हुए हैं। फिर नारी को सरक्षण देना किसी भी क्षत्रिय के लिए धर्मसम्मत है। मुझे अविश्वास का कोई

कारण नही दिखाई देता। फिर महाराज सवशक्तिमान है तो क्या हुआ नीतिवान है करणीय और अकरणीय का अतर जानत है।

आपको क्या पता माँ सा लाग परिहास करत है इस आयु म बापू सा एक सुदर नर्तकी लाए हैं।

तुम्ह अपने बापू सा के प्रति यह कथन शाभा नही देता। यह विकृत मस्तिष्क की ही उपज हो सकती है। कहकर रानी उठ खडी हुई।

ठीक है। एक बार जाऊँगा। बापूसा के दशन अवश्य करूँगा। यदि आपको इससे सुख मिलता हो यही करूँगा। कहत हुए उदय कक्ष से बाहर निकल गया।

सभाकक्ष मे महाराणा कुम्भा सिंहासन पर आसीन थे। महामात्य सेनाधिपति और मत्रि परिषद् के बीच गहन मत्रणा चल रही थी। सभाकक्ष के द्वार मे उदयसिंह ने प्रवेश करना चाहा। प्रहरी न माग रोकते हुए निवेदन किया भीतर जान की किसी को भी अनुमति नही है युवराज। मुझे क्षमा करें।

हमे भी अनुमति नही है? तुम भूलत हो हम मेवाड के युवराज है यहा के भावी राजा। उदय ने दप से कहा।

एक पल रुकें युवराज मै अन्नदाता की अनुमति प्राप्त कर लौटता हूँ। उन्हे पूव सूचना देना परमावश्यक है। प्रहरी न विनयपूवक कहा।

हमारे लिए पूव सूचना की कोई आवश्यकता नही। माग छोडो अनुचर। कहते हुए उदय सभा कक्ष मे प्रवेश कर गया।

उदय के अप्रत्याशित आगमन से सभासद मौन हो गए। एक सन्नाटा सा छा गया।

प्रणाम बापू सा।' उदय ने महाराणा के सम्मुख जाकर शीश झुकाया।

महाराणा की दृष्टि युवराज की ओर उठी। युवराज ने भी उनकी आखो मे देखा। फिर वे आखें झुक गईं। उस दृष्टि मे अप्रसन्नता का भाव दिखाई दिया।

गोपनीय मत्रणा के समय सभाकक्ष मे आने की पूव अनुमति प्राप्त करने की व्यवस्था क्या समाप्त हो गई?' महाराज ने महामात्य से प्रश्न किया।

नही अन्नदाता? इस व्यवस्था का पालन किया जाता है। महामात्य ने विनीत होकर कहा।

द्वारपाल को प्रस्तुत करें।' महाराज ने आदेश दिया।

सभाकक्ष की व्यवस्था से परिचित हो प्रहरी? महाराणा ने प्रणाम करते हुए प्रहरी से कहा।

'जी अन्नदाता।

फिर हमारी पूर्व अनुमति लेने की आवश्यकता युवराज के प्रवेश करते समय क्यों नहीं समझी गई।

क्षमा करें अन्नदाता मैंने युवराज से निवेदन किया था किन्तु उसका अवसर ही मुझे नहीं दिया गया।'

ठीक है प्रहरी। तुम जा सकते हो।

पलभर में महाराणा कुम्भा की त्यौरियाँ चढ़ गई।

महामात्य सेनापति और आमात्य परिषद् के सदस्य आशंकित हुए।

यह सभाकक्ष है युवराज। तुम मेवाड़ के राजा के सम्मुख खड़े हो अपने बापू सा के सम्मुख नहीं। तुम्हें परम्परा और मर्यादा का ध्यान नहीं रहा। अनाधिकार प्रवेश कर तुमने धृष्टता ही नहीं की है गोपनीयता के नियमों का तोड़ने का भी प्रयत्न किया है। यह अपराध है। तथापि प्रथम बार ऐसा हुआ है। अतः हम तुम्हें दण्ड नहीं देंगे। भविष्य में सावधान रहना। अब आने का प्रयोजन कहो। शीघ्र।''

उदयसिंह क्षणभर के लिए स्तंभित रह गया। सम्पूर्ण मंत्रि परिषद् के सामने सभाकक्ष में यह प्रताड़ना अपमानजनक लगी। 'कोई विशेष प्रयोजन नहीं है महाराज।'' उदयसिंह ने भावोद्रेक को यथासंभव दबाते हुए कहा।

तो फिर राजप्रासाद में भेंट करो। महाराणा ने दृढ़ता से आदेश दिया और महामात्य की ओर देखा। मन में उत्तेजित युवराज उदय सभाकक्ष से बाहर आ गया। अश्व पर आरूढ़ होकर सीधा अपने भवन में पहुँचा। पत्नी प्रीतकुंवर ने पति के क्रोध से रक्तवर्णीय होते हुए मुख की ओर देखा।

क्या बात है युवराज स्वस्थ तो हैं स्वामी? प्रीतकुंवर ने चिंतित हो पूछा।

मंत्रि परिषद् के सम्मुख महाराज द्वारा मुझे अपमानित किया गया है प्रीत। युवराज बनाकर हमारी यह अवमानना। राजशक्ति का यह आतंक अब असह्य हो चला है। बापू सा अब मेरे लिए वंदनीय नहीं रहे। यह अधिकार उन्होंने स्वयं खो दिया। सावधान मैं युवराज हूँ। मेवाड़ का भावी मेवाड़ाधिपति। कोई मुझे दोष न दे। शांत हो स्वामी प्रीतकुंवर बोली।

महाराज राजमाता सौभाग्य देवी के कक्ष में पधारे हैं।

मैं प्रणाम करता हूँ राजमाता। क्षमा करना माता अनेक दिनों से आपके दर्शन नहीं कर पाया।' कुम्भा ने प्रशांत भाव से कहा।

क्षमा प्रार्थी होने की कोई आवश्यकता नहीं वत्स। राज्य शासन का दायित्व और उसकी समस्याओं से मैं परिचित हूँ। किन्तु आश्वस्त हूँ कि कोई समस्या ऐसी

नही जिसका तुम समाधान न खोज सका । मुझे पूरा सताप है राज्यारोहण के समय तुमने जो प्रतिज्ञाएँ की थी वे पूरा हुई ।'

तथापि मेरा मन अशात है माता एक नए प्रकार की चिता । मुझे लगता है मैं अपने ही आत्मीयजन को सुखी नही कर पाया । '

'मेरा हृदय स्वीकार नही करता वत्स कि तुम अपने ही आत्मीय जन को सुखी नही कर पाए । मन की अशाति का कारण भी समझ म नही आया । शौय और पराक्रम धैय और उदारता कत्तव्यपालन और चरित्र की दृढता और निर्मोल्य सभी गुणो से सम्पन्न आदश पुरुष के मन मे सदा शाति निवास करती है । अखड शाति । '

किन्तु कोई शत्रुता का भाव रखने लगे दोष निकालने में रत हो जाए इस स्थिति मे चिन्ता स्वाभाविक है माता । '

यदि कोई शत्रुता रखता है उस ओर से सावधान रहो दोष देखने और शत्रुता का भाव रखने का कारण भी खोजो । साथ साथ तुम उससे द्वेष न करो ।" राजमाता ने कहा । शत्रुता का प्रतिकार है मैत्री अथवा मृदुता उसका प्रयोग करो ।

आशीर्वाद दीजिए माता मैं आपके कथन के अनुसार आचरण कर सकूँ । '

महाराणा उठकर चलने को उद्यत हुए । वत्स इतने से समय के लिए आये थे । राजमाता ने उपालम्भ दे कहा ।

फिर किसी समय आऊँगा माता श्री । महाराणा विदा होकर चल दिए ।

अपने भवन म लौटने से पूर्व महाराणा महारानी अपूर्वदेवी के कक्ष मे पहुँचे । रानी ने अभ्यचना की । मालिनी ने शीतल सुगधित जल महाराज के लिए प्रस्तुत किया ।

आपने युवराज को क्षमा नही किया महाराज ? ' रानी ने प्रश्न किया ।

यह तुमने कैसे जाना ?

उदय आपके दशन करने सभाकक्ष म गया था आपने अपमानित कर उसे लौटा दिया । क्षमा कीजिए स्वामी—युवारक्त इससे और उत्तेजित होता है । '

तुम हम पर अभियोग लगा रही हो प्रिये ' कदाचित पूरी स्थिति जान लेती तो ऐसा नही कहती । युवारक्त सही किन्तु हमारा ही रक्त है यह तुम भूल गई । उत्तेजित हम भी हो सकते हैं यदि मर्यादा भग की जाए । महाराणा ने शात स्वर मे कहा ।

क्या यह सत्य नही है स्वामी उदय को सभाकक्ष से लौटा दिया गया । वह भी पूरी मन्त्रि परिषद् के सम्मुख । '

यदि उनकी उपस्थिति वाछनीय नही है तो लाटना ही उचित है।"

किन्तु अबाध और अपरिपक्वता के कारण अथवा अनुभवहीनता स यदि युवराज और मवाडाधिपति महाराज के बीच भ्राति उत्पन्न हा जाए उसका निराकरण प्रेम द्वारा ही ममव हाता ह—नियमा की यान्त्रिक प्रक्रिया स सम्भव नहीं होता। अपूवदवी न सानुराध कहा।

'हम एसा नही समभत फिर युवराज अब अबाध नही रह। अपरिपक्व बन रहना अनुभव न कर पाना उनकी अपनी सीमाएँ है। नियमो का पालन यान्त्रिकता नही है रानी ! अनुशासन ह। भविष्य की सफलता का प्रथम सोपान।'

कि तु कलह मे किसी समस्या का समाधान नही हाता महाराज। आप उदार हैं पिता हैं कवल मेवाडाधिपति ही नही। अत क्षमादान दें स्वामी।' अपूव देवी द्रवित हो उठी।

तेईस

उदयसिंह के कक्ष म गुप्त मन्त्रणा चल रही है। विश्वस्त प्रहरी बाहर पहरा दे रहे ह। काई भीतर न जाने पाय।

हम अपने आपका अब भाग्य पर नही छाड सकत। इसक अतिरिक्त अ य और काई माग ह ही नही वीरसिंह ! उदयसिंह उत्तेजित हो चला था। काका सा का सकेत ठीक ही था। बापूसा राजसिंहासन को या ही नहीं छाडेंग। उनम राज्य लिप्सा है।

युवराज क साथ न इतना सै य दल है और न सामन्त जा सघष म उनका साथ दें। अत विद्रोह कर राजसिंहासन पान का कोई अवसर ही नहा है। यदि सैन्य बल न हो ता युक्ति से ही काम निकालना होगा' —वीरसिंह न कहा।

अब एक ही उपाय शेष है। महाराज का समाप्त कर दना। राजसत्ता को पाने मे जो बाधा हो उसे हटा दना। कटक निकालने के लिए कटक ही चाहिए। बहुत जी चुके महाराज। बहुत विलास और वभव भोग लिया।'

युवराज।' आश्चर्य से वीरसिंह ने कहा।

हाँ वीरसिंह। कोई ऐसा है जो इस काय को कर सके। हम उसे सनापति का पद देंगे धन देंग।

नहीं युवराज महाराज असाधारण पुरुष हैं। इस कार्य के लिए अपार साहस चाहिए। साहस और दृढ़ता। फिर महाराज की लोकप्रियता के कारण किसी को विश्वास म लेना असम्भव ही नहीं प्राणों का सकट उत्पन्न कर सकता है।

ठीक है तुम जाओ। हम विचार करन गे। उदय न कहा। वीरसिंह कक्ष के बाहर हो गया।

हम हम स्वय अपना माग निष्कटक करेंगे। महाराज की दृष्टि बडी बेधक है। सम्मुख से जाना उनकी ओर दृष्टिपात कर कुछ करना सम्भव ही नहीं। फिर बल और आत्म-शक्तिया। नहीं नहीं। प्राण ही गँवाने पड सकते हैं। वह फिर राज्य को बचाना ही होगा। अराजकता से कहीं अच्छा है मूल कारण को समाप्त कर देना। इधर महाराज की मृत्यु उधर हमारे मेवाडाधिपति बन जाने की घोषणा किन्तु कितना अशुभ होगा राज्य के लिए राजकुल के लिए व्यथ की भावुकता का कोई अथ नहीं। तुम्हारे लिए तो शुभ ही होगा। महाराज की मृत्यु अवश्यभावी है। फिर इसमे अधम कैसा उदय? उठो आगे बढो अपनी योजना पूरी करो। अब विलम्ब नहीं। विलम्ब घातक हो सकता है। सोचता रहा उदयसिंह। आधी रात बीत चुकी थी।

सदा की तरह ब्रह्म उपासना म लीन हैं महाराज। किन्तु एकाग्रता नहीं आ रही है। प्रतिदिन मिलने वाले आनन्द की अनुभूति होती ही नहीं। जैसे तसे मन को रोके हुए हैं कुम्भा। अन्तिम प्रयत्न कर रहे हैं वे। किन्तु वह भी व्यथ हुआ जा रहा है।

पोष कृष्ण प्रतिपदा है। मृगशिरा नक्षत्र। कुम्भ स्वामी के मन्दिर म विशेष आयोजन है। नृत्य पूजा सगीत और कीतन। विष्णु सहस्रनाम का समवेत पाठ।

महाराज आसन से उठ खडे हुए। उन्हें स्मरण हो आया। शिवागी का वचन लिया है। वे स्वय देव मन्दिर म पधारेंगे। कदाचित् प्रथम बार यह अनुरोध उनसे किया गया था। वे उस अनुरोध को अवश्य मान लेंगे।

कदाचित प्रथम बार ही पिछली साझ को वे अकेले अश्वारूढ बिना किसी अगरक्षक के राजप्रासाद के निकट शिवागी के निवास के सामने रुक गये थे। अश्व की पदचाप स ध्यान मग्न होने पर शिवागी ने द्वार खोला था। महाराज को अप्रत्याशित रूप म अकने अपने द्वार के सम्मुख अश्वारूढ पाकर अवाक रह गई थी। नमन करना भी भूल गई थी।

महाराज आप?

हाँ शिवागी हम। तुम्हें हमने विस्मत मे डाल दिया न।

विस्मय से अधिक आनन्द म स्वामी। किन्तु इस प्रकार बिना अंगरक्षकों के आना-जाना सुरक्षित नहीं है महाराज।

रक्षा करने वाला हमारे साथ ही है। हमारे ही भीतर कहो। एकात्मक है। अभिन्न है।'

सो तो है महाराज। अश्व से उतरेंगे नहीं? आदेश भेज देते तो मैं स्वयं सेवा म उपस्थित होकर अपने को धन्य करती। आपने व्यर्थ ही कष्ट किया।'

महाराणा अश्व से उतर पड़े।

कल पौष कृष्णा प्रतिपदा है–कुम्भ स्वामी देवगृह म संगीत नृत्य पूजा और विष्णु सहस्रनाम संकीर्तन है और ' शिवागी कहते कहते रुक गई।

और क्या पूछा ? महाराज ने

मेरा जन्म-दिन महाराज।

यह तो बहुत सुन्दर बात है शिवागी ! हमारे देवालय म आने के लिए इससे अच्छा अवसर कौनसा होगा। तुम अपना जन्म दिन समारोहपूर्वक मनाती हो ?

नहीं महाराज। जन्म दिन का महत्त्व मेरे लिए क्या हो सकता है ? मैं शिवार्पिता हूँ। किन्तु आध्यात्म की साधना वह भी नृत्योपासना द्वारा मेरा प्रतिपाद्य है। प्रतिदिन ही समारोह सा चलता रहता है स्वामी।

महाराज ने अश्व की लगाम छोड़ दी। कितना एकान्त ? कितनी शान्ति ? तुम्हारे निवास के सम्मुख यह शिरीष वृक्षों का कुञ्ज। महामात्य ने तुम्हारे लिए उत्तम व्यवस्था की है। और यह तुलसी वृन्दा स्वास्तिक चित्रित और यह दीप। अरहत स्वच्छ स्थान। कौन करता है यह सब ? कहते कहते महाराज प्रस्तर शिला पर बैठ गये।

मैं करती हूँ महाराज।

और भृत्य ? उसकी व्यवस्था की थी महामात्य ने ?

है महाराज। किन्तु मैं उन्हें कष्ट नहीं देती। वे अब वृद्ध हो चुके हैं। किन्तु भद्र हैं महाराज।

ओह ? तो वे निर्दोष हैं। तुम अत्यन्त उदार हो शिवागी।

तो हम अब चलेंगे। महाराज उठ खड़े हुए।

एक क्षण रुकें महाराज।' कहकर शिवागी तुरन्त भीतर गई और श्वेत अपराजिता के पुष्प अंजली म भर कर लौट आई। किंचित हँसकर वह पुष्पांजलि महाराज के चरणों म रख दी।

यह क्या ?

पूजन के पुष्प महाराज।

किन्तु हमारे चरणो म ?

वह आत्म-चैतन्य आपमे भी बिराज रहा ह महाराज ! हम सब के शरीरो मे वही है। उसका बोध नही हा पाता। यही सब का सकट है। द्वैत का भ्रम।'

तुम सत्य ही कहती हा शिवागी। तुम दीघतपा हो। सिद्ध श्री ने ठीक ही तुम्हारा हमे परिचय दिया था।'

महाराज पुन अश्व पर बठ गय। शिवागी का नमन स्वीकारते वे आखो स ओझल हा गये। शिवागी का लगा स्वप्न सा जसे समाप्त हुआ। रात्रि प्रगाढ हाने लगी।

स्वप्न। हां स्वप्न ही तो था। मेवाडाधिपति स्वय उसके द्वार पर आय। प्रथम परिचय म ही वह अभिभूत हो गई थी। श्रद्धा प्रेम जिज्ञासा और न जाने कैसा पूज्य भाव उनके प्रति जागा था। वे ही स्वय चलकर उसके द्वार आए थे। विधिपूवक वह उन्ह अघ्य नही दे सकी। न पूजा अचना कर पाई। फिर किस अधिकार से उसन महाराज को पोष कृष्णा प्रतिपदा के नत्य सकीतन के लिए आमन्त्रित कर दिया ? किस अधिकार स देव पूजा के मन्त्रित पुष्प विहसते हुए उनके चरणो मे अर्पित किय ? अपने जन्म दिन की बात कस कह दी ? आत्म विभोर शिवागी बीते क्षणो की स्मृतियो मे डूबी जा रही है। वह अपन स तक नही करेगी।

क्या महाराज अनुरोध मानेंगे ? क्या कल क उत्सव म पुन उनके दशन हागे ?

शिवागी न प्रभु के चरणो म मन ही मन प्रणाम किया। उसकी न जाने कब आख लग गई।

महाराज की जय हो। प्रतिहारी ने शीश झुकाकर निवदन किया। राजगुरु पधार रहे है।'

महाराणा कुम्भा तुरन्त रत्नजटित काष्ठ पीठ स उठ खड हुए। गुरुदेव की अभ्यचना मे कक्ष के द्वार तक तुरत आये। "प्रणाम गुरुदेव ' नमन किया।

कल्याणम् अस्तु। भगवान शिव की कृपा आपकी चिर सगिनी रह राजन्।

सुना था इधर अत्य त चिन्तित रहे है महाराज। राजमाता कह रही थी कोई विचार आपको सतत मथ रहा है।

विचार ही ह। वस्तुत युवराज अत्यन्त महत्त्वाकाक्षी हो गए हैं। उन्ह

हमारी काय पद्धति रुचती नही और हम उनकी अनुशासनहीनता और उद्दण्डता नही सुहाती गुरुदेव ' व हमारा रक्त हैं म यथा इसका परिणाम एक ही हाता गुरुदेव । '

मैं जानता हूँ महाराज आपने सयम और उदारता बरती है । महारानी ने स्वय मुझे विवरण दिया था । वे इस स्थिति से आहत हैं । एक ओर पुत्र के ममत्व से ग्रस्त थी दूसरी ओर भविष्य की कल्पना से विचलित हो जाती हैं । पिता पुत्र का मत मुटाव सारे राजकुल क दु ख का कारण है । ' राजगुरु तिलहभट्ट न विनयपूवक कहा— एक बार युवराज से विचार विनिमय करना आवश्यक है महाराज '

नही गुरुदेव । चचा का अब कोई अथ नही । जिसने हमारी अवमानना और अवज्ञा का सकल्प ही ल लिया हा उसस विचार विनिमय ? असम्भव है गुरुदेव आज हमे क्षमा करें । यह हमारी पराजय होगी हमारी मर्यादा के प्रतिकूल ।'

अपनो स जय पराजय कैसी महाराज । विचारशील पुरुष पर्याप्त साचविचार के पश्चात् ही निणय देत है । मरा अनुरोध है आप युवराज को एक अवसर और प्रदान करें । '

नही गुरुदेव । व उसके अधिकारी नही रह । स्वय रानी अपूवदवी ने प्रयत्न किया था वे असफल रही । उनका विवक समाप्त हो चुका है ।

इसका अथ महाराज ?

राज धम का पालन । नीतिसम्मत आचरण । हम वही करगे । गुरुदेव ने महाराज का नमन किया और विदा ली ।

बापूसा ने आज सीमा का ही अतिक्रमण कर दिया । महाराज न राजमर्यादा और अपनी प्रतिष्ठा दाना का ही तिलाजलि द दी प्रीत ? उदय पर्याप्त उत्तेजित दीख पडा ।

यह कैसे स्वामी ? प्रीतकु वर ने चिंतित होकर पूछा ।

कल रात्रि उस नतकी के निवास पर अकल अश्व पर गए थे महाराज । अगरक्षको को भी साथ नही लिया ।

आपने स्वय देखा ? '

नही ।

फिर इसका प्रमाण ?

वीरसिंह न अपनी आखो स यह दृश्य देखा । उस नतकी ने महाराज के चरणो म पुष्प अर्पित किए ।

किन्तु व श्रद्धा सुमन हा सकत हैं प्रणय पुष्प तो नही । पूजा और प्रणय

म अन्तर है लौकिक प्रेम म। आत्मा और देह म अन्तर होता है। इसे आत्मा के धम से देखिए स्वामी शरीर धम की दृष्टि से नही।'

पत्नी की बात सुनकर उदयसिंह ने अट्टहास किया। सदेह का दानव उसके भीतर प्रबल हो उठा। यह निरा पाखड है प्रीत देह आत्मा कुछ नही। महाराज का यह कृत्य न देश हित मे है न राजकुल के हित मे।' कहते कहते उदय का मुख विकृत होता चला गया। उसकी आखें अधिक बडी होती चली गई। क्रोध की उत्तेजना म उसके शरीर मे कम्पन सा आ गया।

यह आप क्या कह रहे हैं स्वामी ? गुरुजनो क प्रति ऐसा सोचना भीषण पाप है। अपराध तो है ही।' बापूसा के प्रति ऐसे अपशब्द– छी -छी ।

पाप और पुण्य का निर्णय करन का तुम्हे अधिकार नही है प्रीत। किसी ने आज तक हमे इस प्रकार कहन का साहस नही किया।

मैं उन किसी की परिभाषा मे नही आती स्वामी। मैं आपकी पत्नी हूँ राज-परिवार की पुत्र वधु। भावी राज महिषी।

उसके सवथा अयोग्य। कहकर उदय कक्ष क बाहर निकल गया।

चौबीस

विचारो मे खोए हुए हैं महाराणा कुम्भा। पिछल दिवस और रात्रि मे विचार ही विचार। विचारो का जसे ज्वार आ गया है। कभी आवेग, कभी उत्तेजना, कभी करुणा और कभी ममत्व। कैसी कसी अनुभूतियाँ ? जीवन के विविध सदभ।

माता श्री कहती हैं—यदि कोई शत्रुता रखे उस ओर से सावधान रहो। शत्रुता न रखने का भाव खोजो। तुम उससे द्वेष न करो। शत्रुता की प्रतिपक्षी है मैत्री। किन्तु समत्व के बिना मैत्री भाव सम्भव ही कहा है ?

महारानी अपूवदेवी ने कहा था—पिता पुत्र के बीच भ्रान्ति उत्पन्न हो जाए तो उसका निराकरण प्रेम द्वारा ही सम्भव है। नियमो की यान्त्रिक प्रक्रिया से सम्भव नही। किन्तु यह दोहरा मानदण्ड स्वीकाय है क्या ? और गुरुदेव ? उनका कथन है—यदि जीवन का नियामक वे आत्मा को मानते हैं। मनुष्य का सूक्ष्म शरीर। मनुष्य के कर्मों का नियमन वही करता है। किन्तु मनुष्य कुकृत्य क्यो करता है ? आत्मा के कौन से रूप मे प्रेरित होकर मनुष्य मनुष्य नही रह पाता। आत्मा और विवेक दोना की सत्ताएँ पृथक हैं क्या ? और शिवागी के अनुसार वह आत्मरूप

चैतन्य हम म भी विराजमान है। हम मब के शरीरो म वही है। फिर यह कैसा विराधाभास है ? यदि प्रेम स्पृहणीय है सहज ग्रान द की उपलब्धि करान वाला तब मनुष्य प्रम क स्थान पर घृणा का ग्राश्रय क्यो लन लगता है ? केवल अपना क्षुद्र स्वाथ बुरा है पतन का कारण है। यह जानकर भी वह स्वाथ म रत है। भल और बुरे का ज्ञान प्राप्त करने के उपरान्त भी उसका रूपान्तरण क्यो नही होता ? इन स्थितियो मे उबरने के विकल्प कौनस हैं ? समाधान खोजने की क्षमता मनुष्य म है। तथापि वह उसे न खोजकर क्या भ्रान्ति म जीना चाहता है ? शास्त्रों का ज्ञाता होन पर भी वह ग्र याय और ग्रधम क माग का ग्रनुसरण क्या करता है ?

महाराज की जय हा। रथ तयार ह ग्रन्नदाता। प्रतिहारी न सूचना दी। महाराणा को स्मरण हा ग्राया—कु भ स्वामी क मन्दिर म सायकाल की पूजा ग्रचना म जान की उ होन ग्रामात्य स इच्छा व्यक्त की थी। इसीलिए तो व ग्रासन से उठ खडे हुए थे।

महारानी को हमारे प्रस्थान की सूचना दे दी जाए" चलत समय परिचारिका मे उ होन कहा।

जो ग्राज्ञा। मालिनी ने नमन किया। क्षणभर खडी रही।

क्या है मालिनी ? महाराज न प्रश्न किया।

स्वामिनी ने शीघ्र पधारने का ग्रनुरोध किया है महाराज ' वे प्रतीक्षा करेंगी।

हम प्रय न करगे।' महाराज बाल। व कक्ष से बाहर ग्राए। रथ म ग्रारूढ हुए। रथ चल पडा। साथ साथ ग्रश्वारूढ दा ग्रग रक्षक। न जाने कसे महाराज को स्मरण हो ग्राया कल इसी समय वे ग्रकेले ग्रश्व पर ग्रारूढ घूमत घूमत शिवागी के निवास तक पहुँच गए थे और बिना ग्रगरक्षको क इस प्रकार ग्रान पर ग्रापत्ति की थी—उत्तर मे महाराज ही न कहा था– रक्षा करन वाला उनके साथ है। उनके भीतर कही। एकाम और ग्रभिन्न। किसी ग्रात्म विश्वास का परिचय व तब देना चाहते थे ? ग्रथवा वह किसी पौरुष क दप का परिणाम था ? पुरुषोचित ग्रहकार ? और शिवागी की यह चि ता ? कसी ग्रात्मीयता ? कौनसा ममत्व ? कदाचित् ग्रपनो को ग्रपनो के लिए चिन्ता ग्र यथा नही होती। हा ही नही सकती।

कुम्भ स्वामी का मन्दिर ग्रा गया। रथ रुका। महाराज उतर पड। राज गुरु ग्रामात्य और पुजारी का प्रतीक्षा मे महाराज न दखा। महाराज को सादर गभ मडप मे ले जाया गया उ होन विधिवत पूजा की और सभा मडप मे ग्रा विराज। शिवागी न उ ह लक्ष्य किया। ग्रानन्दित हा उठी शिवागी। विष्णु सहस्रनाम का समवत पाठ समाप्त हुग्रा।

ॐ नमो भगवत वासुदेवाय ! का सामूहिक स्वर उठा, फिर गूंज उठा महाराणा कुम्भा का जयघोष।

' महाराज की जय हो। के साथ ही राजगुरु तिल्हमट्ट ने पूजा का थाल और आरती सम्मुख की। आरती ग्रहण कर महाराज ने नमन किया। महाराज के लिए स्वस्तिवाचन कर उनके मस्तक पर विजय तिलक अंकित कर राजगुरु अपने आसन पर बैठ गए। प्रसन्नवदना शिवागी ने प्रथम मन्दिर की प्रतिमा और फिर कुम्भा को प्रणाम किया। वाद्य एक साथ बज उठे। उनके साथ ही नूपुरों की मधुर ध्वनि उठी। शिवागी ने नृत्य आरम्भ किया। मुक्त भाव से नृत्य में तीक्ष्णता आई। उत्साह और भावावेग एक साथ मुखर होते चले गए। पुन महाराज को शिवागी के नृत्याभिनय में मनोहारी छटा के दर्शन होने लगे। एक आनन्दमयी प्रेमानुभूति। कृष्ण की आल्हादिनी शक्ति के राधा स्वरूप को मूर्त करती हुई मनोरम भंगिमा। पूजन के साथ भक्ति सगुण ब्रह्म की उपासना का पूर्ण समर्पण और आत्म निवेदन। फिर कृष्ण और राधा का आत्मबद्ध आलिंगन। आत्मा और परमतत्त्व की एकात्मता। उस नृत्य का आकर्षण बढ़ता ही चला गया। प्रेक्षक रस गंगा में डूबने लगे। एक विशिष्ट अनुभव सा हुआ। नृत्य समाप्त हुआ। साधु साधु का समवेत स्वर उठा। महाराणा को अद्भुत लगी वह सध्या।

महाराज को प्रणाम कर विदा ले रहे हैं प्रेक्षक। राजगुरु आमात्य। और वे महाराज के उठने की प्रतीक्षा में हैं। शिवागी पुष्पों से अंजली भर महाराज के चरणों में फिर रख रही है। एक बार पुन नमन कर रही है। सस्मित प्रति नमन कर रहे हैं महाराज। उनकी दृष्टि में प्रशंसा का भाव है। उपकृत होने की कृतज्ञता। भावाभिव्यक्ति की मौन अभिव्यक्ति दे रही है शिवागी। आमात्य के आदेश से सभा मंडप रिक्त हो गया। अपने अपने निवास को लौट रहे हैं लोग। शिवागी भी लौट रही है।

पधारें महाराज ' विलम्ब हो रहा है।' कह रहे हैं राजगुरु तिल्हमट्ट।

आप अब प्रस्थान करें गुरुदेव। हमारा रथ रुका रहेगा। हम एकांत सेवन करना चाहते हैं। अंग रक्षक लौट जाएँ।

जो आज्ञा महाराज ' किन्तु इसका कारण ?

कारण केवल आत्म शांति। आप सब चिंता न करें। हम यथाशीघ्र रथ की ओर पहुँचते हैं। निकटस्थ सरोवर की सीढ़ियों पर आ विराजे हैं महाराज।

यही उचित समय है बीरसिंह ' फिर ऐसा समय नहीं मिलेगा। अनुकूल परिस्थिति विद्यमान है। तुम्हें मैं सेनानायक का पद दूंगा। राज सिंहासन पर बैठते ही मेरा प्रथम कार्य यही होगा। साहस रखना। यह धीमा स्वर उदयसिंह का है।

मरी भविष्यवाणी है युवराज ! आपका राज्याभिषेक आसन्न है। भावी सम्राट की आज्ञा का पालन मेरा प्रथम कर्तव्य है।

वह तो होगा ही। मेवाड़ के राज सिंहासन का एकमात्र अधिकारी मैं हूँ। उस क्षण की प्रतीक्षा कबसे कर रहा हूँ। अच्छा अब शीघ्रता करें। मन्दिर के पीछे और सरोवर के दक्षिण म हमारे सैनिक तत्पर रहने चाहिए।'

तत्पर हैं युवराज।'

हमें दो खड्ग वीरसिंह !

जी युवराज ?

अनीति के आगे आत्मसमर्पण करना हम स्वीकार नहीं। राज-मर्यादा की रक्षा प्रजा की आजीवन सेवा और मातृभूमि की सुरक्षा का हमने व्रत लिया है। इससे विमुख होने का अर्थ है कापुरुष का जीवन जीना होगा। चुनौती को स्वीकारना हमारा स्वभाव है। सोच रहे है महाराणा कुम्भा। मन ही मन प्रार्थना म रत हैं। शक्ति प्रदान करे भगवान श्री एकलिंग।

सरोवर के निकट उद्यान म पेड़ो की छाया दीख पड रही है। पक्षियों का कलरव थम चुका है। सरोवर मे खिले कमल झुटपुटे मे नील जल की सतह से ऊपर दृष्टिगत हो रहे हैं। जल मे रहकर भी उससे विलग। पश्चिम म सान्ध्य तारा उग आया है। पौष कृष्ण प्रतिपदा का चन्द्रमा कुम्भ स्वामी के मन्दिर के शिखर पर आ पहुँचा है। सारे दायित्वो स मुक्त होकर कब आपकी शरण मिलेगी ? कब वह परम सौभाग्य का क्षण आएगा ? कब ? ममवांशो जीवलोके जीवभूत सनातन। मैं ही हूँ आपका सनातन अंश। योग क्षेम्य वहाम्यहम्' अपना वचन पूरा करो प्रभु। महाराज के नेत्र बन्द हैं। विचारो का द्वन्द्व समाप्त सा हो रहा है। नि शेषम्। मनोरथ पूरे हुए।

समाधिस्थ मे हैं महाराज। दो छाया आकृतियां नि शब्द उनके निकट आती जा रही हैं। अप्रत्याशित अकल्पनीय घटित हो रहा है। पीछे से खड्ग का भीषण प्रहार। ॐ का दीर्घ किन्तु क्रमश मन्द होता स्वर। फिर परम शान्ति। लभन्ते ब्रह्म निर्वाणम् ऋषय क्षीण कल्मषा। सारे संशयो का छेदन हो चुका। मयि सर्वम् हृदय प्रोत सूत्रे मणिगणा इव। महाराज की चेतना आत्म रूप परम चैतन्य म लीन हो गई। पड़ा है निस्पद शरीर। आज के सूर्यास्त के साथ ही मेवाड के आकाश में प्रदीप्यमान एक और सूर्य अस्त हो गया।

कुम्भलगढ के राजप्रासाद पर अशुभ की छाया घनी हो रही थी। किसी शाप से ग्रस्त पाप कर्मों से प्रसूत। राजप्रासाद अब किसी सघन अवसाद म डूब गया है। मेवाडाधिपति की छल स की हुई अमानुषिक हत्या। एक ओर

कलक। साढे तीन शतको पूव एसा ही हुआ था। इतिहास की पुनरावृत्ति उसका स्वभाव है।

शिवागी का कक्ष।

महाराज की हत्या से अत्य त दु खी है शिवागी। आपन तो मुझे महाराज को सौपा था गुरुदेव ? कैलाशपुरी छाड कर कुम्भलगढ। महाराज के सरक्षण मे। महाराज से भेंट उनसे वार्तालाप उनकी प्रशसा और कृपा। कैसा अनुभव था ? एक विचित्र सी स्मृति। स्मृति जा विह्वल कर देती ह। असहनीय हो उठती ह। सगीत और नत्य पजा म क्ल साय ही जिनका अस्तित्व विद्यमान था। जिनका जयघोष सभा मण्डप मे गू ज रहा था। न जाने किस श्रद्धा से जिनके चरणो म मैंने पुष्पाजलि के फूल अर्पित किए थ वह देव तुल्य पुरुष इस जगत मे आज नही है। वह जा विजेता था जिसने अपार यश अर्जित किया अपनी प्रजा की सवा मे स्वय का अर्पित किया कला और साहित्य की साधना की कलाविशारदो विद्वतजनो कवियो का मान दिया राजाधिराज, वैभव और एश्वय का अधिपति। कि तु आज केवल स्मृति शेप। सब कुछ यही छूट गया। राजप्रासाद गज अश्व स्वण, रत्नहार माता रानिया पुत्र पुत्र वधुए दास दासिया अनुचर। क्षण भर म सबस सम्ब घ विच्छेद। क्या यही मनुष्य की अन्तिम परिणति है ? यह कैसा सुख जिसका परिणाम दु खमय हो ? दु ख जो विचलित करता है। आत्मीय जन को रुदन मी और प्रेरित करता है। जिस पर किसी व्यक्ति की ही नही समष्टि की नियति अवलम्बित थी वह स्वय कैसा निरावलम्ब और असहाय। वह कौनसा सुख है जिसकी परिणति सुखद होती है ? इन दु खो का मूल कारण क्या है ? यही वह जीवन है जिसे मनुष्य जीता है। कि तु मृत्यु ? उसे कसे जिया जा सकता है ? विषाद से परे ?

मैं तुम्हारा दु ख जानता हूँ बेटी ? पूछ रह हैं वृद्ध श्रवण शिवागी के अभिभावक। हाँ दादा।

चत्यालय मे जैनाचाय साम सु दर सूरी पधारे है। साधु साध्वी श्रावक और श्राविकाओ का दल साथ विहार कर रहा है। उनके वचन सुनकर मन को तुष्टि और शान्ति मिलती है। तुम सुनने चलोगी ?

अवश्य दादाजी। ' कदाचित मन का भार हल्का हो सके। विषाद विसजन हो। अपने प्रश्नो का समाधान पा सक ।'

श्रवण के साथ चैत्यालय पहुँच गई है शिवागी। पक्तिबद्ध श्रावक श्राविकाएँ स्त्री पुरुष शातचित्त बैठे हैं। आचाय सोम सु दर सूरी का प्रवचन चल रहा है। भौतिक उपलब्धिया मनुष्य को पूणता नही दे पाती। सम्पन्नता के वैभव के उच्चतम शिखर पर पहुँचकर भी उसे अपूणता का अनुभव होता है। तृष्णा मिटती ही नही।

वपाय बने रहते हैं। इन जागतिक द्वन्द्वो से परे वह कौनसी चेतना है जिसकी भाव-भूमि मे पहुँचकर निद्व द्व हुआ जा सके ? जो पूणता दे सके। सुख और दु ख दोनो का ही लोप हा जाए। जिससे और अधिक पान की लालसा और अतीत की पीडा का रेचन सम्भव हो। आत्मा के मा यम स हम स्वय को जानें जिससे उस चेतना की सृष्टि हो सके। आत्मा से आत्मा को जानना ही दिशा है। पापो का प्रति-क्रमण।

मैं उस दिशा को जानूँगी। पापो का प्रतिक्रमण करूँगी। अतीत का रेचन। त्रिपुर सु दरी मन्दिर म स्वामी कुवलयान द ने भी ता कहा था दीघतपा बनना होगा। मैं बनू गी दीघतपा। आचाय के चरणो मे नत है शिवागी। आचाय मागलिक उच्चरित कर रहे हैं—

अरिह ता शरणम् पवज्जामि।
सिद्धा शरणम् पवज्जामि।
साहू शरणम् पवज्जामि।
केवली धम्मम् शरण पवज्जामि।

शिवागी के नेत्रो मे जल भर आया है। अन्दर का विषाद जैसे उन अश्रुओ मे प्रवहमान हो चला है प्रवज्या ग्रहण करेगी शिवागी।
